© कमला सांकृत्यायन

राजपाल एण्ड सन्ज़ मे पहली बार प्रकाशित
दूसरा संस्करण अगस्त १९६७

मूल्य छः रुपये

कामना को उनके सौहार्द
और साहाय्य के
उपलक्ष्य में

प्राक्कथन

"सिंह सेनापति" और "जय यौधेय" की भाति "मधुर स्वप्न" भी मेरा ऐतिहासिक उपन्यास है। १९४४-४५ के सात महीने तेहरान (ईरान) मे रहते समय इस उपन्यास के लिखने का निश्चय हुआ था। उसी समय से इसके लिये अध्ययन और सामग्री-सचयन भी करने लगा, लेकिन लिखने मे १९४९ मे ही हाथ लगा सका। मैंने इस उपन्यास द्वारा इतिहास के एक विस्मृत पन्ने को पाठको के सामने रखने की कोशिश की है। इसमे मुझे कहा तक सफलता हुई है, इसे तो मर्मज्ञ पाठक ही बतला सकते है। मेरे और उपन्यासो की भाति इसमे भी अनेक त्रुटिया है, इसे मैं मानता हू, जिन्ही के कारण तो बाज वक्त मेरी लेखनी सकोच करने लगती है परतु तो भी न्याय चाहने वाले वे ऐतिहासिक पात्र, जिनमे से कुछ इस ग्रथ मे भी है, मुझे लिखने के लिए बाध्य करने लगते है।

इस उपन्यास की रगभूमि दजला (तिग्रा) से वक्षु नदी (मध्य-एशिया) तक की भूमि है और काल ४९२ से ५२९ ईसवी। उपन्यास कहा तक ऐतिहासिक तथ्यो पर निर्भर है, इसका दिग्दर्शन परिशिष्ट मे होगा।

इस उपन्यास के लिखने मे श्रीमहेश सिह "महेश" तथा श्रीकमला परियार की लेखनी ने और मुखपृष्ठ पर चित्र बनाकर मेरे मित्र प्रभाकर माचवे ने बडी सहायता की है, जिसके लिए उन्हे अनेक धन्यवाद है।

नैनीताल —राहुल साकृत्यायन

२२ ३ ५०

मधुर स्वप्न

दर्जनीतात्
उ
तस्पोन नगरी
वलाशाबात
वे अर्दशीर
अस्पानवर
वे अन्नियोक
माहोजा

मधुर स्वप्न

१

मृत्यु या जीवन (४९२ ई०)

[illegible] (तिग्रा) आज भी उसी तरह गर्वीली गति से चल रही थी। उसकी गति [illegible] उत्साह था, शायद वह सोच रही थी मेरे तट पर कितने ही [illegible] और सम्राट चार दिन की चमक दिखाकर अन्तर्द्धान हो गये। उसकी गति [illegible] नहीं थी। दोनो तटो पर गगनचुम्बी सौध खड़े थे, जिनमे दक्षिण तट पर अवस्थित महल, महान् प्रासाद भी था और आक्रमण-कारियो [illegible] रक्षा के लिये शक्तिशाली दुर्ग भी। नदी-तट से वहा तक जानेवाली भूमि [illegible] ऊची की हुई थी। तिग्रा मनमानी न कर सकें, इसके लिये पाषाण और ईंट से इसके तट को बांध दिया गया था। प्रासाद-दुर्ग की पहिली कक्षा को पार करते ही आगे और भी ऊची दीवार दिखलाई पड़ती थी, जिसकी ऊचाई कम से कम सौ हाथ थी। दीवार मे द्वाराकार चार तले गवाक्ष बने हुए थे, जिन्हे जहा बेल बूटो से सजाया गया था, वहा सगमर्मर और दूसरे पत्थरो से जोटकर भी मनोरम बनाया गया था। नदी की ओर के प्राकार के बीच मे प्राय प्राकार जितना ही ऊचा विशाल द्वार था, जिसका विस्तार पचास हाथ से कम न था। इसके ऊपर के मेहराब को देखकर सचमुच ही दर्शक को यह भान होता था, कि यह मनुष्य के हाथ का काम नही, और इसकी पुष्टि बाईस हाथ मोटी दीवार भी कर रही थी। मानव के पास इतना अपार श्रम कहा से आया? इस महा-द्वार मे लगे महाकपाट, उसके विशाल काष्ठ और उसमे लगी सुदृढ सुवर्ण की फलियो वाली कीलियो और सुनहली घटियो की पत्तिया भी राजधानी के वैभव को बतलाने के लिए काफी थी, लेकिन उन पर सोने-चादी और रग-बिरगे रत्नो

के कार्य ने उसे कई गुना बढ़ा दिया था। द्वार पर कवचधारी भट भाला हाथ मे लिए अपनी विशाल भूरी दाढ़ियो के कारण और भी भयंकर मालूम होते थे। किसको इस महाद्वार के भीतर प्रवेश करने का साहस हो सकता था?

महाद्वार के भीतर एक और ही दुनिया बस रही थी। विशाल भूमि मे, जिसमे मानो पृथ्वी संकुचित होकर चली आयी थी, कही क्रीड़ा-पर्वत था, कही कितने ही तरह के सुन्दर वृक्षों का उपवन था। पालतू मृग जहा तहा घूम रहे थे और मोर अपने चमकीले पिच्छो को फैलाए, किसी जलयंत्र के पास नृत्य भी करते दिखलाई पड़ते थे। पिंजड़ो मे सिंह, व्याघ्र, जर्रा, शुतुर्मुर्ग, वानर, वनमानुष जैसे जन्तु पड़े हुए थे, जो बतला रहे थे कि शाहंशाह का शासन प्राणिमात्र के ऊपर है। पुष्प और लता-वितान तो इस भूमि को कानन का प्रतिद्वन्द्वी बना रहे थे। इस विशाल सुभूमि के कोनो मे कई मार्ग या राजपथ कई तरफ टेढ़े-मेढ़े जा रहे थे, जहा भिन्न-भिन्न राजकीय विभाग और उनके सहस्रो कर्मचारी अपने काम मे व्यस्त थे—हा, उन्हे सिन्धु से सीरिया की मरुभूमि और काकेशस पर्वतमाला से दक्षिणी समुद्र तक के विशाल साम्राज्य का शासन करना था।

महाद्वार से सीधे सामने की ओर दूर पर्वताकार सीढ़िया दिखलायी पड़ रही, जिनके सौन्दर्य को देखने मे अधिक समय न लगाकर ऊपर चढ़ने पर सामने [illegible] का अपादान (आस्थानशाला या दरबार-हाल) दिखाई पड़ता। हजार खम्भो पर उठी इसकी छत, जान पड़ता था, आकाश मे टंगी हुई है। इसके द्वार के भीतर घुसते ही जान पड़ता, लक्ष्मी ने पैर तोड़कर अपना आसन यही जमा लिया है। संगमरमर, सोना और चादी का तो यहा मिट्टी के जितना भी मोल नहीं था। चारो ही ओर रंगो की छटा, सौन्दर्य की परम्परा, कला और सुरुचि का बाहुल्य था। बिछे ऊनी कालीनो मे कोई-कोई साठ-साठ हाथ तक लम्बे-चौड़े थे। दीवारो पर रेशमी कालीन टंगे थे, जिन पर बड़े परिश्रम से स्वाभाविक रूप मे सूइयो द्वारा सुंदर चित्र निकाले गये थे। कितने ही कुशल हाथो ने [illegible] लगाकर एक-एक कालीन को बनाया होगा। दीवारो पर जगह-जगह विशाल [illegible] अंकित थे, जिनमे कही ईरानी, कही यूनानी और कही भारतीय [illegible] चमत्कार दिखाई पड़ता था। कही [illegible] [illegible] [illegible] कही [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] दिया, [illegible]

—क्योकि वह मनुष्य-दल नही टिड्डी-दल है, जिसका सहार करना आसान काम नही है।

—मनुष्य सभ्यता मे आगे बढकर अपने लिए कितने ही नियम-सयम बना लेता है। किन्तु ये रेगिस्तानो, जगलो, पथरीली घाटियो मे सदा घूमते रहनेवाले किसी नियम-सयम के पाबन्द नही होते। हमने उत्तरी हूणो को दबाकर अपने को निश्चिन्त समझा था, किन्तु पिछले ही साल (५१५ ई०) दूसरे हूण न जाने कहा स पैदा हो गए, जो उत्तरी हिमवन्तो (कोहकाफ) को रौंदते, नगरो-ग्रामो को लूटते-उजाडते तिक्रा के ऊपरी तट तक पहुच गए।

मित्रवर्मा—उत्तर के अज्ञात स्थानो मे न जाने कहा यह बलाय छिपी रहती है।

—अज्ञात होने पर भी इतना तो ज्ञात है, कि उत्तर मे घुमन्तू असभ्य जातिया रहती है। लूट की स्वाभाविक इच्छा, अकाल के आक्रमण एव पारस्परिक युद्ध मे पराजय उन्हे दक्षिण की ओर भागने के लिए मजबूर करते है।

—केवल ईरान की सारी उत्तरी सीमा ही इनसे नही कापती, हिन्द भी इनके धावे से बाहर नही है।

—हिन्द ही नही मित्र, रोमको को भी अपने उत्तरी सीमान्त पर इनका सदा भय बना रहता है।

इस प्रकार दोनो मित्रो का वार्त्तालाप सूर्यास्त और चन्द्रिका के विकसित होने तक चलता रहा। इसी समय सर्वश्वेता सम्बिक् मन्दगति से पास आकर ठमक गई और फिर उनकी ओर एक नजर डालकर बोली—मैं बाधक नही बनना चाहती, दोनो मित्रो के निभृत वार्त्तालाप मे।

—आ सम्बिक् बम्बिश्नान-बम्बिश्न, स्वागत—कहते मित्रवर्मा के उठने से पहले ही सियावश ने कमर दोहरी कर नमस्कार किया।

—रहने दो, अपनी बम्बिश्नान-बम्बिश्न (रानी-अधिरानी) को यहा मैं एक पूर्व-परिचिता के रूप मे आई हू।

—आओ पूर्व-परिचिता हमारी चन्द्रिका, यहा कोई ऐसी निभृत बात नही हो रही है, जिसमे सम्मिलित होने का तुम्हे अधिकार न हो—कहते मित्रवर्मा ने पास पर सम्बिक् को बैठाया, और फिर बात जारी की। अमिदा-विजय और नवीरी हूणो के पराजय की बात चल रही थी।

नर्त्तक, नट, बाजीगर अपनी भिन्न-भिन्न देशीय रग-बिरगी पोशाको और भिन्न-भिन्न प्रकार के वाद्ययत्रो के साथ बैठे हैं, जिनमे भारतीय गायको और नर्त्तको की भी काफी सख्या है—सत्तर ही साल पहले इन्हे बहराम गोर ने भारत से बडे अनुनय-विनय के साथ मगवाया था। आज भी इनके मधुर सगीत और अद्भुत-नृत्य का अपादान मे वैसा ही सम्मान है। क्यो न हो इन्होने ईरानी और भारतीय-कला के सम्मिश्रण मे और भी अधिक मधुर सगीत का निर्माण किया है। भारतीय सगीत जहा दिन के किसी समय भी गाया जा सकता था, यहा अब उसे दिन-रात के पहरो के अनुसार बाटा गया है।

एकाएक लोगो मे हलचल मची। कितने ही भूमि पर दण्डवत गिर पडे, कितने ही ऊचे स्वर मे कह रहे थे "अनवशक बवीद" (अमर हो), "ओतामक रमी" (सफल कार्य हो), लेकिन हलचल और उद्घोष-पूर्वक नमस्कार समाप्त होने देर नही लगी, कि हलचल का कारण सामने ऊपर की ओर दिखलाई पडा, जहा कि पहले सुवर्ण और मणि-मुक्ता से अलकृत विशाल रेशमी पर्दा टगा हुआ था। पर्दा अब हट चुका था। सामने तीस-पैतीस हाथ लम्बी-चौडी वेदी (चबूतरा) थी, जिसे हाथी दात, सुवर्ण और रत्न-जटित आबनूस (चमकीले कृष्ण-काष्ठ) से बनाया गया था। उसके ऊपर सुवर्ण-मरकत-मुक्तागचित चन्द्रातप (चदवा) तना था, जिसमे जगह-जगह टके रत्न पास के गवाक्षो से आती किरणो से मिश्रित हो आकाश मे खिले तारो से मालूम होते थे। वेदी के ऊपर मनोहर रेशमी कालीन बिछा हुआ था, जिसके भिन्न-भिन्न भागो मे एक एक ऋतु का सुदर चित्रण था। वसन्त के दृश्य को देखकर साकार वसत का साक्षात्कार होने लगता था और शिशिर की हिमाच्छादित भूमि तथा पत्रहीन वृक्ष को देखकर आदमी सर्दी का अनुभव करने लगता था। वेदी के ऊपर मुख्य सिहासन था, जिसके बीच मे मणिमय आसन्दी और आगे मखमली सुवर्ण पादपीठ पडा था। बीच की आसन्दी के दाहिने तीन और बाये आसन्दिया पडी हुई थी। प्रधान आसन्दी पर एक महातेजस्वी पुरुष बैठा था जिसकी तरफ दूर से भी देखकर की आखे नही ठहरती थी। उसके शरीर पर स्वर्ण-खचित नीलिमा-युक्त सफेद और [illegible] रग [illegible] से लिपटा [illegible] था, जिसपर नीचे [illegible] लाल [illegible] हुआ था। [illegible] हुआ था। [illegible] उसकी [illegible]

देवसभा के बीच इन्द्र कैसे बैठता होगा, उसका यहां अच्छी तरह साक्षात्कार हो रहा था। भिन्न-भिन्न देशों से समागत जन अतृप्त चक्षु से उस दृश्य को पान कर रहे थे, वायुमंडल में फैलते कस्तूरी, केसर, गुलाब के मधुर आमोद का आघ्राण कर रहे थे। वह खुर्रमबाश् के कथनानुसार जिह्वा पर पूरा अंकुश रखने ही में सफल नहीं हुए थे, बल्कि अब उनकी झपती पलकों और चलती पुतलियों के न देखे जाने पर मूर्ति होने का भी भ्रम हो सकता था। इसी समय पीछे द्वार की ओर कुछ हलचल दिखाई पड़ी। एक असाधारण सैनिक-वेशी भट जल्दी-जल्दी वचुर्गों (बड़ों) की पांती में पहुंच वरहर-निगान्-स्वताय् (गार्ड अफसर) के पास पहुंच कान में कुछ बोला। उसकी मुखाकृति से चिन्ता और भय प्रकट हो रहा था। वरहर निगान्-स्वताय् ने तुरन्त अस्पाहपत् (महासेनापति) के कान

में कुछ कहा, फिर उसने वर्चुक-फर्मादार को संकेत करके बतलाया। भूमि को सिर से स्पर्श करते पश्चात् से मुह ढाके उसने सिहासनासीन व्यक्ति से बात की। फिर एक से दूसरे मुह होती बात सुनकर आगन्तुक भट द्वार की ओर जाता दिखलाई पडा।

ऊपरी पक्ति के सभी मुखो पर चिन्ता की छाया का क्या कारण था? शाहशाही अर्क (दुर्ग) के भीतर किन्तु अपादान के बाहर सगमरमर की सीढियो तक तत्पोत् राजधानी के पचास हज़ार नर-नारी आकर एकत्रित हुए थे। वह भूखे और नगे थे। लाखो को उन्होने अपनी आखो के सामने मरते देखा था, अतएव मृत्यु उनके लिए कोई भय की चीज नही रह गई थी, इसीलिए वे अर्क के महाद्वार के विकराल कपाटो और भयकर द्वारपालो के रहते भी यहा तक आ पहुचे। वह अपने शाहशाह से सीधे अपनी विपदा कहना चाहते थे, छोटे बडे अधिकारियो से कहने का उन्होने कोई फल नही देखा था। द्वारपालो और शाही गारद के भटो को उन गुस्ताखो को दबाने का पूरा अधिकार था, और उन्होने उसका प्रयोग करना भी चाहा, किन्तु उन्हे सफलता नही हुई। भटो और द्वारपालो [illegible] चलायमान अस्थिकंकालो पर अपना खड्ग, अपना भाला चलाना नही [illegible]। किसी भी शासक या शासन के लिए यह स्थिति अत्यन्त लज्जाजनक है, इसलिए सिहासनासीन व्यक्ति और उसके पास की कक्षा मे बैठे व्यक्तियो का चिन्तित होना स्वाभाविक था। इस स्थिति ने सभा के लोगो को भी आपे से बाहर कर दिया था और अब गुर्गमराद् के आदेशानुसार उनकी जिह्वा सयम की अवहेलना करने लगी थी। लोग जैसे पहले ही से कुछ जानते हो, इसलिए बिना अधिक सन्ताप के भी वह शान्त हृदय से द्वार की ओर देखने लगे थे।

सिंहासनासीन पुरुष बड़े ध्यान से उसकी बाते सुन रहा था और बीच-बीच मे कुछ पूछता भी जा रहा था। सोने-चादी की कुर्सियो पर बैठे लोगो की भृकु-टिया तन गई थी, उनके ओठ फड़फड़ाने लगे थे। पुरुष ने उनके भावो को भाप लिया और कहना भी शुरू किया—-क्या शुमा बगान्-जग् (आप देवातिदेव) इन्ही के शाहशाह है, क्या हम आपके कुछ नही लगते ?

शाह—तुम्हारे भी लगते है, किन्तु तुम क्या चाहते हो ?

—क्या इसे भी कहने की आवश्यकता है ? हम मरना नही चाहते, जीने के लिए हम रोटिया चाहिए और रोटिया इन कुर्सीवालो की बखारो मे बन्द है। यदि जीना देने चाहते हो, तो जीने का रास्ता बतलाओ, नही तो हम मृत्यु के लिए तैयार है। अपने भटो को कहो कि हमे मृत्यु का रास्ता दिखलाए, अथवा मृत्यु के घाट उतारे और अपने भालो, बर्छो, छुरो और तलवारो का प्रयोग करके हमारा आशीर्वाद ले। हम पचास हजार आदमी इसीलिए आज यहा आए है, कि यहा से जीवन लेकर जाए या मृत्यु के घाट उतरे। हमी पचास हजार नही सातो नगरियो से तब तक पचास-पचास हजार स्त्री पुरुष यहा आते रहेगे, जब तक कि

सारा नगर जीवितो से खाली और कवात्-वग् का अर्ग् मुर्दों से भर नही जाएगा, वह मुर्दो का शाहशाह नही बन जाएगा।

"मज्दकी ! मज्दकी ! ! बेदीन ! ! !"—की आवाज सुन शाह ने उत्तेजित होके कहा—मुर्दों का शाहन्शाह ! मुर्दों का शाहन्शाह मैं नही होना चाहता। पीरोज-पोह् (पीरोज पुत्र) जीवितो का शाहन्शाह रहना चाहता है। जाओ, लोगो से कह दो, कि कवात् तुम्हे मृत्यु नही जीवन देगा, भूखो को अन्न और नगो को वस्त्र देगा।

यह कहते हुए शाह आसन्दी से उठ खडा हुआ। उसका चेहरा क्षोभ से लाल हो रहा था, दाढी के बाल खडे-से हो गए थे। सकेत पाते ही पर्दा गिर गया। दरबार बर्खास्त हो गया।

२

स्वर्ग और नरक

[illegible] रात थी, चारो ओर नीरवता छाई हुई थी। जान पडता था, निद्रा ने भी [illegible] की निरन्तर गति को कुछ समय के लिए रोक दिया था। सभी जगह [illegible] स्तब्धता ही निस्तब्धता दीख पडती थी। दुर्ग के भीतर भले ही जीवन के चिह्न हों, किन्तु बाहर सुनसान था, महाद्वार पर रक्षी पहरा देने मे थोडे ही सजग थे, चलने-फिरने की जगह व एक जगह खडे या बैठे रहना अधिक पसन्द करते थे। कितने ही उनमे ऊघ भी रहे थे, किन्तु इसका यह अर्थ नही, कि कोई उनकी आख बचा के दुर्ग की कई ड्योढियो को पार कर भीतर घुस सकता था।

अन्तःपुर के भीतर चालीस खम्भो की एक शाला थी, जिसकी दीवारे शीशा के प्रकाश से प्रतिबिम्बित हो दीप्त-सी बनी हुई थी। इस शाला की सजावट मे और भी अधिक कौशल दिखाया गया था, क्योकि वह शाहन्शाह की निजी बैठक की जगह थी। यहा भी एक सुन्दर आसन बिछा था। शाह [illegible] सिर पर [illegible] वह इस समय मुकुट नही था और न वह रगमच के अभिनय का दृश्य ही। [illegible] देह इस समय [illegible] वस्त्र [illegible] था और चेहरे पर भी नम्रता [illegible] नही [illegible] और उदासीनता की रेखा दौड रही थी। वह किसी के आने की प्रतीक्षा मे था।

शानशाहीन पुरुष ने आगन्तुक को देखते ही उठकर उसका स्वागत किया। ऐसा पता था कि वह भी नहीं चाहता था, कि आस्थान-शाला के प्रणिपात को यहा दुहराया जाए। शिष्टाचार की बातो मे बहुत समय नही लगा, और तुरन्त काम की बातो पर उतर आए।

यह कहने की आवश्यकता नही, कि इन दोनो पुरुषो मे एक था सासानी-सम्राट फीरोज शाह कवात और दूसरा बामदात्-पोह्र मज्दक्। कवात् ने असली बात पर आते हुए कहा—मै इस विशाल राज्य का शासक हू, राज्य की बात तो अलग, मुझे अपनी राजधानी की भी खबर नही है।

—क्योकि शाहो की परम्परा है, चीजो को अपनी आख से न देखकर दूसरो की आख से देखना। आप इस परम्परा का उल्लघन कैसे कर सकते है?

—नही, यह नही हो सकता, कि लोग इस तरह क्रूरता के साथ मृत्यु के मुख मे जा रहे हो और मैं हाथ पर हाथ रखकर बैठा रहू।

—आपको अब विश्वास जरूर हो गया होगा, कि तस्पोन् के लोग आज भीषण सकट मे है। किन्तु वास्तविकता का परिचय बातो से नही कराया जा सकता और जब तक वास्तविकता से परिचय न हो, तब तक आदमी उसके प्रतिकार के लिए कोई गम्भीर कदम नही उठा सकता।

—मै आपकी बात पर विश्वास करता हू, दूसरे स्रोतो से भी मुझे प्रमाण मिला है।

—लेकिन मैं कहूगा कि मेरी या किसी की बात पर विश्वास करने से वह दृढ सकल्प और कार्यशक्ति नही प्राप्त होगी, जो कि अपनी आखो देखने से।

—लेकिन शाहशाह का जीवन तो बडी ही परतन्त्रता का जीवन है।

—और बड़े संकट का भी जीवन है। शाहन्शाह अपने पलंग पर सो नहीं सकता, उसका अपना शयन कोष्ठक नहीं होता, उसे रात में कभी कहीं और कभी कहीं सोना पड़ता है।

—क्योंकि उसके नजदीक के सम्बन्धी उसके जीवन के गाहक होते हैं। वह निश्चिन्त होकर पान चषक को मुंह में नहीं लगा सकता, कहीं उसमें विष न डाल दिया गया हो।

—आपको अपनी आंखों देखने में भय लगता होगा न जाने रास्ते में किससे पाला पड़े। किन्तु यदि मेरे ऊपर विश्वास हो, तो आप निश्चिन्त हो मेरे साथ चलिए।

वामदात-पुत्र पर मुझे विश्वास है। वामदात-पुत्र सगोपतान-सगापन के पद का अधिकारी था, जो शाहन्शाह के बाद सबसे ऊंचा पद है, ऐश्वर्य में भी और प्रताप में भी। लेकिन वामदात-पुत्र ने उस पद पर लात मारी, क्योंकि वह दूसरों [illegible] सो नहीं सकता था।

—मैंने कोई त्याग नहीं किया, जो कुछ किया, वह केवल अपने हृदय की आवाज सुनकर किया। [illegible] आदमी का हृदय [illegible] न होता?

—कुछ स्वार्थ, अज्ञान या मानव की हृदयहीनता कारण हो जाती है, किन्तु मैं चाहता हूं मानव हृदय प्राप्त करना, जिसे आप ही सुन्दर मानते हैं। मुझे आप पर पूरा विश्वास है।

हुए उसके ऊपर आनेवाले खतरे का जिक्र किया, तो अन्दर्जगर ने कहा—यदि देरेस्तदीन इतने से कार्यक्षेत्र मे सफल हो सकता है, तो मज़्दक और सियावख्श अमर तो नही हैं, वह कब तक उसकी रक्षा करेगे। मैं इस पर विश्वास नही करता, कि हमारे और तुम्हारे अवलम्ब से ही आगे बढने वाला देरेस्तदीन कभी इस धरती मे बद्धमूल हो सकता है। हम तो निमित्त मात्र हैं। हो सकता है, हम भूतल पर समता का राज्य स्थापित करने मे कुछ दूर तक सफल हो जाए और फिर विरोधी शक्तिया उसका ध्वस कर दें, तो क्या उसके साथ ही हमारे सिद्धान्तो और उद्देश्यो का सदा के लिए अन्त हो जाएगा? मेरी धारणा दूसरी ही है। भूख की शान्ति के लिए आहार की आवश्यकता होती है, जाडो मे गरम पोशाक और आहार की ज़रूरत पडती है, इसी तरह इस दुनिया से दुखो के दूर करने के लिए मनुष्य-मात्र मे समता—भोगो की समता, कामो की समता—स्थापित करना ही एक मार्ग है। विषमता मे मुट्ठी-भर लोग ही सुखी रह सकते हैं और वह मुट्ठी-भर भी निश्चिन्त जीवन नही बिता सकते। विष के डर से हर थाली को सशक दृष्टि से देखते हुए भोजन करना, गुप्त आघात के भय से अनिश्चित शय्याओ की शरण लेना, क्या इने सुखी जीवन कह सकते है? मनुष्य जब भी व्यापक सुख की चिन्ता करेगा, वह इसी निश्चय पर पहुचेगा, कि सबके सुखी होने पर ही हम सुखी रह सकते हैं। मैं और मेरा का ख्याल छोड विश्व को एक कुटुम्ब बना उसमे समता की स्थापना ही सारे रोगो की दवा है। हम आज प्रयत्न कर रहे है, हो सकता है, उसमे सफल न हो पाए। यह भी हो सकता है, कि आनेवाले मधुर-स्वप्नदर्शियो को हमारे तजर्बे का कोई परिचय न हो, तो भी जो सत्य है, वह भूल जाने पर भी फिर प्रकट होगा। हमारी रक्खी नीव के भी लुप्त हो जाने पर नये हाथ और मस्तिष्क फिर इस काम में लगेंगे, और वह तब तक विश्राम न लेंगे, जब तक वह भव्य प्रासाद नही तैयार हो जाएगा, जिसका निर्माण करना हमारा लक्ष्य था।

जामास्प के आत्मसमर्पण की बात सुनकर तस्पोन्-वासियो का दु स्वप्न दूर हुआ। अपनी भूरी, काली बडी-बडी दाढियो से हेफ्तालो ने नागरिको के मन मे भय का सचार ज़रूर किया, किन्तु कही शान्ति भग की नौबत नही आई। हाथ बाधकर स्वय बन्दी बनकर आए जामास्प के बन्धनो को कवात् ने अपने हाथो खोल दिया और गद्गद् हो उसे छाती से लगा लिया। लेकिन लोग उस वक्त

—और बड़े सकट का भी जीवन है। शाहनशाह अपने पलग पर सो नही सकता, उसका अपना शयन कोष्ठक नही होता, उसे रात मे कभी कही और कभी कही सोना पडता है।

—क्योकि उसके नजदीक के सम्बन्धी उसके जीवन के गाहक होते है। वह निश्चिन्त होकर पान चषक को मुह मे नही लगा सकता, कही उसमे विष न डाल दिया गया हो।

—आपको अपनी आखो देखने मे भय लगता होगा न जाने रास्ते मे किससे पाला पड़े! किन्तु यदि मेरे ऊपर विश्वास हो, तो आप निश्चिन्त हो मेरे साथ चलिए।

वामदात्-पुत्र पर मुझे विश्वास है। वामदात्-पुत्र मगोपतान-मगोपत् के पद का अधिकारी था, जो शाहनशाह के बाद सबसे ऊचा पद है, ऐश्वर्य मे भी और प्रभाव मे भी। लेकिन वामदात्-पुत्र ने उस सब पर लात मारा, क्योकि वह दूसरो को दुखी देखकर चैन से सो नही सकता था।

—मैंने कोई त्याग नही किया, जो कुछ किया, वह केवल अपने हृदय की आग बुझाने के लिए। ससार मे इतने लोगो को सन्तप्त देखकर आदमी का हृदय कैसे सन्तप्त न होता?

—तुच्छ स्वार्थ, अज्ञान या मानव की हृदयहीनता कारण हो सकती है, किन मैं चाहता हू मानव-हृदय प्राप्त करना, जिसे आप ही मुझे दे सकते हैं। मुझे आप पर पूरा विश्वास है।

—मुझपर आप विश्वास कर सकते हैं, किन्तु मैं नगर के हर आदमी पर विश्वास नही कर सकता। इसलिए शाहनशाह अपने इस विनीत वेश मे भी नगर मे नही घूम सकते। आपको भेष बदलना होगा। हम दोनो साधारण दपह (कायस्थ) का भेष बनाए।

मानो सब बात पहले ही निश्चित कर ली गई थी। इशारा करते ही प्रतिहारी दोनों को एक ओर ले गए।

अन्त पुर की छत के ऊपर दो व्यक्ति कायस्थो के मलिन वस्त्र मे खडे थे। उनमे से एक ने दूर तक फैली नगरी की ओर इशारा करते कहा—चन्द्रोदय मे अभी कुछ देर है, अर्धरात्रि जल्दी ही हो जाएगी। फिर नगरी पर फैली अन्धकार की काली चादर हट जायगी। ये है हमारे सामने तस्पोन के सात उपनगर—

मौजूद थी। तोरमान आस्थान-शाला मे नही अपनी भोजन-शाला मे बैठा था, पास मे उसके कितने ही मेहमान बैठे थे। यद्यपि विधिपूर्वक आग मे पकाया बछडे का मास और अश्विनी-क्षीर की मदिरा का अभाव यहा नही था, किन्तु प्रधानता भिन्न-भिन्न देशो के नागरिक भोजनो और फलो की थी। मित्रवर्मा को तोरमान से बहुत दूर नही बैठना पडा था। उसने देखा कि जहा भारतीय तथा दूसरे राजकुमार और सामन्त तोरमान के सामने उसका सम्मान करते हुए अपने को अकिंचन-सा प्रदर्शित करते वहा हेफ्ताल तोरमान के साथ आत्मीय जैसा वर्ताव करते। वह भी अपने सामने की चौकी पर पडे मास-खड को कभी स्वच्छ वेश वाले किसी हेफ्ताल को देता और कभी उनमे से कोई अपनी खाद्य वस्तु उसके सामने रखता—आज के भोज मे हेफ्तालो की सख्या अधिक थी। भोजन को देखने से मालूम होता था, कि राजा तोरमान का सम्बन्ध अपने हेफ्तालो से दूसरा है और दूसरो के साथ दूसरा। बात करने मे भी हेफ्ताल उतना सम्मान नही प्रकट करते थे, जितना कि दूसरे। पान भोज का अभिन्न अग था। तोरमान स्वय भी पानशूर नही था, किन्तु अपने सरदारो को बहुत आग्रहपूर्वक पिलाता था। यहा सुन्दर महार्घ चषक भी थे, लेकिन हेफ्ताल-सरदार उनकी जगह सीग के चषक को अधिक पसद करते थे। तोरमान ने यह भोज विशेषकर अपने साले ईरान के शाह के अभिनन्दन मे किया था। कवात् को बचते-बचते भी इतना पान करना पडा, कि वह भोजन-समाप्ति के बाद मुश्किल से अपने पैरो पर खडा हो सकता था।

मित्रवर्मा और उसका भारतीय साथी तोरमान के सम्मुख नही थे, इस लिए उन्होने मात्रा से मदिरा पी थी। सायकाल दोनो भोज से विदा हो नगर की ओर चले। अभी कुछ दिन था। हरे वृक्षो की पत्तियो के बीच हरे जल की एक नहर वह रह थी। दोनो उसीके किनारे टहलने को चल पडे। मित्रवर्मा ने अपने साथी से कहा—कितना परस्पर-विरोध है। हमने दास-वीथी देखी और वहा के भाग्यहीन मानव की नई भडकीली पोशाक के भीतर सुलगती निर्धूम आग को भी देखा, फिर तोरमान के भोज मे उसके सैनिको, सामन्तो को भी। इन्ही सामन्तो के भुजबल पर यह देश के मानव दास-दासी के रूप मे यहा आए हुए है। दास-वीथी मे मानव और मानव का अतर कितना भारी मालूम होता था। यदि हम दास से सीधे बात करते, तो उसपर दया दिखलाते थे।

पड़े मृत्यु की घडिया गिन रहे हैं।

दोनो आगुन्तको की ओर ताक रहे थे। बोलने की भी उनमे शक्ति या इच्छा नही थी, अथवा अन्दर्जगर भी वही कह रहे थे, जो कि वह कहते।

दोनो साथी खिन्न मन हो द्वार मे निकल कर बाहर आए। चाद क्षितिज से बाहर निकल रहा था, किन्तु अभी उसका प्रकाश निविड अन्धकार पर अधिक प्रभाव नही डाल रहा था।

अगला घर, जिसमे वे गये, एक तरुण वास्तु-शिल्पी का था। उसके घर मे उसके भविष्य का स्वप्न एक नमूने के रूप मे मौजूद था ममर-प्रासाद, जिसमे रोमन, भारतीय और अखामनशी वास्तुकला का अपूर्व सम्मिश्रण दिखलाया गया था। यह स्वप्न था तरुण के मन मे जिसके क्षुद्र साकार रूप को उसने अपनी मरण-शय्या के पास रख रक्खा था। स्त्री सिरहाने बैठी थी। दोनो आगन्तुक उनके पास पहुचे। अन्दर्जगर का साथी एक ही बार मर्मर-प्रासाद के नमूने को देख पाया, किन्तु उस एक बार देखने से ही उसने समझ लिया, कि वह मस्तिष्क ...तना ऊचा होगा, जिसने इसकी सृष्टि की। स्त्री ने तरुण के कान मे कुछ कहा ...र अन्दर्जगर कहने पर भी बोला—"कष्ट की क्या बात है? अब तो सारे ...टो का अन्त होने जा रहा है। पिता भी गये, मा भी गयी और अब हम दोनो यहा से कूच करने के लिये बैठे हैं।"

"लेकिन मैंने जो तुम्हारे पास अन्न भेजा था"—अन्दर्जगर ने बीच मे ही ...त काट कर के कहा।

—किन्तु मैं अपने सामने अपने पड़ोसी के बच्चे को मरने कैसे देखता? क्या आपने शिक्षा नही दी, कि दूसरे के काम आना, इससे बढकर दुनिया मे कोई बडा कार्य नही।

अन्दर्जगर का साथी कुछ बोल नही रहा था, किन्तु यह करुण दृश्य उसके हृदय पर वज्रप्रहार कर रहा था, वह यह भी देख रहा था, कि अन्दर्जगर के प्रति कितना प्रेम लोगो मे है।

आगे एक चर्मकार का परिवार आया। वह भी भूख के मारे बेसुध शरीर की जगह कंकाल-मात्र रह गया था। अन्दर्जगर ने कहा—यह वह शिल्पी कलाकार था, जिसके रत्न-जटित कलावत्तू के काम वाले जूतो का सबसे अधिक दाम और सम्मान होता था। अपने सामान को भी बेचना पडा और अब जीवन

अदजगर ने साथी के भावो को समझकर कहा—कितना बडा नरक तुम्हारी छाया के नीचे धाय-धाय करके जल रहा है! नरक की बानगी देख ली, अब यदि राजधानी मे स्वर्ग की भी छोटी सी बानगी देखना चाहते हो, तो चलो, पार होने वाले पुल से उस पार वे अर्दशीर चले। फिर लौटने वाले पुल से अपनी जगह लौट आयेगे।

वे अर्दशीर मे घुसने से पहले वे एक ओर मुडे और दर्जनीतान् मुहल्ले मे पहुचे। असली नरक तो वस्तुत यहा था। राजधानी के सबसे गरीब घर यहा थे। घर अधिकतर सूने थे, मुर्दो को कोई पूछने वाला नही था। उनकी देख-भाल का काम कुत्तो को मिला था। डर था कही वे इन दोनो साथियो के ऊपर टूट न

१—दीनार=सोने का सिक्का (१३ ६६ ग्रेन), द्राख्म=चादी का सिक्का (६ ३ ग्रेन) और दाम्=$\frac{१}{६}$ द्राख्म् के बराबर था।

पडे, किन्तु अन्दर्जगर के आदमी, जान पडता है, सभी जगह तैयार बैठे थे। हा, वे इन सिसकती ठठरियो को भी सहायता पहुचाने मे चूकते नही थे, किन्तु सहायता अधिकतर सान्त्वना के शब्द तक ही सीमित होती थी। ये थे उन लोगो के घर, जहा से शाहन्शाह को रोम से लडने वाले सैनिक मिलते थे। यही वे हाथ थे जिन्होने बडी-बडी अट्टालिकाओ को खडा किया, कही सागर खोदा और कही पहाड उठाया था। किन्तु, आज यहा या तो मुर्दे थे या सिसकती ठठरिया।

अब वे वे अर्दशीर (सलूकिया) मे पहुचे। यहा तिमहले-चौमहले प्रासाद थे, जो चौडी सडको के किनारे खडे चादनी मे दुग्धस्नात जैसे मालूम होते थे। आधी रात के बाद भी यहा घरो के भीतर प्रदीप और नर-नारियो के आमोद-प्रमोद के शब्द सुनायी देते थे। अन्दर्जगर ने यवनी गणिका 'दोरा' कहते हुये एक द्वार को खटखटाया। दासी ने आकर द्वार खोला और एक बार "अवकाश नही" मुह से निकाल कर फिर अभिवादन करके ठमक गयी। अन्दर्जगर ने कहा—

—हमे वहा दखल देने की आवश्यकता नही, हम कही गुप्त-स्थान से देखना ‑ते है।

दासी को विशाल प्रासाद जैसे वेश्या-गृह मे वैसा स्थान ढूढने मे कुछ दिक्कत हुई। अन्दर्जगर के साथी ने बडे आश्चर्य से देखा, वहा दोरा के साथ एक ‑न पर बैठे मगोपतान्-मगोपत् अपने श्वेत-कुर्च और श्वेत वसन को निर्मल ‑ते एक ही सुवर्ण-चषक मे लाल मदिरा पीने मे और साथ ही नर्त्तकी की ‑ठी-मीठी बातें सुनने तथा अपनी सुनाने मे मस्त थे—सत्यानाश हो मज्दकियो ‑! जीवन का एक क्षण दोरा! तुम्हारे साथ स्वर्ग से भी बढकर है।

यह थे ईरान के सबमे बडे धर्म-गुरु, जिनका वचन भगवान का वचन समझा जाता था और जो धर्म के सबसे बडे समर्थक माने जाते थे।

अगले घर मे वर्दका (लाल गुलाब) अपने सौन्दर्य से अयरान्-अस्पाहपत को स्वर्ग का आनन्द दे रही थी। वर्दका राजधानी की प्रसिद्ध नर्त्तकी राजनर्त्तकी थी, उसके नृत्य पर मुग्ध हो अस्पाहपत् अपना मुक्ता हार अर्पण कर रहे थे।

अन्दर्जगर ने अपने साथी को रास्ते मे ले चलते हुए धीमे स्वर मे कहा—देख न रहे हो? क्या यहा नरक की अग्नि की जरा भी आच पहुच रही है? क्या और भी देखना चाहते हो?

—नही, और देखना मुझे सह्य नही हो सकेगा।

सेव, अनार अब पक रहे थे। द्वार और दालान के बीच फूलो से घिरा एक जल-कुण्ड था। दालान की पतली खिडकिया खुली थी, जिसकी बगल से एक ओसारा चला गया था। उसकी दोनो तरफ साफ सुथरी बडी-बडी कोठरिया थी। कोठ-रियो के अन्त मे फिर फूलो की क्यारियो के बीच बैठने की वेदिका थी। मकान के देखने से मालूम होता था, कि उसके स्वामी को स्वच्छता के साथ-साथ घर की उपयोगिता का पूरा ध्यान था, वायु और प्रकाश के साथ जाडा-गर्मी की कठिनाइयो का भी ख्याल था।

यात्रियो को इस घर मे आने की आवश्यकता थी, क्योकि अपने व्रत के अनुसार उन्हे एक वर्ष तक प्रतिदिन भगवती अनाहिता का दर्शन-पूजन करना था। बुढिया की सहायता से ही किसी विस्पोह (सामन्त) का यह खाली मकान उन्हे मिला। बुढिया चाहती थी, कि दोनों यात्री उसके बेटे के नही बल्कि उसके अपने यजमान रहे इसीलिए पुत्र के आने से पहले ही उसने इस मकान को ढूढ दिया था। यात्री अब यहा अधिक निश्चिन्तता से रह रहे थे। बुढिया के घर मे उन्हे परतन्त्रता-सी मालूम हो रही थी जो पुत्र और बहू के आ जाने पर बढ जाती और अवश्य उनका अधिक समय तक साथ मे रहना अनुकूल न पडता। अना-हिता-दुख्त को यह भवन और अधिक पसन्द आया था।

दोपहर के समय पिछले आगन की बगल की कोठरी मे रेशमी कालीन और मखमली मसनद के सहारे बैठी अनाहिता किसी चिन्ता मे मग्न दीख पडती थी। आज वह उसी वेष मे नही थी, जो कि पहले दिन इस्तख्र मे आने के समय था। उसका पायजामा रेशम का था, जिसके एक छोर मे झालर निकली हुई थी, ऊपर उरोजो के पर्यन्त को प्रदर्शित करता रेशमी कचुक और थोडे से किन्तु सुन्दर आभूषण भी थे। केशो को घुघराली कई पक्तियो मे सजाकर सिर के पिछले भाग मे उनका जूडा बधा था। आखो मे सूक्ष्म अजन और ऊपर पतली भौहो की कमान चढी हुई थी। अनाहिता के स्वाभाविक रक्त-अधर और भी अधिक अरुण थे। विशेष प्रयत्न के साथ आज उसने अपने को सजाया था, इसमे सदेह नही, किन्तु उसके चेहरे पर कही हर्ष का चिह्न नही था। मालूम होता था, उसके भीतर कोई प्रतिकूल तूफान उठा हुआ है, आखें भीगी नही थी, लेकिन उनसे करुणा बरस रही थी।

माहपत बाहर से अभी-अभी भीतर आया। यद्यपि उसने अपने पैरो को

३
सकल्प

आस्थान-शाला और अन्त पुर की शाला हम देख चुके हैं। आज कवात् अन्त पुर के, आकार मे छोटे किन्तु साज-सज्जा मे अद्वितीय कमरे मे था। सारा कमरा चन्दन,कस्तूरी, गुलाब, कमल, नरगिस, जूही आदि की मधुर सुगन्धियो स मह-मह कर रहा था। सुवर्ण-मडित हाथी-दात के पावे वाले पर्यक पर फेन सदृश हस तूल-गर्भित कोमल श्वेत-शय्या और उसके ऊपर लटकती मोतियो की झालर मोमवत्ती के मन्द प्रकाश मे कितनी सुन्दर मालूम होती रही होगी, इस और ऐसी दूसरी बातो के बारे मे कहना पुनरुक्ति मात्र होगा। भोग विलास, कला-सौंदर्य मे जो स्थान गुप्तराजवश का था, वही स्थान ईरान के इस सासानी-वश का था। किन्तु इतने सुन्दर प्रकोष्ठ मे भी कवात् छाती पर अपने चिबुक को रखे उदासीन बैठा था और उसके पास ही बम्बिश्नान्-बम्बिश्न (महारानी) सम्बिक् बैठी थी। उसके सिर पर मुकुट, कानो मे कुण्डल, गले मे रत्नमाला पुनरुक्त-।त्र थे, उनसे उसकी शोभा नही बढ सकती थी। क्षीण कटि, उन्नत-वक्ष, शख-श ग्रीवा, तनु-अग, तनु-अगुली, हिमश्वेत-शरीर-वर्ण, आरक्त कपोल, बादाम ।न लोचन, कोमल सुवर्ण-रेखा सम भ्रूलता, दीर्घ पक्ष्म-नेत्र, श्वेत तथा समान ।, कृष्णाभरक्त-दीर्घ-केश जूडा के रूप मे निबद्ध तथा सामने द्विधा विभक्त । जान पडता था, उसके शरीर के निर्माण तथा सौन्दर्य के समावेश मे प्रकृति अद्भुत कौशल दिखलाया था। लेकिन यह सौन्दर्य भी कवात् की उदासीनता को कम करने मे असमर्थ था। सम्बिक की आखें बतला रही थी, कि वह भी अपने पति की चिन्ता से प्रभावित है। उसने बडे सकोच मे मधुर स्वर मे कहा —"ख्वता (खुदा)!"

किन्तु कोई उत्तर नही। कम्पित स्वर मे उसने फिर दुहराया—"ख्वता-पातेख्-शा! क अपायेत्? (खुदा बादशाह! क्या है?))"

किन्तु अब भी कोई उत्तर नही। सम्बिक ने फिर साहस करके किन्तु स्वर को और भी मधुर-कम्पित बनाते हुए कहा—"ब्रात्! (भाई!) मै आपकी सहो-दरा सुख-दुख की सहधर्मिणी हू। क्यो नही बोलते? क्या कल रात के दृश्य ने हृदय को विचलित कर दिया?"

सामने रहके सम्मान बढाने के लिये भेजे जाते हैं। घोड़े पर चढने के बाद वह उनके पीछे-पीछे चलते है। जिसके घर मे शाहन्शाह की सवारी एक बार चली गई, उसके सभी अपराध माफ हो गए, उसे गिरफ्तार नही किया जा सकता। साल के दो महापर्वो—नववर्ष और मह्रगान—के समय उस परिवार की भेट सबसे पहले शाह के पास पहुचाई जाती है, आस्थान-मडप मे उसे सबसे पहले प्रवेश करने का अधिकार है। सिंहासन के दाहिनी ओर की पाती मे उसको बैठने की जगह मिलती है। सोचो, पिछले एक साल मे कितने घरो मे तुमने जाकर उन्हे सभी दण्डो से मुक्त बना दिया!

—क्या मैंने ही बना दिया?

—नही मेरे स्वताय! स्पष्ट बोलने के लिए क्षमा करना। आज तुम कान दे सकते हो, इसीलिए मैं अपने पातेस्शाह से उसकी चरण-सेविका दासी बम्बिश्न् (रानी) के तौर पर नही बोल रही हू।

सम्बिक्! क्या मैंने कभी तुझे चरण-सेविका दासी समझा? क्या हमारा सहोदर भाई-बहन का प्रेम कम होकर पति-पत्नी के रूप मे कभी परिवर्तित हुआ?

—वह परिवर्तन का समय नही था।

—तो क्या पीरोज-पोह्र ने राजसिंहासन पर बैठकर कभी अपनी सम्बिक् ति दूसरा भाव दिखलाया? हो सकता है, अब मेरे पास पहले जैसा समय , किन्तु जो भी समय मिलता है, उसमे सबसे अधिक भाग सम्बिक् का । है।—कहते कवात् ने अपने सिर को सम्बिक् के कन्धो पर रख दिया।

सम्बिक् ने और समीप होते कहा—सो ठीक है, मेरे मन ने कभी अपने वात् के प्रति सन्देह नही पैदा किया। मेरी सदा यही इच्छा रहती है, कि मैं कैसे तुम्हे प्रसन्न रखू।

—प्रसन्न रखने का मुझे तो और कोई रास्ता नहीं दिखताई पड़ता। कल से जो बात हृदय मे काटे की तरह चुभी है, उसी को निकालने का कोई रास्ता ढूढो।

—काटे के निकालने का रास्ता मिल सकता है, किन्तु काटा बोने वाले तो हमेशा तुम्हे घेरे रहते है। उन्होने तुम्हारे दिल मे ही काटा नही चुभोया, उन्ही के बोये काटो के कारण आज सारा देश दुखी हो गया है।

प्रथम शाहपुर के बसाए इस नगर की समृद्धि और सौन्दर्य-वृद्धि मे पूरी तौर से भाग लिया। गुन्देशापूर धन की ही समृद्धि नही रखता, बल्कि विद्या और कला मे विचारो की उदारता और सहिष्णुता मे भी वह अद्‌भुत नगर था। यहा सभी धर्मो के अनुयायी प्रेम से एक साथ रहते थे। रोमक, जिनकी सख्या सबसे अधिक थी, ईसा के अनुयायी थे, अयरानी मज्द-यस्नी होते भी धर्मान्ध नही थे। भिन्न-भिन्न देशो के आदमी भी यहा पर्याप्त सख्या मे रहते थे। गुन्देशापूर मे विश्व का ज्ञान-विज्ञान सुरक्षित था। यहा यवन विचारको, रोमक कलाकारो, हिन्दी ज्योतिषियो-चिकित्सको को अपनी-अपनी विद्या और कला को प्रसार करते देखा जाता था। यहा विश्व के सभी धर्मो के देवालय थे, जिनमे लोग अपने-अपने विश्वास के अनुसार पूजा-पाठ करते थे।

चारो यात्रियो को दक्षिण नगर-द्वार पर कुछ प्रतीक्षा करनी पडी क्योकि बिना नाम लिखे द्वारपाल भीतर जाने नही देते थे। चारो यात्रियो को थोडे ही समय बाद नगर मे प्रवेश करने की छुट्टी मिल गई। द्वार-रक्षको ने लकडी की पट्टियो पर दाहिने से बायें ओर लिखी जाने वाली लिपि मे जो लिखा था, उससे पढनेवाला यही समझ सकता था, कि एक सोग्दी, दो अर्मनी स्त्री-पुरुष और एक रोमक कुल चार भिक्षमगे अमुक तिथि को गुन्देशापूर मे प्रविष्ट हुए। सोग्दी अब अपने तीनो साथियो का पथ-प्रदर्शक बन गया था। वह उन्हे कई सडको और गलियो से घुमाते हुए नगर के उत्तरी छोर पर किन्तु प्राकार के भीतर ही एक अधेरी गली मे ले गया। यहा कच्ची ईटो के दोमहले मकान इतने नजदीक थे, कि दिन मे भी प्रकाश काफी नही पहुचता था। ऐसी सकरी और अधेरी गली के भीतर मकान उसी के अनुरूप होने चाहिए, लेकिन जब वे साधारण द्वार से प्रविष्ट हो बाहरी आगन को पार करके सामने के कमरे मे गए, तो जान पडा कि बाहर का दृश्य केवल भ्रम पैदा करने के लिए था। यद्यपि इस घर के कमरे महार्घ कालीनो और रेशमी पर्दो से सजाये नही गये थे, न दीवारें बहुत सजीले पत्थरो की और न द्वार मूल्यवान काष्ट के कपाटो से ही तैयार किये गये थे, किन्तु वहा स्वच्छता और सुव्यवस्था बहुत दिखाई पडती थी। सोग्दी उन्हे घर के पिछले भाग की कोठरी मे छोड गया और थोडी ही देर बाद दो स्त्रियो और एक पुरुष को साथ लिवाये मेहमानो के पास पहुचा। मेहमानो को आश्चर्य हुआ, जब उन्होने उस पुरुष को देखा, जिसे थोडे ही समय पहले नगर के दक्षिणी

कूचे से किसी के तीर, छुरी या भाले के आकर शरीर पार करने का भय लग रहा था, किन्तु थोडी ही देर तक। फिर, मुझे विश्वास हो गया कि मैं अपने प्राण को आज ही समीप मे आए इस आदमी के हाथ मे निश्चिन्तता-पूर्वक दे सकता हू। मुझे यह जानकर बडा सतोप हुआ। किन्तु, आगे के दृश्यो ने मुझे विकल कर दिया। मैं अपने को भारी अपराधी समझता हू। मैंने ही अपने सामन्तो और सरदारो को अदण्डनीय बना दिया। तभी तो वे निर्भय हो लोगो के प्राणो मे खेल रहे है। अन्दर्जगर की वात अव भी मेरे कानो मे गूज रही है, लेकिन कैसे उसे कार्यरूप मे परिणत किया जाए? मेरी आज्ञा आज तक शिरोधार्य मानी जाती रही है, कोई उसे मानने से आनाकानी नही कर सकता था, किन्तु आज मुझे मालूम हो रहा है, कि मेरे अधिकारी मेरे आज्ञाकारी नही हैं। मुझे भ्रम था। मैं ऐसी आज्ञाओ को ही निकाल कर उनसे मनवा सकता हू, जिसके साथ उनके स्वार्थ का विरोध नही है। सोचो तो, मैंने कभी अपनी आज्ञा को सीधे छोटे लोगो तक नहीं पहुचाया। मेरी आज्ञा उन्ही बडे लोगो के द्वारा कार्यरूप मे परिणत होती रही है, जो कि इस भयकर मृत्यु-लीला के प्रधान अभिनेता है। मुझे जान [illegible]ता है, यदि मैं प्रजा के दुख दूर करने के लिए उन्हे कहू कि तुम अपने को खोल दो, तो वे नही खोलेंगे।

उनकी बखारो को ही नही, यदि सरकारी बखारो के खोलने की वात जाए, तो भी वह खोलने के लिए तैयार नही होगे, क्योंकि उसमे देश सोना वे कैसे एकत्रित कर सकेंगे?

—सोना! यह एक-एक दीनार जो वह अपने धनागारो मे जमा [illegible] रहे एक-एक आदमी के खून मे रगा हुआ है। यदि सभी आदमी मर जाएगे, ये दीनार लेकर क्या करेंगे? शिल्पी मरे है, लाखो की सख्या मे मजूर हु और किसानो की भारी सख्या विशेषकर किसानो के कमकरो की अवस्था [illegible] वही हुई है।

—और भी वुरी हुई है। देश के लिए तो और भी सकट का निमन्त्रण दिया गया है। गावो मे इतने मजूर मरे हैं, कि वसन्त मे बहुत-से खेतो के जोते जाने की आशा नही है, अगले साल और भी अन्न कम होगा।

—फिर दीनार वनाने वालो की ओर भी वन आएगी। लेकिन आखिर सम्पत्ति तो मनुष्य के हाथ पैदा करते है, यह भिन्न-भिन्न प्रकार से स्वादिष्ट

नही कर दिया ।

शाहदुरत (राजकन्या) के रक्त अधरो से यह मधुर शब्द जिस वक्त धीरे-धीरे निकल रहे थे, कवात् अपने चषक को एक हाथ मे लिए उसे भूल गया और बायें हाथ से अपनी भाजी के सुनहले बालो के ऊपर हाथ फेरता, कभी उसके कन्धे पर रखकर उसकी विशाल स्वर्णिम पुतलियो की ओर गम्भीरता से देखता। शाहदुरत के रक्त-अधरो की छाप उसके कपोलो पर पड रही थी, किन्तु अब उसे बिल्कुल सकोच नही रह गया था। मिहिरकुल को सबसे अधिक ध्यान इस बात का था, कि उसके अतिथि का चषक खाली न रहने पाए। यद्यपि वहा हाथ बाधे परिचारिकाए खडी थी, किन्तु वह स्वय ही सुराही से मदिरा ढालने मे तत्पर था। लाल तम्बू के बाहर जान पडता था, तीनो के लिए अब कोई दुनिया नही रह गई है। बल्कि कह सकते हैं तम्बू, उसमे बिछा कालीन उसके भीतर की दूसरी सुन्दर बहुमूल्य वस्तुए भी उनके लिए कोई अस्तित्व नही रखती थी। स्वादिष्ट भोजन वह कब तक करते रहे, चषक कितने चले, यह भी उन्हे याद न रहा। वह केवल अपने अतीत और परोक्ष की वस्तुओ के ही अनुस्मरण और वर्णन मे लगे हुए थे। कवात् के हाल के अनुस्मरण खेदजनक थे, इसलिए उनसे उनके बारे मे कोई जिज्ञासा नही की जा सकती थी। शाहदुरत ने अपनी मा अपने पिता और राजधानी की कितनी ही बातें बतलाई। मिहिरकुल ने अपनी यात्राओ को बडा रोचक वर्णन किया। यद्यपि वह एक दिन मे खत्म होने वाली नही थी। रास्ते के बारे मे पूछने पर उसने कहा—यहा से हमारी राजधानी तक जैसा कठिन रास्ता है, वैसा हिन्द का रास्ता नही है। पहाडी रास्ते हैं और रास्ते मे ऐसे पहाड आते हैं, जिनके सामने यहा के पहाड बच्चे मालूम होते है। जब दूसरी जगह हिम का नाम नही रहता तब भी वहा हिम दिखलाई पडता है। किन्तु वह भयकर रेगिस्तान वहा नही है। वक्षु नदी, वाह्लीक देश, फिर गन्ध-मादन (हिन्दूकुश) की विशाल पर्वत श्रेणी पार करके कपिशा की द्राक्षावलय-भूमि आती है, फिर सिधुनद तक पहुचने मे कितनी ही छोटी-मोटी पर्वत श्रेणिया हैं।

कवात्—हिदु (सिधु) महानद वक्षु से भी बडा है क्या ?

मिहिरकुल—वक्षु उसके सामने क्या है ? उसकी गम्भीर अतल चलाय-मान जलराशि को पार करके तक्षशिला नगरी आती है, जहा हमारा क्षत्रप

भी देखने-सुनने का कहा मौका था ? और यहा आने पर भी [illegible] अपना सिंहासन तुम्हारे लिए खाली कर गए।

—तो ये छत्र और सिंहासन हमारी आखो पर पट्टी का काम करते है ? इनके कारण हमारी आखें बेकार हो जाती हैं। मैं भी इसे अनुभव करने लगा हू, लेकिन प्रश्न है, कैसे इस सकट से लोगो को मुक्त किया जाए ?

—लोगो को मुक्त करने के लिए स्वय रास्ता निकल आया है। देखा नही, अपादान मे इतने भटो और आरक्षा के रहते हुए भी नगर के गरीब तुम्हारे पास पहुच गए। आखिर मृत्यु से बढकर और भीषण क्या बात हो सकती है ? इसीलिए तो लोग निर्भीक होकर सैनिको की पक्ति तोडते हुए आगे बढ आए। अब भी उन्हीं के बल पर इस सकट को दूर करने का रास्ता निकलेगा। जनता अन-गिनित है, अमर है, सौ या हजार के जीने-मरने मे उसका कुछ नही बिगडता और दीनार-पूजक उन्हे मारने से बाज नही आएगे, यद्यपि उसके साथ ही वे अपनी मृत्यु को भी निमंत्रित करेंगे, किन्तु तुम अपने बारे मे भी कुछ सोच रहे हो ?

ख्वात् के चेहरे पर गम्भीरता अब भी पहले जैसी थी, लेकिन निराशा के चिह्न वहा अवश्य बहुत कम हुए थे। उसकी बातो से मालूम होता था, कि पहले चौबीस घटो मे कल के देखे दृश्यो पर उसने काफी ध्यान देकर सोचा था, और अब भी कोई रास्ता निकालने की चिन्ता मे था। वह समझ रहा था कि उन्ही हाथो ने सारे अन्न-धन-वैभव को पैदा किया, जिन्हें कि भूखा घुल-घुलकर मरना पडा। वह चाहता था, कि बन्द बखारो को लोगो के लिए खोल दिया जाए। लेकिन क्या इस काम मे वह सरोपतान्-सरोपन से सहायता की आशा रख सकता था या अयरान्-अस्पाहपत् से ? उसे यह भी मालूम हो रहा था, कि उनके पास ऐसी कोई आज्ञा भेजने का परिणाम अच्छा नही होगा। लेकिन वह पिछले चौबीस घटो मे अपने को बहुत कुछ तैयार कर चुका था। अभी तक उसकी तैयारी मौन-स्वरूप हो रही थी, लेकिन [illegible] अब [illegible] प्रदान कर रही थी। उसने अपने भावो को प्रकट करते हुए कहा [illegible]। मैं कायर नही हू। सामान्यतया विलासी-जीवन का आदी होता है, [illegible] ही वह मृत्यु से भय खाने को भी भारी अपमान समझता है। मैं अपने लिए कोई चिन्ता नही करता, मेरे लिए चाहे कुछ भी हो, चाहे आज मरू या दस [illegible]

वाद। अपने सामन्तो और मन्त्रियो के कोप का भाजन होने पर जो वडे से वडा परिणाम हो सकता है, मैं उसके लिए तैयार हू, किन्तु यह सब होने पर ऐसा तो कोई रास्ता निकलना चाहिए, कि मैं अपने जीवन-त्याग से भी लोगो के कष्ट को हल्का कर सकू ?

—क्या तुम अपने को अकेला समझते हो, या अपने को इस योग्य समझते हो, कि सारे काम को अकेले ही पूरा कर लोगे ? अन्दर्जगर का ऐसा विचार नही है।

—तो उनका क्या विचार है ? फिर उन्होंने क्यो मुझे इस चिन्ता मे डाला ? क्यो उन भयानक दृश्यो को दिखलाकर मेरी नीद को हराम कर दिया ?

—तुम्हारी उपयोगिता मे वह इन्कार नही करते। हर एक आदमी उपयोगी हो सकता है और हर एक आदमी का काम एक वडे उद्देश्य को पूरा करने मे वहुत महत्वपूर्ण भी हो सकता है, लेकिन सिर्फ एक के किए काम पूरा नही होता, सब मिलकर ही किसी काम को पूरा कर सकते हैं। तुम्हे समझना चाहिए, कि यह काम भी वहुत आदमियो के सहयोग से पूरा होनेवाला है और तुम इस काम मे अकेले नही हो। अन्दर्जगर के हजारो शिष्य आग मे कूदने के लिए तैयार हैं, उन्होने उन्हे ऐसे आदर्श का पाठ पढाया है या ऐसी मदिरा पिलाई है, जिसके नशे मे आदमी मौत की चिन्ता नही करता।

—हा, मुझे इसका परिचय मिला है। मैं उस महान् स्थापत्य-कलाकार तरुण को अपनी आखो देख चुका हू, जो अन्दर्जगर के भेजे अन्न को दूसरे को देकर मौत की वाट जोह रहा था।

—इसीलिए मैं कह रही हू कि तुम अकेले नही हो। तुम्हारे साथ इस आग मे कूदने वाले हजारो मौजूद हैं। वह स्वय आगे का रास्ता निकालेंगे, लेकिन तुमको उनके रास्ते मे वाधा देने को कहा जाएगा।

—मैं उसे मानने के लिए तैयार नही होऊगा।

—वडा भयकर पथ है, क्या इस पर तुम अडिग रहोगे ?

—मैं अकेले भी अडिग रहने के लिए तैयार हू, लेकिन अब तो मेरी सहोदरा नन्दिक् भी मेरे विचारो से सहमत है—कहते क्वात् ने सम्विक् को अपने पास खीचकर उसके मुह को चूम लिया।

अपने आरक्त कपोलो को और भी रक्त करते आखो मे आत्मगौरव के अश्रु भरते सम्बिक् ने कहा—सिर्फ विचारो मे ही सहमत नही हू, मै तुम्हारे साथ रहूगी, जहा जाओगे वहा मुझे पाओगे।

—तो मुझे मृत्यु की चिन्ता नही, आखिर वह दो मन के मुकुट की—जो सिर पर लटकता रहता है—शृखला बहुत पतली है, उसके नीचे बैठा क्या मै मृत्यु के नीचे नही बैठा रहता? मुझे मृत्यु भयभीत नही कर सकती, न सदा का कारागार ही जो कि सासानी राजकुमारो के भाग्य मे प्राय बदा रहता है। मै अपने सकल्प पर दृढ रहूगा, जनहित के लिए जो भी सहना पडेगा, उसके लिए मै तैयार रहूगा।

—और तुम्हारी सम्बिक् भी तुम्हारे सकल्प को निर्बल न होने देने का पूरा प्रयत्न करेगी।

४

मृत्यु से युद्ध

तस्पोन मे आज एक नई तरह की चेतना दिखाई पड रही थी। मुख्य नगर मे ही नही बल्कि गरीबो के टोला महोजा और दर्जनीताब् मे भी मृत्यु की छाया सिमटती मालूम हो रही थी। महीनो से सूखे चेहरे यद्यपि अब भी सूखे ही थे, किन्तु उनकी आखो मे एक तरह की चमक थी। सभी जगह अन्दर्जगर मज्दक बामदाद्-पोह्ल का नाम सभी कण्ठो मे सुनाई देता था। तिग्रा के पार करने [illegible] पुलो पर आने-जाने वालो की भीड थी। एक ओर से [illegible], गाडिया, चगेरिया लिए नर-नारी नदी पार हो राजद्वार की ओर जा रहे थे और दूसरे पुल से सिर पर बोझा उठाए लोग लौट रहे थे। शाही अन्नागार के सामने [illegible] की बडी भीड थी। उसके विशाल मैदान मे, जिसमे सैकडो गाडिया और [illegible] ढोने वाले पशु समा सकते थे, आज तिल रखने की भी जगह नही थी। [illegible] शान्ति और व्यवस्था कायम करने का काम आज राजा और [illegible] भट नही, बल्कि स्वतवस्त्रधारी दूसरे ही लोग कर रहे थे। [illegible] ऊचे स्थान से बोल रहा था—घबराओ नही, सबको अनाज मिलेगा। [illegible]

वखारो मे तस्पोन् को कई महीने तक खिलाने भर के लिए अनाज है। हमारे अन्दर्जगर ने शाह से कहा कि कोठिलो से अनाज वन्द करके लोगो को मारना महापातक है, यह सीधी हत्या है, इसलिए वखारो का अनाज लोगो को मिलना चाहिए। शाह ने अन्दर्जगर की बात स्वीकार कर ली है।

किसी आदमी ने बीच मे बात काट के कहा—"विस्पोह्लो के प्रासादो मे भी अन्न से भरे बहुत मे वखार हैं, उनको क्यो छोडा जाता है ? उन्होने लोगो को भूखे मारकर सोने के भाव अपने अनाज को बेंचा है।"

रक्तवसन—तुम्हारा कहना ठीक है। लोगो के प्राणो से खेलने वालो को मनमानी करने नही दिया जायेगा। सबकी वखारें खोली जाएगी।

एक-दूसरे आदमी ने कहा—मगोपतान्-मगोपत् के प्रासाद मे भी अन्न बाटा जा रहा है और अस्पाहपत् के भी। अब अन्न लेने वालो की भीड बट गई है।

रक्तवसन—हा, सारे तस्पोन् के अन्नागारो के दरवाज़े खोले जा रहे हैं। आज कोई भी नागरिको और अन्न के बीच मे बाधक नही हो सकता। किन्तु लोगो को भी ध्यान रखना है, ऐसा न हो कि उनके लोभ और अव्यवस्था के कारण मृत्यु का रास्ता न रुक पाए। यह लट नही है, यह हमारे घर का अन्न है, सारे नगर का अन्न है। इसके व्यय मे बडी सावधानी रखनी होगी। जब तक अन्न की नई फसल तैयार नही होती और अभी उसमे छ महीनें की देर है, तब तक इसी अन्न से निर्वाह करना है। अन्दर्जगर का कहना है, कि लोग आधे पेट अन्न खाए और एक सप्ताह से अधिक का अन्न न ले जाए। अब यह अन्न हमारा है। यदि लो । और अदूरदर्शिता के कारण लोगो ने सयम से काम नही लिया, तो अन्नाभाव से मरने वालो की हत्या का अपराध हमारे ऊपर होगा।

महीनो से लोग अकाल से कराहते मर रहे थे। कही कोई उनको दिलासा देने वाला नही था, केवल यह रक्त-वसन और उनके अनुयायी थे, जिन्होने लोगो की सेवा करने मे कोई भी बात नही उठा रखी। सैकडो ने अपने भोजन को दूसरो के लिए देकर मृत्यु को वरण किया। बहुत दिनो से रक्तवसनो के विरुद्ध प्रचार हो रहा था—"ये धर्म के शत्रु हैं, स्वय पशु हैं, और दूसरो को भी पशु बनाना चाहते हैं। ये सभी स्त्रियो को वेश्या बनाते हैं और लोगो का धन लूटने

ही को धर्म बतलाते हैं। चोर, डाकू, लुटेरे, हत्यारे, गुडे, बदमाश इन्होने ही मिलकर यह नया पथ चलाया है।" यही बात वह एक से अधिक पीढ़ियो से सुन रहे थे।

अभी तक लोगो ने दूर-दूर से ही रक्तवसनो के बारे मे दूसरो के मुह से सुना था। बहुतो ने उन्हे अपनी आखो से देखा भी नही था। जो मग, मगोरान् या मसीही कशीश उनके बारे मे बतलाते थे, उसे ही वे परम सत्य मान रहे थे। लेकिन इस भयकर अकाल मे रक्तवसन और उनके अनुयाई बिल्कुल दूसरे ही रूप मे दिखाई पडे। वे देवता के रूप मे दीख रहे थे—देवता अच्छे अर्थो मे, ईरानी अर्थो मे नही, जिसमे कि देवता भूत-पिशाच का पर्याय है और असुर उससे उल्टे का। उन्होने कभी नही देखा था, कि आदमी अपने मुह की रोटी तोडकर पडोसी को दे दे। जाडो मे कितनो ने अपना कपडा हिमवर्षा के कारण ठिठुरते बच्चो को दे डाला और स्वय बरफ बनकर सदा के लिए जीवन को छोड दिया। रक्तवसन और उनके अनुयाइयो मे दूसरे के लिए प्राण देने की होड-सी लगी थी। साथ ही वह भूखो-दुखो की सहायता मे किसी धर्म या जाति का विचार नही करते थे। आखिर यह क्यों न होता, उनके प्रथम गुरु मानी ने उपदेश दिया था अहुर्मज्द (भगवान्) और अह्रिमान का सहस्राब्दियो से चला आता युद्ध समाप्त हो गया है, अहुर्मज्द ने विजय प्राप्त की। उनके वागान अग्रदस्तगर (गुरु) बतला रहे हैं—युग बदल गया, शैतान की शक्ति सदा के लिए खतम हो गई। अहुर्मज्द का राज्य पृथ्वी पर उतर रहा है। अरामिन (अहिंसा) के शत्रु का पृथ्वी पर चिह्न न रहने देना होगा। सभी मनुष्य भाई भाई है। एक दूसरे की सहायता करना और एक दूसरे के लिए मरना, सबको एक परिवार का समझना, अब हमारे लिए कर्त्तव्य हो गया है।

पडे अन्न को सबके लिए सुलभ कर दिया। पहले शाही अन्नागार पर लोगो के साथ रक्तवसनो के आने पर अफसरो ने रोकने का प्रयत्न किया, लेकिन उनका साथ सैनिक देने के लिए तैयार नही थे। जो सैनिक रोमक सेना के साथ निर्भय होकर लड सकते थे, केदारियो (श्वेतहूणो) के जिन्होने अनेक बार छक्के छुटाए, वही अपने नगर के इन निहत्थे-भूखो और उनके अगुओ पर हाथ छोडने मे अपने हथियार को कुठित समझते थे। उन्होने पिछले छ महीनो मे अपनी आखो देखा था, कि किस तरह उनके सरदार सरदारी कर रहे है। सतीत्व की वहा कौन परवाह करने वाला था। नेम्, द्रास्म (आधा दिरहम) मे लोग अपनी लडकियो को बेच रहे थे। लेकिन अन्न का वहाक् (मूल्य) इतना था, कि उससे एक दिन भी क्षुधा शान्त नही हो सकती थी। एक दिन के भोजन के लिए लोग अपने आपको बेचकर बन्दक (दास) बन रहे थे। आखिर इन सैनिको का जन्म इन्ही परिवारो मे हुआ था, जिनपर अकाल ने क्रूरता से प्रहार किया था। आज सासानी राजधानी मे सरदारो और बन्दको के दो वर्ग साफ-साफ अलग-अलग दिखलाई पड रहे थे। विस्पोह्रो और वचुर्को को कभी स्वप्न मे नही ख्याल आया था कि उनके ये शताब्दियो के बन्दक ऐसा रूप धारण करेगे। जिन धनुष-बाण और खड्ग-भाले से उनकी रक्षा हो रही थी, आज वही उनके वश मे नही थे। अच्छा ही किया, जो उन्होने खुल्लमखुल्ला विरोध करने का इरादा छोड दिया।

इसे बल्कि इरादा छोडना नही कहना चाहिए। शाहनूशाह के प्रासाद के भीतर एक छोटी-सी बैठक हो रही थी। कवान् छोटे सिहासन पर साधारण वेष मे बैठा था। आथ्रवन् (पुरोहित), सथ्रवार (क्षत्रिय) और विस्पोह्र(सामन्त) उनके सामने बैठे विनती कर रहे थे। उनकी विनती मे भी बडी घबडाहट, बडा उतावलापन देखा जा रहा था। सबके चेहरे रोष से लाल किन्तु ओठ भय से सूखे थे। वे दरबारी मर्यादा छोडके एक ही साथ कभी-कभी कई-कई शाह से बोल उठते थे। दरबार के कितने ही नियमो का उल्लघन होते देखकर भी कवान् और उसके पार्श्वचर कोई असन्तोष नही प्रकट कर रहे थे। मगोपतान्-मगोपत् कह रहा था—"यह नापाक मज्दक् वामदान्-पोह्र धर्म का शत्रु अवामिन् का अनुयायी है। लोगो का अन्न लुटवा रहा है। नगर के सारे भलेमानुष त्राहि-त्राहि कर रहे है। ऐसा कभी नही हुआ था।"

कवात्—लेकिन क्या कभी ऐसा हुआ था, कि बाजारो मे अन्न भरा और लाख-लाख आदमी भूखो मर जाए ?

—लेकिन भूखो के बचाने के लिए, चोर-उचक्को को पोसने के लि नीचो और दासो को उकसाने के लिए, धनी के धन को लुटवाना क्या देखा गया ? लोग कह रहे हैं कि वगान-वग् (देवाना-देव) हमारे कहा गए क्यो वह न्याय नही करते ?

एक विस्पोह्र ने कहा—न्याय करने की बात तो अलग, ये लाल लत्ते कह रहे हैं कि अन्न की लूट शाहन्शाह के हुक्म से हो रही है।

मगोपतान्-मगोपत्—हम इसीलिए अपने स्वताय पातेन्शाह के पास आए है कि वह इस लूट को बन्द करे और इन बेदीनो के हाथ से, इन कुलागनाओ को हरजाई बनाने वालो के पंजे से देश को बचाए, राजधानी की रक्षा करे, नही तो दीन-धर्म नही रह जाएगा।

कवात् ने कुछ असहिष्णुता दिखाते हुए बीच मे टोक कर कहा दीन के लिए आप परवाह नही करे, दीन दोरा के प्रासाद मे रहेगा, उसके सुवर्णागार मे दीन के लिए बहुत स्थान है और उसका रत्नाघर तो मानो दीन का अपना निवास-स्थान है, और जगह तो केवल बेदीनी, केवल अकाल या मृत्यु है।

मगोपतान्-मगोपत् का चेहरा उतर गया, जीभ मुह मे सूख गई। उसकी हाँ ... करते हुए वजुर्ग-फरमादार ने जल्दी-जल्दी मे कहा—न्याय होना चाहिए, राज्य मे व्यवस्था रखनी चाहिए। यदि न्याय और व्यवस्था उठ जाएगी तो राज्य नही रह सकेगा।

कवात्—न्याय और व्यवस्था की आज आप ... [illegible] ... है। इतने महीनो तक लम्पोत की गलियाँ ... [illegible] ... न्याय और व्यवस्था का नाम नही लिया, किन्तु अब आप ... [illegible] ... रहे है।

अस्पाहपत ने ... [illegible] ... कहा—... [illegible] ... मान ली जाए ? क्या अगान-वग् ने स्वयं इन पापियो ... [illegible] ... के लिए आज्ञा दी है ?

कवात् ने बड़े शान्त भाव से ... [illegible] ... हो या न दी हो, किन्तु ... [illegible] ... नही चाहता कि ... [illegible]

आज उसकी आखे खुल चुकी है, न्याय के नाम पर उनमे धूल नही झोकी जा सकती। सबसे बडा न्याय यही है कि लोगो को मृत्यु के मुख से बचाया जाए।

मगोपतान्-मगोपत् का चेहरा अब भी फक था किन्तु तब भी वह चुप नही रह सका। उसने कहा—दुनिया मे हमेशा अकाल और सुकाल आते रहते है, लेकिन कभी ऐसा नही देखा गया कि धनी का धन छीनकर लुटेरो को पोसा जाए

—लुटेरे!—कवात् ने कहा—क्या उनके हाथ लुटेरो के हाथ हैं, जिन्होने इन महाप्रासादो को बनाया, इन रेशम और कमखाब के कपडो को तैयार किया? यह असाधारण काल है, इस समय साधारण न्याय नही चल सकता। पहले उन्हे मुर्दों के रास्ते से बचाइए, फिर न्याय कीजिए, दण्ड दीजिए या जो भी कीजिए।

एक सथ्‌धार ने अबकी कहा—हमारे पातेस्शाह स्वता! यदि आप मृत्यु से बचाने की बात करते हैं, तो हम और हमारे बच्चे जो अब मृत्यु के मुख मे पडना चाहते हैं, इसका भी क्यो नही ख्याल करते? हमारी बखारें तेजी से खाली हो रही हैं। राजधानी के भुक्खड सारा अन्न ढो ढोकर अपने घरो को भर रहे हैं। मौत उनके घरो को छोडकर हमारे महलो की ओर लौटी आ रही है। उनकी गलिया नही अब हमारी हवेलिया दखमा बनने जा रही है। यदि न्याय करना है, तो हमारे बाल-बच्चो को भी मौत के मुह से बचाना चाहिए।

सथ्‌धार की बात मे दीनता की गध आ रही थी। कवात् ने उसे समझाते हुए कहा—मैं नही चाहता, कि कोई भी मौत के मुह मे जाए। मैं चाहता हू इस भीषण अकाल के दिनो मे सभी थोडा-थोडा कष्ट सहे, थोडा कम अन्न खाए, जिसमे सबकी रक्षा हो सके। आप लोग क्यो एक ही ओर देखते हैं? क्या ये प्रजातान् या वन्दक जीने का अधिकार नही रखते? क्या उनके हाथो के बिना हमारी राजधानी और प्रासाद आबाद रह सकेगें? हैं मज्दक को आप लोग झूठे ही अ-- और शैतान बनाना चाहते हैं।

बचुर्वो ओ- विस्पोह्रो मे से कई एक साथ बोल उठे- बगान्-बग्! मज्दक् के पास साप की जिह्वा है, उसके पास भारी जादू है, वह लोगो के मन को फेर लेता है। पातेस्शाह जो सोच रहे हैं, वह उसी के प्रभाव के कारण। वह सन्मार्ग को भ्रष्ट क--ना चाहता है, वह वन्दको और कमीनो को सिर पर चढाना चाहता है।

कवात्—लेकिन क्या कभी ऐसा हुआ था, कि खत्तो मे अन्न भरा हो और लाख-लाख आदमी भूखो मर जाए ?

—लेकिन भूखो के बचाने के लिए, चोर-उचक्को को पोसने के लिये, नीचो और दासो को उकसाने के लिए, धनी के धन को लुटवाना क्या कभी देखा गया ? लोग कह रहे हैं कि बगान-बग् (देवाना-देव) हमारे कहा गए ? क्यो वह न्याय नही करते ?

एक विस्पोह्र ने कहा—न्याय करने की बात तो अलग, ये लाल लत्तेवाले कह रहे हैं कि अन्न की लूट शाहनशाह के हुक्म से हो रही है।

मगोपतान-मगोपत्—हम इसीलिए अपने स्वताय पातेख्शाह के पास आए है कि वह इस लूट को बन्द करें और इन बेदीनो के हाथ से, इन कुलागनाओ को हरजाई बनाने वालो के पजे से देश को बचाए, राजधानी की रक्षा करें, नही तो दीन-धर्म नही रह जाएगा।

कवात् ने कुछ असहिष्णुता दिखाते हुए बीच मे टोक कर कहा—दीन के लिए आप परवाह नही करें, दीन दोग के प्रासाद मे रहेगा, उसके सुवर्णचषक मे दीन के लिए बहुत स्थान है और उसका रक्ताघर तो मानो दीन का अपना निवास-स्थान है, और जगह तो केवल बेदीनी, केवल अधर्म या मृत्यु है।

मगोपतान्-मगोपत् का चेहरा उतर गया, जीभ मुह मे सूख गई। उसकी हिमायत करते हुए वचुर्क-फरमादार ने जल्दी-जल्दी मे कहा—न्याय होना चाहिए, राज्य मे व्यवस्था रखनी चाहिए। यदि न्याय और व्यवस्था उठ जाएगी तो राज्य नही रह सकेगा।

कवात्—न्याय और व्यवस्था की आज आप लोगो को बडी चिन्ता हुई है। इतने महीनो तक तस्पोन् की गलिया तस्मा बनी रही, उस समय आपने न्याय और व्यवस्था का नाम नही लिया, किन्तु अब आप लम्बी लम्बी बातें कर रहे है।

अस्पाहपत् ने धैर्य छोडते हुए कहा—तो क्या रक्तवसनो की बात सच्ची मान ली जाए ? क्या बगान्-बग् ने स्वय इन पापियो को लोगो का धन लूट लेने के लिए आज्ञा दी है ?

कवात् ने बडे शान्तभाव से किन्तु पूरी दृढता के साथ कहा—आज्ञा दी हो या न दी हो, किन्तु पीरोज-पोह्र नही चाहता कि लोग अन्न रहते भूखे मरें।

आज उसकी आखे खुल चुकी है, न्याय के नाम पर उनमे धूल नही झोकी जा सकती। सबसे बडा न्याय यही है कि लोगो को मृत्यु के मुख से बचाया जाए।

मगोपतान्-मगोपत् का चेहरा अब भी फक था किन्तु तब भी वह चुप नही रह सका। उसने कहा—दुनिया मे हमेशा अकाल और सुकाल आते रहते है, लेकिन कभी ऐसा नही देखा गया कि धनी का धन छीनकर लुटेरो को पोसा जाए?

—लुटेरे!—कवात् ने कहा—क्या उनके हाथ लुटेरो के हाथ है, जिन्होने इन महाप्रासादो को बनाया, इन रेशम और कमखाब के कपडो को तैयार किया? यह असाधारण काल है, इस समय साधारण न्याय नही चल सकता। पहले उन्हे मुर्दों के रास्ते से बचाइए, फिर न्याय कीजिए, दण्ड दीजिए या जो भी कीजिए।

एक सथ्धार ने अबकी कहा—हमारे पातेख्शाह स्वता! यदि आप मृत्यु से बचाने की बात करते है, तो हम और हमारे बच्चे जो अब मृत्यु के मुख मे पडना चाहते है इसका भी क्यो नही ख्याल करते? हमारी बखारें तेजी से खाली हो रही हैं। राजधानी के भुक्खड सारा अन्न ढो ढोकर अपने घरो को भर रहे हैं। मौत उनके घरो को छोडकर हमारे महलो की ओर लौटी आ रही है। उनकी गलिया नही अब हमारी हवेलिया दखमा बनने जा रही हैं। यदि न्याय करना है, तो हमारे बाल बच्चो को भी मौत के मुह से बचाना चाहिए।

सथ्धार की बात मे दीनता की गध आ रही थी। कवात् ने उसे समझाते हुए कहा—मैं नही चाहता, कि कोई भी मौत के मुह मे जाए। मैं चाहता हू इस भीषण अकाल के दिनो मे सभी थोडा-थोडा कष्ट सहे, थोडा कम अन्न खाए, जिसमे सबकी रक्षा हो सके। आप लोग क्यो एक ही ओर देखते हैं? क्या ये अजातान् या वन्दक जीने का अधिकार नही रखते? क्या उनके हाथो के बिना हमारी राजधानी और प्रासाद आबाद रह सकेंगे? हे मज्दक को आप लोग झूठे ही क्रूर और शैतान बनाना चाहते हैं।

वचुर्कों और विस्पोह्रो मे से कई एक साथ बोल उठे- बगान्-बग्! मज्दक् के पास साप की जिह्वा है, उसके पास भारी जादू है, वह लोगो के मन को फेर लेता है। पातेख्शाह जो सोच रहे हैं, वह उसी के प्रभाव के कारण। वह सन्मार्ग को भ्रष्ट करना चाहता है, वह वन्दको और कमीनो को सिर पर चढाना चाहता है।

—लेकिन कैसे समझते हैं, कि वामदात्-पोह्ल आप लोगो का शत्रु है। वह मगोपतान्-मगोपत् का वशवर है, उसकी नसो मे वही रक्त वह रहा है, जो आप लोगो मे। वह सबकी भलाई चाहता है।

पास मे बैठे एक भद्रवेषी तरुण ने अपना मौन तोडते हुए कहा—रक्तवसन अन्न लुटवा रहे हैं, धन लुटवा रहे है, यह कहना सच्ची बात नही है। मैंने अपनी आखो शहर मे जाकर कई जगह देखा है। वहा कही लूट नही हो रही है। बडी सुव्यवस्थित रीति से लोगो मे अन्न बाटा जा रहा है। महल्ले-महल्ले के घरो का नाम पुकारते हुए सप्ताह भर के लिए केवल आधा पेट अन्न नाप के दिया जा रहा है।

कवात्—और कोई अधिक लेने के लिए उपद्रव नही कर रहा है ?

—नही, मैंने ऐसी शान्ति के साथ इतनी भारी जनता के बीच मे कभी काम होते नही देखा। पहले लोगो मे अन्न लेने के लिए कुछ उतावलापन देखा गया, लेकिन वह देर तक नही रहा। सबको विश्वास हो गया है, कि राजधानी मे जो अन्न है, वह उनके लिए दुर्लभ नही है, किन्तु वह इतना नही है, जिससे साव-धानी न रखने पर छ महीने काटे जा सकें।

—और लोगो के धन की लूट, इज्जत की लूट, कुलागनाओ को वेश्या ने की बात ?—कवात् ने पूछा।

—धनिको और सम्पत्तिशालियो मे कुछ घवडाहट जरूर है।

—घवडाहट तो यहा सबके चेहरे से ही दिखलायी पड रही है, किन्तु उन जो आरोप यहा लगाए जा रहे हैं, क्या वे ठीक हैं ?

—मुझे तो लोगो के भावो मे भारी परिवर्तन मालूम होता है। लोग केवल अपना अपना देखने की जगह अब सारे नगर की ओर देख रहे हैं। अन्न छोड किसी की कोई और चीज वे छू नही रहे है। आज पातेख्शाही भट अपना आतक नही दिखला रहे हैं, और न कही दूसरा सरकारी रोब दिखलायी पडता है, लेकिन सारे नगर मे सुव्यवस्था देखी जा रही है। आश्चर्य तो यह है, कि कैसे इन असस्कृत लोगो ने पारस्परिक द्वेषभाव को इतनी जल्दी भुला दिया। आज बिना किसी राजदण्ड के भय से अपने आप लोग वचन काय-मन से अच्छी बातो का आचरण कर रहे है।

मगोपतान् मगोपत् को तरुण की यह बातें असह्य-सी मालम हो रही थी।

उसने उसका खडन करते हुए कहा—यह अकामेनू का जाल है, जिसमे फसाकर वह लोगो को नरक मे खीच ले जाता है।

कवान्—तो मन-वचन-काय से अच्छा काम करना भी अकामेनू का काम हुआ, फिर अहूर्मज्द का काम क्या हुआ ?

मगोपतान्-मगोपत्—अकामेनू भी कभी-कभी सुकर्म को इसीलिए सामने रखता है, कि लोग उस बाहरी नेकी को देखकर उसके हाथ मे पड जाय और फिर वह लोगो को गुमराह कर ले जाय। अभी ही वामदात्-पोह्ल शाहन्शाही शक्ति को कुटित कर चुका, यदि हमने ध्यान नही दिया तो अर्दशीर वाबकान् का सिहासन इस बेदीन के हाथ मे चला जाएगा। हम पातेख्शाह को यही बतलाना चाहते हैं, कि मज्दक का मुह जितना मधुर वैसा मालूम होता है, उतना ही उसका हृदय नही है।

दर्चुर्क फरमादार (महामन्त्री) ने राजपुरोहित की बात का समर्थन करते हुए कहा—वामदात्-पोह्ल ने बडा भयकर जाल बिछाया है। आज सामानी वश के ऊपर, मज्दयसनी (पारसी) दीन के ऊपर भारी सकट का समय आया है।

कवान्—कही कोई सकट नही आया है। हा, लोगो के प्राणो पर सकट जरूर आया है, उस सकट को दूर करने मे सबको सहायता करनी चाहिये। सबको अपना खाना-खर्च घटाना चाहिए। हजार के एक-एक ग्रास निकाल देने पर सौ आदमियो का जीवन बच सकता है। यह सदा के लिए नही है, सदा अकाल नही रहेगा। फिर पेट भरकर अन्न मिलने लगेगा। यदि सारे देश-वासियो के साथ हमे आधा पेट खाकर रहना हो, तो उसमे असन्तोष करने की क्या आवश्यकता है? आप लोग घबडाइये नही। बतलाइये कही किसी के मारे जाने या घायल होने की खबर आप लोगो को मिली, जिससे मज्दक की कुटिलता सिद्ध हो। रही सासानी सिहासन की बात। उसकी चिन्ता मत कीजिए। यदि सासानी सिहासन को देकर भी हम हजार आदमियो के प्राणो को बचा सकें, तो यह कोई महगा सौदा नहीं है।

कवान् की बातो को सुनकर उसके श्रोताओ को बहुत निराशा हुई। यद्यपि वे अपने मन मे अपनी वैयक्तिक हानि को देखकर बहुत जल-भुन रहे थे, किन्तु वह यह भी देख रहे थे कि छ महीने मे तस्पोन् के अधिकाश लोग मौत से जो त्राहि-त्राहि कर रहे थे, आज वह आवाज़ सुनायी नही दे रही है। सेना और सैनिक-

वल का दवाव न रहने पर भी सारे नगर मे शान्ति का अचल राज्य है। इन वातो को देखकर, जिसे बुद्धि नही समझा सकती थी, आज की परिवर्तित स्थिति साफ वतला रही थी, कि अमीरो के लिए विरोध करने का कोई अच्छा परिणाम नही होगा, क्योकि उनके हाथ-पैर गरीवो के लडके थे, जो अब उनके हाथ-पैर नही रह गए थे। भवितव्यता के सामने सिर झुकाने के सिवा कोई चारा नही था।

५

वृहत्तर मानव-समाज (जनवरी ४६८)

हेमन्त ऋतु अपने यौवन पर थी। तिग्रा की धार पहिले से क्षीण हो गयी थी, किन्तु उसकी गति वैसी ही वेपरवाही की थी। दिन भर हिम वर्षा होती रही, लेकिन साथ ही वह गलती भी जा रही थी, इसलिए छतो तथा सडको को कीचड से भरना भर ही हाथ आया था। लोगो को हिमवर्षा के वक्त तो उतनी सर्दी ह मालूम पडती थी, किन्तु सायकाल के साथ हिम-वृष्टि रुक जाने के द सर्दी वढ गई थी। अन्त पुर मे सुन्दर पाषाण-खडो से पथ आच्छादित थे, ।गन मे मर्मर और दूसरे प्रस्तर लगे हुए थे, फिर वहा कीचड का कहा डर । ? घरो के भीतर कोयले की अगीठिया जल रही थी, ऊपर से लोग मोटे ऊन , कचुको को पहने हुए थे, इसलिए वे शीत की पहुच से वाहर थे। शाह के भिन्न-भिन्न प्रकोष्ठो मे आज भी उसी तरह नाना पुष्पो की सुगन्धि आ रही थी। यद्यपि आजकल पुष्प दुर्लभ थे, किन्तु जहा सारे साम्राज्य मे घोडो की डाक लगी हो और दिन-रात मे ३०० कोस की यात्रा पूर्ण करनी आसान हो वहा शाह के लिए कौन-सी चीज का आकाल हो सकता था ?

अन्त पुर की भोजनशाला से नाना व्यजनो की मधुर गन्ध आ रही थी। गर्म-मास, शीतल-मास, पक्षि-मास, मेष-मास, दो मास के वत्सतर का मास, जैतून के तेल मे पका स्पेत्-पाक्, सिरके के साथ मिलाकर कवूतर, हस, चकोर और तीतर का तला मास, घोडे की छाती का मास नाना भाति के मास सोने के थालियो मे अलग-अलग सजा के रखे जा रहे थे। गन्धशाली का ओदन अलग अपनी

सुगन्ध को फैला रहा था। आग मे भुने मासो की सोधी-सोधी गन्ध जीभ मे पानी ला रही थी। देश-देश के भोजन को भिन्न-भिन्न तरह से तैयार कराके वहा बहु-मूल्य बर्त्तनो मे रखा जा रहा था। खुरासानी कबाब और हिन्दी शौल्य-मा सही नही, रोमक और चीनी आहार भी रखे जा रहे थे। मधु और क्षीर मे पका क्षीरोदन तथा दूसरे स्वादिष्ट ग्रामीण भोजनो को भी भुलाया नही गया था। भोजन के अतिरिक्त पान भी भिन्न-भिन्न प्रकार से सजा के रखे जा रहे थे। बिल्लौरी सुन्दर सुराहियो तथा मणि-मडित सुवर्ण-कुप्पियो मे कग, अरन्द, मर्व, अलवन्द, आसुद और कपिशा की प्रसिद्ध लाल, सुनहली, श्वेतवर्ण मदिरायें रखी हुई थी। जगह-जगह बिल्लौर और महार्घ रत्नो से जटित सुनहले चौडे चषक रखे थे, जिन पर शाह का अपना चित्र उत्कीर्ण था। सभी बर्तन राज-लाछन से लाछित थे। स्वर्ग की अप्सराओ जैसी अन्त पुर की सुन्दरिया जिस कलापूर्ण ढग से एक-एक चीज को लाकर भोजन-वेदिका पर सजा रही थी, वह स्वय एक दर्शनीय चीज थी। आज सुशिक्षित अन्त पुरिकाओ पर ही भोजन के सजाने का काम न छोड सम्बिका स्वय कही से किसी बर्त्तन को हटाती और कही दूसरे को रख रही थी। सारी भोजनशाला मे सुन्दर भोजन-पान के साथ सुन्दरियो की सौन्दर्य राशि बिखरी हुई थी।

सजाने का काम समाप्त होते ही दोनो हाथ बाधे बम्बिश्नान्-बम्बिश्न् (महा-रानी) और उसकी सेविकाये प्रधान द्वार की ओर दृष्टि लगाए खडी हो गयी। देर नही हुई कि शाहशाह द्वार से भीतर प्रवेश करता दिखायी पडा। यद्यपि उसका वेष साधारण था, तो भी वह शाही सादगी थी। शाह की दृष्टि सामने की ओर थी। उससे पता लगता था, कि उसका ध्यान किसी और ओर है। अन्त पुरिकाओ ने झुक-झुक कर अभिवादन किया, किन्तु शाहशाह कवात् का मालूम होता था, ध्यान ही उधर नही था। सम्बिक् ने आगे बढकर उसका हाथ पकडा, तो कवात् ने सोते से जागे की तरह पहले उसकी ओर फिर आस-पास ध्यान से देखा। इस समय तक वह भोजन-वेदिका के पास पहुच गया था। क्यारी भर मे फैले हुए इन भोजनो और पेयो को देखकर उसने आश्चर्य के साथ कहा—प्रिये! यह क्या? लवण, सिरका, पनीर और हरे शाक के साथ मेरी जौ की रोटी कहा है?

सम्बिक् ने कवात के हाथो को अपने दोनो हाथो मे दबाकर रखते हुए कहा—

जौ की रोटी ! अब उसकी आवश्यकता नही है। तस्पोन् मे अब एक भी आदमी भूखा नही है। तस्पोन ही नही, देहिस्तान् (देहात) मे भी अब कोई अन्न बिना भूखा नही है। अब पातेरशाह को इस भोजन के स्वीकार करने का अधिकार है। यदि यह न होता तो सम्बिक् कभी इन भोजनो को यहा न सजाती।

—सो मुझे विश्वास है। मेरी सम्बिका मुझे वचित नही करेगी। लेकिन इतने अधिक प्रकार के भोजनो की क्या आवश्यकता थी ?

—पाचिकाओ और सूपकारो ने महीनो के बाद आज अवसर पाया था, रोकते-रोकते भी इतने प्रकार तैयार हो गए। और आज अन्दर्जगर भी आ रहे है।

कवात् की आखें चमक उठी। उसने उतावलापन दिखाते हुए कहा—हमारे अन्दर्जगर बामदात्-पोह्र आज हमारे साथ भोजन करें ?

—हा किन्तु वह मास और मद्य का सेवन नही करते क्योंकि मास के लिए पशुहिंसा आवश्यक है और वह रक्त बहाना पसन्द नही करते। वह हिंसा को चाहते ह, किन्तु राग की और मोह की हिंसा को !

—फिर तुमने क्यो नही मास और मद्य को रोक दिया। हम भी वही भोजन करते, जो हमारे अन्दर्जगर।

—हा, ठीक है, किन्तु अन्त पुर के लोग इसे प्रदर्शित करना चाहते थे, कि अब सारे अयरान मे लोग सुख से जीवन बिता रहे हैं। फिर सियावक्श और मित्रवर्मा भी आज साथ मे भोजन करनेवाले है।

—निर्भय, वीर तरुण सियावक्श ! और मित्रवर्मा कौन ?

—मित्रवर्मा के बारे मे कहना भूल गई। वह अन्दर्जगर क प्रिय मित्र तथा हिन्द के राजकुमार हैं—राजकुमार न कहना चाहिए, क्योंकि उन्होने सब कुछ छोड-छाडकर देशाटन और अन्दर्जगर के पथ के अनुसरण को अपना लक्ष्य बनाया है। वह हिन्दी है किन्तु उनकी माता नहावन्त के कारेन-पह्लव की बहिन हैं। देखिए, वह लोग आ रहे है।

तीन मेहमान द्वार मे आते दिखाई पडे, जिनमे रक्तवसन अन्दर्जगर के मुख पर ही नही गति मे भी गम्भीरता थी। उनके पीछे पच्चीस-छब्बीस वर्ष के दो तरुण आ रहे थे, जिनमे बिचले का रग दूसरे की अपेक्षा कम गोर था, उसके मुह पर अपने पीछे आने वाले तरुण की भाति दाढी नही थी।

तीनो आगन्तुक शायद भूमि तक सिर झुकाना चाहते, किन्तु शाह के इगित को देखकर सिर भर झुका के उन्होने शिष्टाचार का पालन किया। सम्बिक् ने चारो को उनके स्थानो पर बैठाया। अब भोजन की थालिया एक-एक करके आने लगी।

अन्दर्जगर ही नही शाह और दूसरे साथियो का भी स्वादिष्ट भोजन की ओर उतना ध्यान नही था, जितना बातचीत मे। कवात् ने गद्‌गद स्वर मे कहना शुरू किया—मेरे अन्दर्जगर! आख देने वाले! तुमने मुझे अधेपन से बचाया। कौन कहता है तुम बेदीन हो, तुम देरेस्तदीन (सद्धर्मी) हो।

—"देरेस्तदीन"! यही हमारे पयाम्बर मानी के पथ का नाम है।

शाह ने हाथ को थाली से हटा अन्दर्जगर के चेहरे पर आखें गडाते हुए पूछा—मानी! मानी बेदीन प्रसिद्ध चित्रकार!

—बेदीन नही, उसका धर्म देरेस्तदीन है। लोगो की आखो मे धूल झोकने के लिए मगोपतो और ईसाई कशीशो ने उन्हे बदनाम किया।

—मैने इतना ही मानी के बारे मे सुना है। हमारे अन्दर्जगर के गुरु मानी अवश्य बेदीन नही हो सकते।

—नही, मानी ने ससार की भलाई के लिए अपने भोग और आनन्द को तिलाजलि दी। दो सौ पन्द्रह साल हुए, फातक हमदानी और अश्कानी (पार्थियन) राजकुमारी के पुत्र मानी ने तिग्रा के तट पर मसन नगर मे जन्म लिया था।

—किस दीन के अनुयायी उनके माता-पिता थे?

—जरथुस्ती धर्म के। और मानी ने जरथुस्त को छोडा नही। वह जरथुस्त को पयाम्बर मानते थे, किन्तु साथ ही धर्म के दूसरे अनुयायियो की भाति उनमे सकीर्णता नही थी, वह धार्मिक विद्वेष को बुरा मानते थे।

—अर्थात् सभी धर्मो मे प्रेम-भाव रखना चाहते थे।

—हा, उनका कहना था, 'हर युग मे पयाम्बर भगवान की ओर से लोगो के सामने सत्य और न्याय का प्रकाश रखने के लिए आते है। कही वह हिन्द मे मुनि बुद्ध के नाम से आते हैं और कही अयरान मे स्पिताम जरथुस्त तथा पश्चिम की भूमि मे ईसा के रूप मे उतरते हैं। मैं उसी तरह भगवान का पैगम्बर मानी आजकल आया हू और बाबिर (बाबुल) की भूमि मे सत्य का प्रचार कर

रहा हू।"

—मुझे नही मालूम था। मैंने सुना था कि वामदात्-पोह्ल (मज्दक) ने एक नया धर्म खडा किया है। नया धर्म होने पर भी मैं तो उसे आग देने वाला धर्म मानता हू।

—नया धर्म नही, वामदात्—पुत्र के पहले भी इन दो सौ वर्षो मे और कई महापुरुषो ने मानी के बतलाए प्रकाश को ससार मे फैलाया, उसे और आगे बढाया। ऋषि बवन्दक ने अयरान मे ही नही रोम तक धर्म के सदेश को पहुचाया। वह द्वितीय जरथुस्त थे। पीसा के स्वर्णगान कुल मे पैदा हुए, लेकिन धर्म की ज्योति जगाने के लिए उन्होने देश-विदेश की खाक छानी। मानी के धर्म को उन्होने और परिष्कृत किया। उन्होंने कहा, धर्म केवल परलोक की चीज़ नही है। वह इस लोक मे भी सुखदायी है, उसका सुफल यहा भी दिखाई देनेवाला है।

—यहा दिखाई देने वाला है? बीच मे ही कवात् ने प्रश्न किया।

—हा, देरेस्तदीन कहता है, कि भगवान ने दुनिया की चीजें अपने सारे पुत्रो को प्रदान की हैं। लेकिन अकामेनू (शैतान) ने मेरा और तेरा मे लोगो को फसाकर पथ-भ्रष्ट किया, प्राणिमात्र के प्रेम से लोगो का मुख मुडवाया। भगवान ने प्राणिमात्र से प्रेम करने का रास्ता दिखलाया है। ईसाई हो या मज्दयस्नी (पारसी) सभी उसी भगवान की सन्तानें है। हिन्द के ऋषि बुद्ध ने भी प्राणिमात्र से प्रेम करने के लिए कहा।

शाह—बुद्ध का नाम बचपन मे सुना था, जबकि मैं केदारीय राजधानी (वररशा) मे अपने भगिनी-पति के यहा रहता था।

—हा, केदारी (श्वेतहूण) वश का राज्य हिन्द के भीतर तक फैला हुआ है। उसके राज्य मे बुद्ध के अनुयायियो की भारी सख्या है। बुद्ध के अनुयायी हमारी ही तरह रक्त-वस्त्र पहनते हैं और सबके प्रति दया और प्रेम दिखलाना मनुष्य का कर्त्तव्य बतलाते हैं।

—लेकिन मैंने तो सुना था—कवात् ने कहा—कि बुद्ध और उनके अनुयायी बग (भगवान) को नही मानते।

अन्दर्जगर ने मित्रवर्मा की ओर सकेत करके कहा—इसके बारे मे अधिक इनसे जान सकेंगे, लेकिन मैं तो समझता हू बुद्ध और उनके अनुचर मानवता को मानते हैं। सभी प्राणियो के साथ मैत्री-भाव रखना, पीडितो के प्रति करुणा

दिखलाना, सुखी जनो को देखकर मुदित होना और दुष्ट व्यक्तियो के प्रति भी उपेक्षाभाव रखते मन मे कोई दुर्भावना नही आने देना—यह बुद्ध उपदेश बतलाता है, कि मनुष्य के लिए बुद्ध का बतलाया पथ कल्याणकारी है। क्यो मित्र, तुम क्या कहते हो ?

मित्रवर्मा ने बिना कोई सकोच दिखलाए कहा—हा, बुद्ध और बौद्ध चित्र खीचने वाले बच्चो की आरम्भिक रेखाओ की भाति ही भगवान या देवी-देवताओ की आवश्यकता समझते है।

कवान—अर्थात जिस प्रकार छोटे विद्यार्थी आडी-बेडी रेखाओ को खीच कर चित्र बनाने का अभ्यास करते है, जिनकी आवश्यकता सिद्धहस्त चित्रकार हो जाने पर उन्हे नही रहती, वही क्या भगवान के बारे मे भी बुद्ध के अनुयायियो का विचार है ?

अब भोजन समाप्त हो गया था और एक-दो चषक मदिरा के भी उठ चुके थे। मित्रवर्मा ने और मदिरा इन्कार करते चषक को हाथ से ढाक कर कहा—आपका कथन बिल्कुल ठीक है। आली सीढियो पर चढने के बाद भगवान की आवश्यकता नही रह जाती। मनुष्य होने के कारण सत्पुरुष अपने भीतर मैत्री, करुणा, मुदिता उपेक्षा लाना अपना कर्तव्य समझता है।

वार्तालाप की दिशा बदलती देख बीच मे बोलते हुए मज्दक ने कहा—बुद्ध ने समता का उपदेश दिया है। मनुष्य-मनुष्य आपस मे भाई है, समान है, यह विचार हिन्द से दूर तुखार, शक और पृथ्वी के अन्त मे चीन तक फैला हुआ है।

कवान्—और बुद्ध ने चीनी हो चाहे हूण, शक हो चाहे अयरानी, सभी को समान होने का उपदेश दिया ?

मज्दक—हा! और समता का उपदेश ऊपर ही ऊपर नही किया। उन्होने "मेरा तेरा" के भाव को हटाने के लिए धन-सम्पत्ति को सारे समुदाय (सघ) का बतलाया। हमारे पयाम्बर मानी हिन्द गए थे, उन्हे बुद्ध का यह उपदेश बहुत पसन्द आया। उन्होने बुद्ध के उपदेश को आचरण मे लाने पर जोर दिया। उन्होने बतलाया कि देवेस्न-दीन के ऊपरी श्रेणी के अनुयायियो—दिचीर्कान (दीनदारान)—के लिए आवश्यक है, कि वह परिवार-हीन हो, उनके पास एक दिन से अधिक का भोजन और एक साल के उपयोग से अधिक का कपडा न हो।

कवान्—सुनते है हमारे अन्दर्जगर मेरा और तेरा का भाव अपने सारे

अनुयायियो के मन से हटाना चाहते हैं ?

मज्दक—हा, प्रथम पयाम्बर ने केवल ऊपरी श्रेणी के शिष्यो के लिए ही इस तरह के उच्चजीवन का उपदेश दिया था, किन्तु ऋषि ववन्दक ने बुद्ध और मानी की समता की शिक्षा को और आगे विकसित करते हुए कहा—आज मेरा-तेरा का भाव किसी के मन मे नही होना चाहिए। अकामेनू (शैतान) ने अहुमज्द (भगवान) के रास्ते मे बाधा डाली, उनमे युद्ध किया। लेकिन अब वह युद्ध समाप्त हो गया है। अकामेनू अब पूर्णतया पराजित हो गया है। यह नये ससार के बनाने का समय है। मानी और ववन्दक के बतलाए पथ पर आरूढ हो बीस वर्षों से मैं लोगो को उसी शिक्षा का उपदेश दे रहा हू और स्वय भी उस पर चलना चाहता हू।

कवात्—मेरा-तेरा का हटाना बहुत कठिन काम है, कठिन क्या असम्भव-सा है।

—हा, कितने ही लोग असभव समझते हैं, किन्तु समझाने पर वह समझ जाते हैं, क्योकि ससार मे सुख और शान्ति का केवल मात्र यही एक मार्ग है, कि मनुष्य के भीतर से मेरा-तेरा का भाव उठ जाये।

कवात्—हा, यह कठिन अवश्य है, किन्तु ससार मे दुःख को हटाने का उसके अतिरिक्त कोई मार्ग भी नही है।

मज्दक—नही है, यही कहने के लिये मगोपतान्-मगोपत् से धर्मात्मा लोग भी हमे वेदीन कहते हैं।

कवात्—और यह भी कहते हैं, कि वामदान्-पोह्र अन्न और धन को ही सारे मानव-सघ की सम्पत्ति नही बनाना चाहता, बल्कि वह कुलागनाओ को वेश्या बनाना चाहता है, उन्हे सभी की सम्पत्ति हो जाने के लिए उपदेश देता है।

मज्दक ने हसते हुए कहा—यह बच्चो की-सी बात है। कौन इस पर विश्वास कर सकता है ? हम स्त्री को सम्पत्ति नही मानते।

कवात—लेकिन ब्याह के बन्धन को तो आप तोडना चाहते हैं न ? मित्रवर्मा! तुम इसके बारे मे क्या समझते हो ?

मित्रवर्मा—स्त्री को पुरुष की सम्पत्ति वामदात्-पोह्र नही मानते। विवाह-सम्बन्ध को भी प्रत्येक के वास्ते वर्जित नही करते।

कवात्—किसी के लिए तो वर्जित करते हैं ? लोग इसी को लेकर कहते

हैं, कि मज्दकी विवाह-प्रथा उठा देना चाहते है, स्त्रियो को सभी पुरुषो के लिए मुक्त करना चाहते हैं।

—सभी के लिए नही—मित्रवर्मा ने कहा—किन्तु स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध मे आज धारणा है, उसमे वह अवश्य परिवर्त्तन करना चाहते हैं। स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध सभी देशो और कालो मे एक-सा नही होता। यहा वम्भिश्नान्-वम्भिश्न् नम्भिका स्वता पातेखशाह (स्वामी राजाधिराज) की सहोदरा भगिनी होते हुए पत्नी भी हैं, किन्तु हिन्द मे ऐसा सोचा भी नही जा सकता। अयरान मे भगिनी और पुत्री से विवाह कोई आश्चर्य की बात नही समझी जाती, वैसे ही हिमवन्त मे सभी भाइयो की एक पत्नी होती है।

अवकी सियावरश ने हठात् पूछ दिया—अर्थात् जिस प्रकार हमारे यहा एक पुरुष की बहुत-सी पत्निया होती है, वहा इससे उल्टा होता है।

मज्दक—इसमे क्या आश्चर्य? देश-काल-भेद से हर जगह के सदाचारो मे भेद होता है। एक जगह जो बात निषिद्ध है, वही दूसरी जगह विहित।

ववान्—क्या स्त्री-पुरुषो के सम्बन्ध मे यह शिक्षा हिन्दी-ऋषि बुद्ध ने भी दी थी?

मित्रवर्मा—नही, बुद्ध ने तो उच्च श्रेणी के शिष्यो के लिए स्त्री-पुरुष सम्बन्ध निषिद्ध कर दिया था। इसलिए उनके उच्चश्रेणी के अनुयायी स्त्री-पुरुष अविवाहित रहते हैं।

मज्दक—मानी ने भी अपने उच्च अनुयायियो को परिवार और पत्नी से अलग रहने का उपदेश दिया था। यवन-विचारक प्लातोन ने बतलाया कि महान् उद्देश्य को लेकर चलने वाले नर-नारियो को सम्पत्ति से ही मेरा-तेरा का सम्बन्ध नही हटाना होगा, बल्कि उनके लिए स्त्री मे मेरा-तेरा का भाव होना ही हानिकारक है क्योंकि स्त्री मे केन्द्रित वह मेरा-तेरा का भाव फिर पुत्र-पुत्रियो मे केन्द्रित हो जाएगा, फिर उनकी सन्तानो मे। मेरा-तेरा के लिए ससार मे लोग क्या नही करते? जगत-कल्याण के लिए आदमी अपनी शक्ति को तभी पूरी तरह लगा सकता है, जबकि उसके पास अपनी सन्तान न हो।

ववान्—तो क्या प्लातोन ने भी साधु-साधुनी बन जाने का उपदेश दिया था?

मज्दक—नही, प्लातोन व्यावहारिक विचारक था, उसने सोचा कि

इन्द्रियो पर पूरी तरह से सयम विरले ही कर सकते हैं, इसलिए उसने स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध का विरोध नही किया, किन्तु उसने यह अवश्य बतलाया कि उच्च जीवन और आदर्श के अनुयायियो को अपने उद्देश्य मे सफलता प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है, कि उनका स्त्री-पुरुष के तौर पर पारस्परिक सम्बन्ध भी मेरा-तेरा के भाव से मुक्त हो।

मित्रवर्मा—है यह बडा ही लोक-विद्रोहकारी आचार-विचार, किन्तु जनता के पथ-प्रदर्शको के लिए जन-मगल की भावना से प्रेरित परम त्यागियो के लिए यही एक व्यवहार-पथ दिखलाई पडता है। मैं समझता हू, लोकरुढि से विरुद्ध मार्ग पर चलने के लिए अयरान मे इस पर जोर न दिया जाता, यदि यहा पहले ही से भगिनी-विवाह, पुत्री-विवाह, मातृ विवाह जैसी प्रथायें प्रचलित न होती। लेकिन यह तो ऐसी चीज है, जिस पर अन्दर्जगर का बहुत जोर नही है। वह इसको अप्रतिषिद्ध भर मानते हैं जीवन का लक्ष्य नही मानते।

मज्दक—मानव की प्रवृत्तियो को नीचे जाने से बचाना और उसकी सारी शक्ति को नवीन ससार के निर्माण मे लगाना, यही हमारा उद्देश्य है। अकामेनू के पराजय के बाद अब समय आ गया है, कि हम नये ससार की दृढ नीव रखे। ।५५ अकाल के बाद आज जनता सारे अयरान मे भूख के कष्ट से मुक्त हो ल्दी-जल्दी अपने दोषो को छोडती जा रही है। आज उसकी भावना मे जो ।र परिवर्तन देखा जा रहा है, क्या वह इसका प्रमाण नही है, कि नये युग का ारम्भ हो गया है? आज मनुष्य से पूछा जा रहा है, कि विजयी अहुर्मज्द के थ पर कौन आना चाहता है।

शाह ने मज्दक के भावोद्रेक-भरे शब्दो से प्रभावित होकर कहा—मैं इस पथ पर चलने के लिए तैयार हू। मेरी सम्बिका भी मेरा साथ देने के लिए तैयार है, क्यो? कहते कवात् ने अपनी रानी की ओर देखा।

सम्बिक् ने अपने पति की बातो की पुष्टि करते कहा—हा, मैं सदा तुम्हारे साथ हू। देरेस्त-दीन अकामेनू के पराजय की प्रतीक है। हम अपने पुत्र कावूस को अन्दर्जगर के चरणो मे देना चाहते हैं, जिसमे अभी से वह इस शिक्षा पर आरुढ होकर अहुर्मज्द के राज्य के विस्तार मे सहायक हो सके।

कवात्—मैं सम्बिक की बात से सहमत हू। अकामेनू पराजित हुआ है, किन्तु अकामेनू के अब भी बहुत से अनुयायी अपने स्वामी के पथ को कायम

रखना चाहते है। वे नही चाहते कि नव-प्रकाश फैले, नया प्रदीप जले। कितना भी भय क्यो न सामने आए, किन्तु हम उस भय से नही डरेंगे हम अपना पैर पीछे नही हटाएगे।

मित्रवर्मा—हा, बहुजनहिताय, बहुजनसुखाय हम अपना सर्वस्व अर्पण करेंगे।

६
विस्मृतिकारा का बन्दी

तिग्रा तिग्रा और हुफरात की उपत्यका मे प्रकृति नवजागृत हुई थी। वसत ने जाडे की मृत्युच्छाया को हटाकर सभी जगह आनन्द का जीवन सचारित किया था। वृक्षो मे पत्तिया कुडमलित हो रही थी, या कोमल किसलय निकल आए थे। पुष्प-वाटिकायें अब हरित तृण और उत्फुल्ल पुष्पो से आच्छादित थी। लेकिन, प्रकृति के इस सुन्दर परिवर्तन का प्रभाव तस्पोन की गलियो, राजपथो, घरो और आपानो पर दिखलाई नही पड रहा था। जो आपण पहले देश-विदेश के पण्यो से सुसज्जित तथा आदमियो से भरे थे, आज वहा बहुत कम आदमी दिखलाई पडते थे, बहुत कम सामान सजाके रखा हुआ था। यदि राजभटो ने अपनी सख्या से सहायता न की होती, तो तस्पोन के राजपथो को जनशून्य कहा जा सकता था। नागरिक जो पथ से गुजरते भी थे, वे भावपूर्ण दृष्टि से किन्तु मौन हो एक-दूसरे को देखते चले जाते थे। सडको पर कितनी ही जगहो मे तो रात जैसी नीरवता थी। आज राजधानी नीरव और इतनी निष्क्रिय क्यो दिखाई पडती थी ? नीरवता और निष्क्रियता का अखड राज्य जैसा राज-पथो और गलियो मे था, वैसा घरो के भीतर नही था। लेकिन घरो मे भी लोग निजी तौर से ही बातें करते दिखाई देते थे। किसी भी आगन्तुक या अपरिचित व्यक्ति के आने पर सभी कण्ठ मौन हो जाते थे।

वलाशावात के एक साधारण से घर मे चार आदमी बैठे हुए थे। उनकी मुखाकृति गम्भीर मालूम होती थी और वे बडी उत्सुकता से किसी के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। थोडी देर मे एक फटे चीथडो मे लिपटा प्रौट व्यक्ति दरवाज़े

से भीतर आया। उसने एक बार आगन की ओर नजर दौडा कर दरवाजे को बडी सावधानी से भेड दिया। उसके आगन के भीतर आते ही एक किनारे बैठे चारो आदमी बडी उत्सुकता से उसकी ओर देखने लगे। आगन्तुक उनके समीप आकर अभी मुह खोल नही पाया था, कि एक ने उतावलेपन के साथ पूछा—मेह्लदात! क्या हुआ, प्राण तो सुरक्षित है?

—हमारे प्राण सुरक्षित हैं। वह तस्पोन से बहुत दूर पहुच चुके है। वहा मगोपतान्-मगोपत् या गज्नम्पदात् की बाह नही पहुच सकती। सियावरग भी जा चुका है।

चारो आदमियो मे से अधिक वृद्ध ने सन्तोष की साम लेते कहा—सिया-बख्श भी चला गया? और नगर मे क्या हो रहा है? अभी भी तस्पोन की सडकें रक्त-रजित होती ही जा रही है? घरो मे बच्चो और स्त्रियो के करुण-क्रन्दन सुनाई दे रहे हैं?

मेह्लदात—तस्पोन मे मृत्यु की नीरवता छाई हुई है, सडकें निजन-सी हो गई हैं। भीषण तूफान, भयकर झझा के बाद जैसे समुद्र और उद्यान निश्चल हो जाते हैं, वही अवस्था आज राजधानी की है। सडको और चौरस्तो पर राज-भटो को बहुत कडाई रखने की आज्ञा दी गई है।

—और राजभट अभी भी उसी तरह कडाई से पेश आ रहे हैं?

—राजभट तो कभी कडाई से पेश नही आये—आदमियो मे से एक ने कहा—विशेषकर हमारे अयरानजात हाथ उठाना नही चाहते थे। भरसक उन्होने अपने को अलग रखना चाहा।

ज्येष्ठतम पुरुष ने उसकी बात काटते कहा—फिर किसने तस्पोन की सडको पर खून की नदिया बहाई? तुम बहुत अयरानजात की बात करते हो।

आगन्तुक ने उनके विवाद को शात करते हुए कहा—यह कहना ठीक है, हमारे अयरानी भाइयो ने—अजातान के पुत्रो तक ने भी—अपने भाइयो के खून से हाथ रगना नही चाहा, यह सच्ची बात है। लेकिन गज्नम्पदात् ने खुरा-सान से कहा-कहा के सीमान्तो से भटो को राजधानी मे इकट्ठा कर रखा है। उन्ही ने हमारे ऊपर जुल्म ढाये। लेकिन अब शान्ति है, बडी महगी शान्ति।

अन्दर्जगर के साथ ज़रा भी सम्बन्धित जिसे पाया, उसी को तलवार के घाट उतारा गया। अकाल के दिनो की कसर आज ढूढ-ढूढ कर निकाली जा रही थी। वखार से निकाल कर अन्न बटवाने, लोगो के पास अन्न पहुचाने मे जिन्होने सहायता पहुचाई थी, उनके घरो को ढूढ ढूढ कर लूटा गया, उनके परिवार को मारा गया। यदि वसत की तिग्रा न होती, यदि वर्फ पिघलने से धार गहरी और तीव्र न होती, तो तस्पोन की गलिया मुर्दो से पटी और दुर्गन्ध से भरी रहती।

—तिग्रा मे आदमियो के मुर्दो को डालना, क्या यह वेदीनी नही है ? किसी ने रोषपूर्ण स्वर मे कहा।

मेह्लदात—दीन और वेदीनी सब इनके लिए एक है। जिससे अपना स्वार्थ सिद्ध हो, वही इनके लिए दीन है। मगोपतान्-मगोपत् ने स्वय सकेत किया कि मार कर लोगो के मुर्दो को तिग्रा मे बहा दो। पाच दिन के हत्याकाड को बन्द हुए अभी चौबीस ही घटे हुए हैं।

—हा, मुर्दो के सडको पर पटे रहने पर ज़िन्दे नही बच पाते और मुर्दो को देखकर ज़िन्दो मे कही क्षोभ न हो आए, इसीलिए यह सब किया गया। लेकिन होरमुज़ ! मैं तो कहूगा, हमे चुपचाप यह सब सहना नही चाहिए था।

होरमुज—मैं भी इसे मानता था। लेकिन अन्दर्जगर ने हमे हिंसा का जवाब हिंसा से देने मे रोका। सियावख्श ने बहुत कहा, लेकिन अन्दर्जगर ने इस वक्त शान्ति से काम लेने के लिए कहा।

मेह्लदात—लेकिन हम करते भी क्या ? अचानक हमारे ऊपर प्रहार हुआ। केदारीय राजा रोमक कैसर और हूणो के खागान सभी ने आपस की शत्रुता भूल कर अपने राजदूतो द्वारा नये शाह के पास अपनी शुभ-कामनाए भेजी। जामास्प को अब तख्त पर बैठाया गया है। "मोखा की आग बुझ गई और शापोर की अर्थी उठ खडी हुई" नही सुना है !

सर्व ज्येष्ठ पुरुष ने मेह्लदात की ओर देखते हुए कहा—स्वप्न-सा मालूम होता है, लेकिन अन्दर्जगर इन दुष्टो के हाथ मे नही आए, यह सन्तोष की बात है। बतलाओ तो नही वह अब क्या करना चाहते है ?

मेह्लदात—निरपराध स्त्री-पुरुषो के खून से भी इन खूंखारो की प्यास अभी बुझी नही मालूम होती। आज अपादान मे बडा उत्सव मनाया गया, लेकिन नगर की जनता भयभीत है। अपादान पहले जैसा भरा नही था। जिन किसी

को भीतर जाने की आज्ञा भी नही थी। पहले खूनी भेडियो को बडी-बडी उपाधिया बाटी गई।

—सासानियो का भारी मुकुट जामास्प के सिर पर गिरा क्यो नही ?

मेह्लदात—जामास्प को बहुत दोष मत दो। जामास्प ने भरसक मानवता को हाथ मे जाने नही दिया।

होरमुज्द उद्विग्न हो अपनी आधी पकी लम्बी दाढी पर हाथ फेरते हुए बोला—जामास्प ने मानवता को हाथ मे नही जाने दिया ? तस्पोन मे खून की नदिया बहाकर, तिग्रा को निरपराधो के रक्त मे लाल करके उसने अच्छी मानवता का परिचय दिया!

मेह्लदात—होरमुज्द! तुम्हे नही मालूम है कि जामास्प, गज्नस्पदात और मगोपतान्-मगोपत् के हाथ की कठपुतली है। उन्होने लोगो के खून से हाथ रगा। लेकिन सासानी सिंहासन पर कोई सासानी कुमार ही बैठ सकता है, इसलिए उन्होने जामास्प को शाहशाह बनाया। शापोर मेहरान् तीसरा अत्याचारी है। इन्ही तीनो ने लाखो आदमियो, लाखो परिवारो को आज शोक समुद्र मे डुबाया। जरमेह्र सोखा (कारेन-पह्लव) ने इन दुष्टो का साथ देने मे जरा भी ानाकानी नही की। उसने चचा के खून की कोई परवाह नही की।

होरमुज्द—चाचा, भाई और बाप का खून इनके लिए कौन-सी बुरी बात राजपुत्र जनकभक्षी होते हैं, यह तो सनातन से होता चला आया है। हा, ल ओ तो सही इस तूफान मे क्या-क्या हुआ और क्या-क्या होने वाला है ?

मेह्लदात—जिस तरह जामास्प को उन्होने गद्दी पर बैठाया, उसी तरह रमेह्र वचुर्क-फरमादार (महामत्री) बनाया गया, खूब उपाधियो की वर्षा ई। सबसे भयकर भेडिया गज्नस्पदात "नखवीर" की उपाधि से भूषित किया गया है।

—खुरासान का "कनारग" क्या कम महत्त्व का पद था ?—अब तक चुप बैठे एक आदमी ने कहा।

मेह्लदात—हा, यदि "नखवीर" "कनारग" गज्नस्पदात केदारीय राज्य के सीमान्त का मर्जबान (प्रातपति) न होता, तो कभी इतना जुल्म न हुआ होता। कवात को पकड कर उन्होने बन्दीखाने मे डाला है। पहिले उसको दण्ड देने की बात थी, किन्तु गज्नस्पदात ने कहा, कि पहले गद्दी का महोत्सव मनाना

चाहिए। विस्पोह्रो के मुखो पर, जो वर्षो से सूखे रहा करते थे, आज हसी की रेखा दौड रही थी। जामास्प के सामने मूल्यवान भेटें पेश की गई, सैनिको ने घोडे, तलवार और भाले अर्पित किए, धनिको ने अपादान के आगन को सोने चादी ने पीला और सफेद कर दिया, कवियो ने कविताए पढी।

होरमुज—छि।

मेह्रदात—छि क्यो? इनका तो यह काम ही रहा है जो भी उन्हे प्याला भर कर दे दे, उसी का गीत गाते। जामास्प के अन्तःपुर मे एक दिन मे एक हज़ार सुन्दरिया प्रविष्ट हुई। इनमे कितनी ही कुमारिया थी, कितनी ही उस भीषण सहार के कारण हुई विधवाये और कितनी ही जीवितो की पत्निया थी। विस्पोह्रो और वचुर्को मे से किसी को वगान-वग ने "महिश्त" की उपाधि दी और किसी को "वहरेज" की, कोई 'हजारपत" बना और कोई "हजार-वदक"। 'तख्त-जामास्प", 'जामास्प-इनुम्" (जामास्पप्रसाद), "जायेतान जामास्प" (जामास्प-पुत्र) "जामास्प गोमन्द", "जामास्प-नरव" और 'वराज-जामास्प" की उपाधियो से कई भूषित हुए। मगोपतान्-मगोपत्-गुलनाज को 'हमगदीन" (सर्वज्ञ) की उपाधि मिली। चारो मर्जवानो, चारो अस्पाहपतो ने राजभक्ति की शपथ ली, अख्तरमारान (ज्योतिषियो) ने बडी-बडी भविष्यद्-वाणिया की।

—अख्तरमारो का रोजगार छिना-सा जा रहा था। अन्दर्जगर के युग मे समानता का राज्य हो रहा था, उस वक्त इनकी भविष्यद्वाणिया झूठी हो रही थी।

मेहदात—हा, अख्तरमारान और मगोपतान् की तो रोजी ही छिनती सी मालूम हो रही थी। आज उनकी पाचो घी मे हैं। अम्बारख (राजकोष) लुटाया जा रहा था, लेकिन दूसरी ओर अम्बारखपत् को भेंट की चीज़ो को रखने के लिए खजाने मे जगह नही मिल रही थी।

—पुराने दर्बारियो मे भी तो बहुत फेर-बदल हुई होगी?

—सबसे फेर-बदल पुश्तेकान (शरीर-रक्षको) मे हुई।

—अर्थात् पुराने पुश्तेकान अब विश्वासपात्र नही रहे। और ये नये गज्नस्पदात के आदमी होगे, क्यो?

—गज्नस्पदात की बात क्यो पूछ रहे हो? आज तो वही सब कुछ बना

हुआ है, सब तरफ वही-वही दिखाई पड रहा है।

होरमुज़—अपादान मे नय शाह के गद्दी पर बैठने का उत्सव मनाया जा रहा है और दूसरी ओर सारे तस्पोन मे शोक का अखण्ड राज्य छाया हुआ है। बे-बाप के बच्चे विलख रहे हैं, बे-पति की विधवाए खुलकर रोने भी नही पा रही है।

मेह्लदात—हा, अपादान (दर्बार) मे उस शोक की कही छाया नही दिखलाई पडती थी। उपाधियो की वर्षा, भेंटो का अर्पण, फिर चपको पर चक्रो का चढाना, और अन्त मे नर्तकियो और गायिकाओ, वादको और विदूषको का अपादान को नववर्ष का रूप दे देना, गज्नस्पदात ने आज सगीत का विशेष तौर मे आयोजन किया था। अपादान मे आज वीणा, चग, वर्बूत, तम्बूरा, कर्नार, वशी, ढोल, दुम्बलग तथा दूसरे देशी-विदेशी बाजे बजते थे, देशी-विदशी अप्सराए और किन्नरिया अपनी कला का परिचय दे रही थी।

होरमुज़—और किसी को ख्याल नही आया, कि तस्पोन नगरी आज विलख रही है, तिआ हो रही है!

मेह्लदात—तस्पोन ने कितनी ही बार इस तरह विलखा होगा तिआ ने कितनी ही बार इस तरह रोया होगा। विस्पोह्रो, वचुर्का और दर्पेह्रा तो उनके वलखने और रोने मे क्या मतलब ? आज तो बारह बरस मे छाती पर बैठा ...कर शत्रु हटा, उनके दिल मे गडा काटा बाहर हुआ। आज वह खुल के उत्सव मनाने से कैसे बाज आ सकते थे ?

—लेकिन काटा अभी निकला नही है। शत्रु समाप्त हो गया यह समझना उनका भ्रम है।

मेह्लदात—हा, इसे वह कैसे भूल सकते है, कि उनका महान शत्रु उनके हाथ नही आया। अन्दर्जगर ही नही, उनके प्रमुख शिष्यो मे कोई भी उनके हाथ नही आया, इसका इन भेडियो को बहुत अफसोस है।

होरमुज़—भेडियो! ठहरो, तुम्हारे दिन भी आएगे!

× × ×

खून की होली खेलने के बाद पान-गोष्ठी और उत्सव भी समाप्त हो गया था। आधी के समय जो तलवार के घाट नही उतारे गए, अब उनको न्याय के नाम पर बलि चढाया जा रहा था। दातबर (न्यायाधीश) बडे गर्व के साथ

न्यायासन पर बैठे निर्णय सुना रहे थे। गवाह गवाही देते शपथ ले रहे थे—"मैं अमुक, यशस्वी प्रकाशमान अहुर्मज्द के सामने, बहुमन के सामने, दहकती ज्वाला के रूप में यहां विद्यमान अर्द-वहिश्त के सामने, पास में उपस्थित शह्लवर के सामने और उस स्पन्दारमद के सामने, जिसकी भूमि पर मैं इस वक्त खड़ा हूं, गवाही देता हूं, जिन्हे मैं आगे खाऊंगा-पीऊंगा उस रोटी और जल के रूप में यहां विद्यमान खरदात और अमरदात् के सम्मुख, अपने रक्षक-आत्मा स्पितामन जर्तुस्त के नाम से, आतरपथ मेह्रस्पन्त के नाम से तथा भूत-भविष्य के अपने अज्ञात सारे संरक्षक दिव्यात्माओं के नाम से शपथ करता हूं और सच कहता हूं कि इस व्यक्ति ने कवात् पीरोज-पोह्लवेदीन के लिए मज्दक बामदात पोह्ल पापी के लिए, दीन के साथ और राज्य के साथ विश्वासघात किया। यहां जिस शपथ को मैं ले रहा हूं यदि वह झूठी हो, तो मैं न्याय-सेतु पर (पहुंच कर) उस पाप भार को लेने के लिए तैयार हूं, जिसे जादूगर जोहाक ने किया। मेह्र (सूर्य), स्रोश, रोश्न, फरिश्ते जानते हैं कि मैं सत्य बोलता हूं, मेरा आत्मा जानता है कि मैं सच बोलता हूं, मेरा हृदय और मेरी जिह्वा एक है।"

—तो भी झूठे गवाह का हृदय फटा नहीं, उसकी जिह्वा गलकर गिरी नहीं? बर्बाद हुए नर-नारी कहते थे—यह मेह्र, स्रोश, रोश्न और फरिश्ते कहीं सोए हुए हैं, नहीं तो वह दातवर और गवाह दोनों को न्याय-सेतु पर पहुंचने से पहले ही खतम कर देते।

छोटे-छोटे दातवरों के अतिरिक्त दातवरान्-दातवर (महा न्यायाधीश) के यहां एक भारी न्याय का अभिनय हो रहा था। उसके सामने पीरोज-पोह्ल कवात् अभियुक्त था। मगोपतान्-मगोपत् ने उस पर भीषण दोष लगाया था। सासानीवंश पुरोहितों का वंश था और कवात् वेदीन मज्दक बामदात-पुत्र का अनुयायी बन गया था। दीन के दुश्मन का दण्ड मृत्यु-दण्ड ही हो सकता था, किन्तु दातवरान-दातवर सिर्फ अपराध को प्रमाणित होने का निर्णय दे सकता था, प्राण लेना या जान बख्शना शाहंशाह बलाश-वग के हाथ की बात थी। गज्न-स्पदात ने बहुत जोर देकर मृत्यु-दण्ड देने के लिए शाह से कहा। जामास्प यद्यपि इन भेड़ियों के हाथ की कठपुतली था, लेकिन वह अपने अग्रज को इतना कठोर दण्ड देने के लिए तैयार नहीं था। गज्नस्पदात और मगोपतान्-मगोपत् ने बहुत प्रयत्न किया, कि कवात् को आंखों से अन्धा कर दिया जाए, लेकिन जामास्प

इसके लिए भी राजी नही हुआ। धमकी देने का उत्तर जामास्प ने इतना ही दिया—आज मेरे अभागे बडे भाई की बारी है कल मेरी बारी आ सकती है, मैं ऐसा नही कर सकता। यह भी सोचो, उत्तर मे खजारी हूण सीमा के भीतर घुसकर लूटमार कर रहे है। हमारे पिता पीरोज को मारने वाले केदारी हूण पूर्वी सीमा पर उसी तरह बलशाली है। रोमक सम्राट अनस्तात् गिद्ध की तरह ईरान पर नजर गडाए हुए है, न जाने किस वक्त क्या बला हमारे ऊपर गिरे। मैं इसके लिए तैयार नही हू, तुम्हारी बातो को मानकर मैं अधिक से अधिक इतना ही दण्ड दे सकता हू, कि कवात् को अनुश्वर्त मे भेज दिया जाए।"

विस्पोहो और वचुर्गो को जो पसन्द था, वह दण्ड न मिलने पर भी कवात के अनुश्वत मे भेजे जाने से वे सन्तुष्ट हो गए। अनुश्वर्त—विस्मृति कारागृह—मृत्यु दण्ड या अधा करने के दण्ड से कम भयकर नही था, क्योकि जो बन्दी एक बार वहा भेज दिया गया, वह फिर जिन्दा लौट के नही आ सकता था। उनके नाम का स्मरण भी मृत्युदण्ड देने के लायक अपराध था।

कवात् ने दण्डाज्ञा को बडे धैर्य के साथ सुना। यदि उसे मृत्युदण्ड मिला होता, तो भी वह उसी तरह धीर और गम्भीर बना रहता। उसने बारह वर्ष के अपने शासनकाल मे पिछले दो साल के जीवन को ही सबसे सन्तोष और आनद पाया था, जब कि उसने अपने नही दूसरो के सुख-दुख को अपना सुख-दुख समझा था। अपने सुखो को दूसरो के साथ बाटने और दूसरो के दुखो मे अपने को सहभागी करने मे उसे सबसे अधिक आनन्द मिलता था। अन्दजगर के घनिष्ट सम्पर्क मे आने के बाद उसके जीवन की दिशा ही बदल गई थी। वह समझने लगा था, कि मानव का सुख और सन्तोष अपने ही तक सीमित रखने की वस्तु नही है। खेद था तो इतना ही, कि उसे नई आग पाने के बाद नये रास्ते पर चलने के लिए बहुत कम समय मिला। लेकिन उसे पूरा विश्वास था कि अन्दजगर मे जलाई आग को बुझाने की शक्ति न गजनस्पदात् मे है न जरमह्र मे और न मगोपतान्-मगोपत् मे। उसका पूरा विश्वास था, कि अहुर्मज्द ने अहरामेन् (शैतान) को पूर्णतया पराजित कर दिया है। अहरामेन् के छोटे मोटे अनुयायियो मे इतनी शक्ति नही है कि वह अपने स्वामी के पराजय को विजय मे परिणत कर सकें।

७

तीर्थयात्रा

सूर्यास्त हो गया था, जबकि दो स्त्री-पुरुष इस्तख्र नगरी मे प्रविष्ट हुए। स्त्री की पोशाक थी फैला हुआ सुत्थन, घुटनो से नीचे तक का पीले कमरबन्द वाला चोगा, जिसको आगे पीछे और अगल-बगल मे चार जगह फाडा गया था। हाथ मे कंकण और गर्दन मे कंठा भी उसका उसी तरह का था, जैसे कि ग्रयरानी स्त्रियो का होता है, किन्तु आभूषणो की बनावट कचुक और सुत्थन के बेल-बूटो की सजावट, बालो की गुथाई तथा सिर पर पडी बडी रूमाल की आकृति देखने से ही पता लग जाता था, कि वह पारस की नही है। नगर मे प्रवेश करते ही एकाध आदमियो ने उनसे निवास-प्रदेश के बारे मे पूछना चाहा, किन्तु ठहरने का ठौर बतला देने मे उन्होने और अधिक नही छेडा। छेडने का उन्हे अधिकार था, क्योंकि इस्तख्र भगवती अनाहिता का धाम था, अयरान मे मज्दयस्नी-धर्म का सबसे बडा तीर्थ था। सारे ग्रयरानी ही नही सुदूर सोग्द और सिन्ध तक के भक्तजन अनाहिता के दर्शन-पूजा के लिए यहा आया करते थे। इस्तख्र मे तीर्थ-पुरोहितो की बहुत भारी सख्या थी, जिनकी जीविका ही थी तीर्थयात्रियो की सेवा और सहायता।

इस्तख्र अनाहिता के कारण बडा तीर्थ ही नही, बल्कि वह ग्रयरान की द्वितीय राजधानी था। आज से पौने तीन सौ बरस पहले (२८ अप्रैल २२८ ई०) ग्रर्तक्षत्र (ग्रर्दशीर) प्रथम ने यही सासानी राजवश की स्थापना की, यही पहले-पहल राजमुकुट अपने सिर पर धारण किया, तब से आज तक बीस शाह-शाहो का यही मुकुट-धारण हुआ। जब तक इतख्र मे अनाहिता के पास आकर मुकुट धारण न कर लें, तब तक बाबकान् की पुरानी गद्दी पर बैठने वाला कोई सासानी शासक वास्तविक शाहशाह नही कहा जाता।

दोनो यात्री पत्थर बिछे राजपथ से काफी दूर तक गए। अब उन्हे चन्दन की तथा दूसरी मधुर गन्ध आप्लावित कर रही थी। प्रधान अग्निशाला और अनाहिता का मन्दिर दूर नही है, यह सुगन्धि इसी बात का परिचय दे रही थी। जान पडता है, यात्रियो को पहिले ही से राजपथ और प्रतोली का पता मालूम था, इसीलिए बहुत भटकना नही पडा। राजपथ मे वह एक गली मे मुडे और

आगे एक द्वार पर जाकर उन्होने दस्तक दी। देर नही हुई कि दीपक लिए एक वृद्धा दरवाजा खोलकर खडी हो गई। अपरिचित होने पर भी उसने परम सुपरिचित की तरह उनका स्वागत किया। इस्तख् के तीर्थ-पुरोहितो के लिए यह कोई नई बात नही थी। दोनो यात्रियो के पास नाममात्र का सामान था। उनके चेहरे मे कुछ थकावट मालूम हो रही थी। वृद्धा उन्हे कोठे के एक साफ-सुथरे कमरे की ओर ले गई। इसी बीच मे उसने प्रश्नो की झडी लगा के यह भी जान लिया, कि दोनो यात्री सोग्द के रहने वाले हैं। उसने उनके देश के कई स्थानो का नाम बतलाया। इबर (गुर्जी) के शासक गुर्गीन और कितने ही मगपतो और आतरपतो के नाम भी जल्दी-जल्दी गिना डाले, उसके लिए सोग्द, अर्मनी और इबर एक ही थे। कोठे के ऊपर कालीन बिछी हुई दीवारो पर सुन्दर पर्दों से सजे कमरे मे ले जाकर उसने दीपक जला दिया और फिर "दीनक, दीनक" कहकर आवाज दी। नीचे से एक फटे वस्त्रो और मलिन गात्र की किन्तु मोटी-तगडी लडकी सीढियो पर से दौडती हुई ऊपर आई। पास आ उसने दोनो हाथो को छाती के ऊपर दाहिनी हथेली को बाए कधे की ओर और बाई हथेली को दाए कधे की ओर रखे झुककर आगतुको की वन्दना की। वृद्धा को कहने की आवश्यकता नही पडी, मानो तरुणी पहिले से ही अभ्यस्त थी। उसने जल्दी-जल्दी बिछौने को ठीक किया, मसनद लगा दी और थोडी देर मे गरम पानी और हाथ धोने का बर्त्तन लाकर रखा।

बात की बात मे अगूर, सेब, खर्बूजे, अनार तथा लाल शराब की सुराही और चषक आके मौजूद हो गए।

बुढिया मेहमानो को छोडने वाली नही थी। वह बोले जा रही थी—देर से आए। एक मास पहले आए होते, तो इस्तख् की शोभा न्यारी दिखलाई पडी होती। हमारी दीनदार शाहशाह जामास्प ताजपोशी के लिए यहा आया था। सारे विस्पोह्र, वचुर्क यहा मौजूद थे। मगोपतान्-मगोपत् गुलनाज, कारेन पह्लव, सोरेनपह्लव, अस्पाहपत सभी यहा इस्तख् मे मौजूद थे। वरहर, वह्लक, अत्रोपत, मारेस्पन्दान, मित्रोवराज, मित्रो अकविद् आदि सारे मगोपत यहा अपने परिवार सहित आए हुए थे। नगर सजा हुआ था। उसके एक छोर से दूसरे छोर तक सारी सडके चन्दन के जल से सिंचित हो महक-महक रही थी। ऐसा समय बार-बार नही आता, क्यो नही कुछ पहिले आए ?

वुटिया अतिथियो को वोलने का बहुत कम अवसर देती थी। उन्होने उनके प्रश्नो का एकाध ही वार जवाव देने का प्रयत्न किया—हमने बहुत कोशिश की, कि ताजपोशी के समय इस्तख् पहुच जाए, लेकिन हमारा देश वहुत दूर है, पथ मे बडे-बडे पर्वत है, रास्ता आसान नही है।

—हा, कोहकाफ का मार्ग बहुत कठिन है। मैं जानती हू कोहकाफ पैरिकाओ (परियो) का देश है। वहा द्रुजान, देवान्, (असुरो), अपओशा और नसू रहते हैं। लेकिन भगवती का एक वार दर्शन कर लेने से द्रुजान, देवान् या दूसरे किसी का भय नही रह जाता। रास्ते मे हमारी दुख्त (वेटी) को वहुत कष्ट हुआ होगा।

—हा, कष्ट तो हुआ, किन्तु भगवती के शरण मे आ जाने पर हम सब कष्ट भूल गए। हमे रास्ते मे घोडे की सवारी मिल गई थी, इसलिए आने मे कोई तकलीफ नही हुई। हा, मेरी अनाहिता-दुख्त हस्मतन (हम्दान) मे आकर अस्वस्थ हो गई, इसलिये हम समय पर आने से वचित रह गए।

वृद्धा ने पुरुष की ओर से हट स्त्री के चेहरे पर दृष्टि गडाकर कहा—अनाहिता-दुख्त! वडा सुन्दर नाम है, जैसा रूप वैसा ही नाम। भगवती को सव जगह मानते हैं।

अव के अतिथि स्त्री ने मुह खोला--मेरे पिता-माता को मेरे भाई माहपत् के वाद कोई सन्तान नही हुई थी। उन्होने भगवती की वडी प्रार्थना की, फिर दस वर्ष वाद मैं पैदा हुई, इसलिए मेरा नाम उन्होने अनाहिता-दुख्त रखा। वहुत दिनो से दर्शन करने की लालसा थी, किन्तु अव वह इच्छा पूरी हुई।

—भगवती सब इच्छा पूरा करेंगी, जैसे तुम्हारे माता-पिता की इच्छा पूरी हुई वैसे ही तुम्हारी भी इच्छा पूरी होगी। भगवती के पास से कोई खाली नही लौटता। कोख सूनी नही ।

—भगवती की कृपा से दो पुत्र और एक पुत्री हैं, उन्हे मार्ग के कष्ट के कारण घर पर छोड आए हैं। दर्शन के लिए आज वहुत दिनो की लालसा लेकर यहा पहुचे है।

वृद्धा की वात यद्यपि समाप्त नही हुई, तो भी अतिथि हाथ मुह धोकर खाने पीने मे लगे हुए थे। दासी दीनक ने उनके रहने का सारा प्रवन्ध कर दिया

था। माहरान् और अनाहिता-दुख्त भी, जान पडता है, बुढिया की बात से उकता नही रहे थे और बहुत रस ले लेकर उसकी बातें सुन रहे थे। आज रात केवल विश्राम करना था, अनाहिता के दर्शन के लिए अगले दिन जाना था। महापत् की बात से मालूम हुआ, कि उसका आतुरफर्नबग का पहिले से परिचय है। आतुरफर्नबग अपनी पत्नि के साथ तस्पोन गया हुआ था। वह अनाहिता के पुरोहितो मे अच्छा प्रभावशाली माना जाता था। जामास्प की ताजपोशी के बाद यहा की दान-दक्षिणा से सन्तुष्ट न हो कितने ही आतरपत और पुरोहित राजधानी तक धावा मार रहे थे, बुढिया का लडका भला क्यो पीछे रहता!

बुढिया ने कहा—फजन्द घर पर नही है, तो कोई परवाह नही, कष्ट नही होने दूगी पुस्स (पुत्र)! दो तीन दिन मे वह चला आएगा। आप दोनो इसे अपना घर समझें। दीनक सेवा के लिए तैयार रहेगी।

अतिथि-स्त्री के इगित पर वृद्धा ने बतलाया—इस्तख् मे भी अकामेनू के बच्चे पहुच गए थे, बेदीन मज्दक की बात फैलने लगी थी। जब शाह की नीयत खराब हो जाए, तो दूसरो की क्यो न हो? किन्तु, अब दीन ने फिर बेदीनी पर विजय प्राप्त की है। भगवती की सेवा-पूजा मे अब फिर पहले ही की भाति भीड रहती है।

—क्या भगवती की सेवा पूजा मे कमी हो गई थी?—अनाहिता-दुख्त ने पूछा।

—हा, दुख्त! किन्तु तुझसे क्या छिपाना है। यदि बेदीन कवात् पाच साल और तख्त पर रह जाता, तो सचमुच इस्तख् के लोगो को भूखा मरना पडता। तीर्थयात्री बहुत कम आने लगे थे। जान पडता है, सभी जगह पापी मज्दक ने अपना जाल बिछा दिया था।

—बडी प्रसन्नता की बात है जो ये बेदीन अयरान मे विदा हुए—स्त्री ने अपनी बात पर जोर दिये बिना कहा।

बुढिया ने और भी उत्साह दिखाते कहा—भगवती की मेहरबानी है, अब फिर पहिले की ही तरह देश मे आनन्द मगन होगा। हा, देश मे सब जगह हवा बदल गयी थी। दास-दासी हुक्म नही मानते थे, छोड के भाग जाते थे। स्वामी उन्हे पकड नही पाते थे। सबको मज्दकियो ने बरगला दिया था। छोटी जाति वाले कतखुतायो (ग्रामपतियो) क्या विस्पोह्रो और वचुर्को तक की बात टाल

देते थे। ऐसा समय आ गया था, जब मालूम होता था, न कोई चाकर घर मे रह जाएगा और न वदक। क्या करे यह समझ मे नही आ रहा था। लेकिन धन्यवाद है भगवती को, फिर दीन का राज्य लौट आया, अब कष्ट नही होगा। इस्तख् मे अब कोई मज्दकी नही रह गया।

—कहा गए थे? स्त्री ने पूछा।

—कहा गए? पापियो और वेदीनो को जैसा दण्ड अहुर्मज्द ने देने को कहा है, वही दण्ड उन्हें मिला। एक महीने तक भगवती के मन्दिर के चारो ओर हजारो मुड टगे हुए थे। अभी उन्हे हटाये सप्ताह भर भी नही हुआ है। अब मज्दक का नाम तक लेने वाला यहा कोई नही है, मज्दक को भी, कहते हैं, किर्मान मे किसी ने मार डाला। उसका सिर तस्पोन भेजा गया, किन्तु शाहशाह ने देखते ही कहा—इसका मुह देखने से भी पाप लगता है इसे तुरन्त तिग्रा मे फेक दो। हा, उसे तिग्रा मे फेंक दिया गया। अकामेनू का अवतार थू।

—तो अब इस्तख् मे बिल्कुल शान्ति है?—पुरुष ने पूछा।

—पूरी शान्ति है। बारह वर्ष बाद इस्तख् का दिन फिर लौटा है फ़र्जन्द कल देखना। इस्तख् बडा सुन्दर है। मैं तुम्हे कष्ट दे रही हू, क्यो?

—नही, हमे कोई कष्ट नही—स्त्री ने कहा।

—नही, मैं ज्यादा बोलती हू। तुम थके हो, अब सो जाओ, कल भगवती का दर्शन करने जाना है।

वृद्धा चली गई। दासी दीनक भी यात्रियो के बिस्तर-प्रावरण को ठीक-ठाक करने चली गई। यात्री भी सोने की तैयारी करने लगे।

× × × ×

इस्तख् मे अनाहिता का मन्दिर कब बना, यह पूछने पर सभी शपथ खाने को तैयार थे, कि जब अभी पृथ्वी और आकाश, जल और थल नही तैयार हुए थे, तभी से भगवती यहा आकर विराजमान है। मन्दिर के वैभव के बारे मे क्या कहना है, जब कि पौने तीन सौ वर्षो से अयरानी साम्राज्य की सारी सम्पत्ति अनाहिता की सम्पत्ति मानी जाती रही है। अर्तक्षत्र का पिता पापक अनाहिता का प्रधान पुरोहित था, इसका अर्थ यह नही कि उसके पुत्र के शाहशाह होने के बाद ही से भगवती की महिमा बढी। अनाहिता उससे बहुत पहले से प्रसिद्ध थी। पापक (बाबक) का वश अनाहिता का पुरोहित था, इसलिए पार्थिय वश को

पराजित कर सासानी वश की नीव रखने मे पूर्वजो का यह पद अर्दशीर के लिए बहुत सहायक सिद्ध हुआ। इसीलिए, कोई आश्चर्य नही, सासानी वश ने अपने साम्राज्य को अनाहिता का प्रसाद माना। अनाहिता का विशाल मन्दिर अपने सौन्दर्य और वैभव मे अद्वितीय था। देवी के लाए सैकडो विशाल पाषाणस्तम्भो पर मन्दिरशाला की छत खडी थी। बेल-बूटो, पशु-पक्षियो और स्त्री-पुरुषो की सैकडो मूर्तियो से इमारतो को अलकृत किया गया था। हर एक सासानी-शासक ने मदिर को बढाने और सवारने मे एक दूसरे से होड लगाई थी। अर्दशीर के बाद शापूर प्रथम ने, जिसे सुन्दर विशाल इमारतो को बनाने का भारी शौक था, अनाहिता-मन्दिर को विशाल रूप दिया। तीनो शापूरो, पाचो बहरामो, तीनो होरमुज्दो ने मन्दिर मे नई-नई इमारतें जोडी। यज्दगर्द द्वितीय ने अनाहिता की पूजा मे जरासी कसर कर दी, कहते हैं इसी के कारण केदारी हूणो के हाथो उसे प्राण खोने पडे।

अनाहिता का मन्दिर मन्दिर नही, एक पृथक नगर था। मुख्य मन्दिर का विशाल दरवाजा सोने-चादी का बना था, फिर वहा के बर्तनो आभूषणो और दूसरे समानो के बारे मे क्या पूछना है? भगवती के मन्दिर के भीतर जाने से पहले लोग अपने मुह मे कपडे की पट्टी (पताम) बाध लेते थे जिसमे उनकी अपवित्र श्वास देवी तक न पहुचने पाए। द्वार की रक्षिकाए, मन्दिर की परिचारिकाए नगी रहती, क्योकि अनाहिता स्वय दिगम्बरा थी। मन्दिर के बीच मे उसकी द्विभुज मूर्ति बडी सुन्दर बनी हुई थी—पैरो और हाथो मे मणि-जटित सुवर्ण-भूषण, गले मे एक महार्घ रत्नावली सिर पर सुन्दर ढग मे सवारा केश-विन्यास, सचमुच अनाहिता की प्रतिमा बडी मोहक थी। उसकी त्रिभगी मूर्ति को देखकर माहपत् ने कहा—मूर्ति नग्न तो है, किन्तु किसी महान कलाकार ने इसका निर्माण किया है। बाए हाथ मे फल और भोजन से पूर्ण थाली और दाहिने मे पुष्प-गुच्छ कितना सुन्दर बनाया गया है, फिर इसका बाया भिवर और दाहिना उठा चरण कितना सजीव है? इतनी भावपूर्ण त्रिभगी-मूर्ति ग्रयरान मे देखने को कहा मिलती है? लेकिन ये परिचारिकाए नग्न क्यो है?

—भगवती नग्न है, तो परिचारिकाओ को भी नग्न होना चाहिए—स्त्री ने कहा।

—परिचारिकाए मानो सजीव अनाहिताए है। इनके कुटलित लम्बे बाल,

सन्तुलित शरीरावयव तथा कोमल ⁊ दालान के बीच फूलों से घिरा एक जल-
प्रभाव से प्रभावित हुए बिना रहेगा ' खुली थी, जिसकी बगल से एक ओसारा
देश से चुनकर लाई इन तरुणियों के भ्र॰ भरी बड़ी-बड़ी कोठरियां थी। कोठ-
क्या आवश्यकता ? यह दस नही, बीस नह।ीच बैठने की वेदिका थी। मकान
मानो रूप की आपणवीथि सजी हुई है। को स्वच्छता के साथ-साथ घर

—लेकिन मुझे तो लज्जा आती है—स्त्री ने ग्श के साथ जाड़ा-गर्मी की
दूर गई देखकर कहा—यह निर्लज्जता है, यह पापाच।
क्या धर्म इतना पतित हो सकता है ? क्योंकि अपने व्रत के

—धर्म के पतित होने की बात मत कहो। मैंने इससे ⁽न-पूजन करना था।
देखे हैं। यहां कम से कम सुन्दर कला तो है। यवन कलाकार शाली मकान उन्हे
सौन्दर्य को अंकित करने के लिए कितनी ही बार नग्न शरीर को पाद इसके अपने
पित करते हैं, किन्तु मैंने तो हिन्द मे मनुष्य के नग्न शिश्न को बिल्कु॰ ढूढ दिया
रूप मे उत्कीर्ण देखा है। हां, शरीर का और कोई अवयव नही, केवल मे उन्हे
क्या वह मनुष्य की पाशविक प्रवृत्तियों के जगाने का स्पष्ट आयोजन नही है गती

—यदि ऐसा है, तो वह मनुष्य का चरम पतन है। मैं तो यहां इस निज।-
नग्न मूर्ति और इन सजीव नग्न परिचारिकाओं को देखकर लज्जा के मारे धरती
मे गड़ी जा रही हू। क्यों किसी को ख्याल नही आता ?

दोनों यात्रियों के दर्शन-पूजा के समय कल की वृद्धा भी आ पहुची थी। वह अपने यजमानों को लेकर मन्दिर के भीतर गई। दोनों ने उपहार चढ़ा भक्ति-भाव से अभिवादन किया। वृद्धा, दूसरी परिचारिकाओं और स्वय मन्दिर के हेरपत (महत) ने मन्त्र और स्तोत्र पढ़ा। भगवती का आशीर्वाद ले दूसरे छोटे-बड़े मन्दिरों तथा पास के विशाल अग्नि मन्दिर मे चदन-काष्ठ और दूसरी सुगंध सामग्री चढ़ा उन्होंने पूजा-विधि समाप्त की। लेकिन अभी मदिर के भीतर बहुत सी देखने की चीजें थी।

निवास-स्थान पर लौटकर माहपत ने अपनी सहचरी से कहा—अनाहिता का मदिर और उसका वैभव सासानी राज-वैभव से किसी प्रकार कम नही है, और अनाहिता निश्चय ही सासानी वंश के वैभव की रक्षिका है। कितने तीर्थ यात्री होंगे, कितने दूर और नजदीक से आने वाले दर्शक होंगे, जो विशाल मदिर और उसकी हरएक कलापूर्ण चीज को देखकर मुग्ध न होते होंगे।

पराजित कर सासानी वश की नीव रखने मे और सजीव परिचारिकाओ की
बहुत सहायक सिद्ध हुआ । इसीलिए, को
साम्राज्य को अनाहिता का प्रसाद म क प्रति असतोष प्रकट करना चाहती हो,
सौन्दर्य और वैभव मे अद्वितीय था । र लिया, उस पर इस प्रकार परदा डाल
मन्दिरशाला की छत खडी थी । जस भारतीय नग्न लिग का दर्शन करने जाते है,
मूर्तियो से इमारतो को अलक
को वढाने और सवारने , ख्याल हुए विना नही रह सकता, चाहे उस भक्ति-
शापूर प्रथम ने, जिसे मा जाए । अनाहिता के मदिर मे कौनसा पुरुष होगा, जो
हिता-मन्दिर को ि देख के विना मनोविकार लाए रह जाएगा ? मै तो सम-
हारमुज्दो ने मनु सवसे निम्नकोटि की भावनाओ को उभाडने के लिए ही धर्म
की पूजा मे जाल पसारा है ।
उस प्राण किन, यह न समझो, कि यह मगोपतो की अपनी वनायी भगवती है ।
पुरानी भगवती है, जो तिग्रा और फ्रात की उपत्यकाओ मे आज से
वि हजार वर्ष पहले भी पूजी जाती थी । मगो की आग-पानी-सूर्य की पूजा
के सामने फीकी पडने लगी थी, इसीलिए उन्होने अनाहिता को स्वीकार किया,
हुर्मज्द। और द अम्सास्पन्तान् के वरावर समझी जाने लगी । आज वहुमन,
वहिश्त, क्षत्रवीरिय, अर्मायती, ह्वर्तात्, अमरतात् और स्पेन्तामेनू सभी की
ति अनाहिता के सामने फीकी पड गई है ।

—मत इतनी प्रशसा करो । मुझे तो यह मनुष्य के विवेक-चक्षु मे धूल
झोकना-सा मालूम होता है ।

—धूल झोकना ही नही, किन्तु मै तो भारत के पुरोहितो के धूल झोकने
के मुकावले मे इसे कम कहूगा, साथ ही यहा कुछ कला भी है ।

८

मानव

पाच महीने वाद तीर्थ-यात्री इस्तख् के एक दूसरे घर मे दिखाई पडे । बाहर
कच्ची चहारदीवारी के भीतर घुसते ही फूलो और फलो का वाग था । अगूर,

सेव, अनार अब पक रहे थे। द्वार और दालान के बीच फूलो से घिरा एक जल-कुण्ड था। दालान की पतली खिडकिया खुली थी, जिसकी वगल से एक ओसारा चला गया था। उसकी दोनो तरफ साफ सुथरी बडी-बडी कोठरिया थी। कोठ-रियो के अन्त मे फिर फूलो की क्यारियो के बीच बैठने की वेदिका थी। मकान के देखने से मालूम होता था, कि उसके स्वामी को स्वच्छता के साथ-साथ घर की उपयोगिता का पूरा ध्यान था, वायु और प्रकाश के साथ जाडा-गर्मी की कठिनाइयो का भी ख्याल था।

यात्रियो को इस घर मे आने की आवश्यकता थी, क्योकि अपने व्रत के अनुसार उन्हे एक वर्ष तक प्रतिदिन भगवती अनाहिता का दर्शन-पूजन करना था। वुढिया की सहायता से ही किसी विस्पोह् (सामन्त) का यह खाली मकान उन्हे मिला। वुढिया चाहती थी, कि दोनों यात्री उसके वेटे के नही बल्कि उसके अपने यजमान रहे इसीलिए पुत्र के आने से पहले ही उसने इस मकान को ढूढ दिया था। यात्री अव यहा अधिक निश्चिन्तता से रह रहे थे। वुढिया के घर मे उन्हे परतन्त्रता-सी मालूम हो रही थी जो पुत्र और बहू के आ जाने पर बढ जाती और अवश्य उनका अधिक समय साथ मे रहना अनुकूल न पडता। अना-हिता-दुख्त को यह भवन और अधिक पसन्द आया था।

दोपहर के समय पिछले आगन की वगल की कोठरी मे रेशमी कालीन और मखमली मसनद के सहारे बैठी अनाहिता किसी चिन्ता मे मग्न दीख पडती थी। आज वह उसी वेष मे नही थी, जो कि पहले दिन इस्तख् मे आने के समय था। उसका पायजामा रेशम का था, जिसके एक छोर मे झालर निकली हुई थी, ऊपर उरोजो के पर्यन्त को प्रदर्शित करता रेशमी कचुक और थोडे से किन्तु सुन्दर आभूषण भी थे। केशो को घुघराली कई पक्तियो मे सजाकर सिर के पिछले भाग मे उनका जूडा वधा था। आखो मे सूक्ष्म अजन और ऊपर पतली भौहो की कमान चढी हुई थी। अनाहिता के स्वाभाविक रक्त-अधर और भी अधिक अरुण थे। विशेष प्रयत्न के साथ आज उसने अपने को सजाया था, इसमे सदेह नही, किन्तु उसके चेहरे पर कही हर्ष का चिह्न नही था। मालूम होता था, उसके भीतर कोई प्रतिकूल तूफान उठा हुआ है, आखें भीगी नही थी, लेकिन उनसे करुणा वरस रही थी।

माहपत वाहर से धमी-धमी भीतर आया। यद्यपि उसने अपने पैरो को

बहुत दबाने की कोशिश नही की, लेकिन कोष्ठक के द्वार पर पहुचकर परदा हटाने के समय तक अनाहिता को पता नही लगा। उसकी वह अवस्था देखकर माहपत का खिला चेहरा मुरझा गया। वह भीतर की ओर बढा, इसी समय अनाहिता की दृष्टि उसपर पडी। वह एकाएक खडी हो गई। उसे देखते ही उसके चेहरे की मुरझाहट तेजी से दूर होने लगी और चाहे पूरा रंग न लौटा हो, किन्तु अब हलकी स्मिति उसके मुख पर फैल गई। माहपत पहिले के चेहरे को देख चुका था। वह अनाहिता के कधे पर हाथ रखकर खडा हो गया। अनाहिता ने अपने सिर को उसकी छाती पर लगा दिया। माहपत ने परिश्रम से बनाए हुए केश-कुण्डलो को बिगाडे बिना उसके सिर पर धीरे-धीरे हाथ फेरते उसकी आखो की ओर बडे ध्यान से देखा। उसकी आखो मे अपनी चिन्ता और करुणा को उतरती देख अनाहिता कुछ अधिक सचेतन हो उठी। माहपत ने उसके इस प्रयत्न को भाप लिया और अपने स्वर को और मधुर, आकृति को और सहृदय करते मसनद के सहारे अपनी सहचरी को बैठाकर कहना शुरू किया—हा, इसके लिए आश्चर्य करने की आवश्यकता नही, यदि इस दारुण अवस्था मे तुम्हारा ८५ विचलित हो उठे और तुम्हारे, चेहरे पर उसकी छाया उछल आए।

—लेकिन माह! मैं ऐसी अवस्था न आने देने के लिए बहुत प्रयत्न करती।

—और तुम अधिकतर उसमे सफल भी होती हो। ऐसे तो मानव का पत्थर का बना नही होता।

—ठीक कहा माह! मानव का हृदय पुष्प से भी अधिक कोमल है लेकिन आत्मसयम और धैर्य का अपनाना जरूरी है, उसके बिना कोई काम नही हो सकता। हमारा काम तो और भी कठिन है। हमे आज छ महीने उम्नग मे आए हुए, किन्तु आगे का कोई रास्ता नही मालूम होता—अनाहिता ने अतिम वाक्य को कुछ उदासभाव मे कहा।

—आगे का रास्ता ठीक है, किन्तु अभी थोडी प्रतीक्षा करनी होगी। साल भर बीतने को आए, जबकि वह भीषण तूफान हमारे सिर से गुजरा था। पैर भूमि से उखड गया था, किन्तु अब हम उसे जमीन पर पडा पाते है। हमारी भारी क्षति हुई है, किन्तु सर्वनाश नही हुआ है।

—सर्वनाश नही हो सकता। हमारा उद्देश्य महान है, इसको उठाने वा।

कधे सबल प्रौर अधिक हैं।

महापत ने अनाहिता को और भी अधिक वक्षस्थल से लगा के, उसके सुगन्धित केशो को आघ्राण करते हुए कहा—सबल होने मे क्या सन्देह है। तुम्हारे इस वेष को देखकर क्या किसी को ख्याल भी हो सकता है, कि यह विलास के लिए नही बल्कि किसी कठोर कर्तव्य को कार्य रूप मे परिणत करने की प्राथमिक तैयारी है!

—हा, माह! पूर्व जीवन मे साज-सिंगार करने के लिए मजबूर थी, तो भी मैं उसे बहुत विनीत वेष की सीमा तक ही रखती थी। लेकिन आज मैं कितने प्रयोग कर रही हू।

—प्रयोग करने की आवश्यकता नही है, अनाहिता! मैं किसी भगवान या अहुर्मज्द पर विश्वास नही रखता, आखिर उसने मानव के साथ कौन-सी नेकी की है। विश्वास रखता तो कहता, विधाता ने अपने लाखो बरस के अभ्यास के बाद तुम्हारे रूप को निर्माण करते हुए अपनी कला को चरम सीमा पर पहुचाया। तुम्हारा स्वाभाविक रक्त-अधर, कोमल अरुण कपोल किसी अधर-राग, किसी मुखचूर्ण की आवश्यकता नहीं रखता। तुम्हारे चापयष्टि सदृश भ्रवो के लिए किसी बनाव सिंगार की आवश्यकता नही, तुम्हारे विशाल मृग-नयनो मे किसी अजन का काम नही, तुम्हारे तरगित स्वर्ण केशो मे घुघराली अगूठिया केवल पुनरुक्त मात्र हैं।

—मैं भी बनाव शृगार की आवश्यकता नही समझती, किन्तु फिर भी अविश्वास मन मे आने लगता है, काम कितना भारी है?

माहपत ने अनाहिता के कधे और कबरी को हाथ से सहलाते और भी घनिष्टता का परिचय देते कहा—अनाहिता! तुम्हे अविश्वास करने का कोई कारण नही है। तुम्हारा रूप और उसकी असाधारण सज्जा हमारे भारी काम के लिए पर्याप्त है। सगीत और नृत्य पर भी इतने अधिक परिश्रम की आवश्यकता नही है। तुम्हारा मधुर कण्ठ सगीत के बिना भी सगीत-सा मालूम होता है। समय भी हमारे अनुकूल हो रहा है।

अनाहिता ने अपनी अधीरता हटाने के लिए अपनी आखो को माहपत की आखो के नजदीक लाकर पूछा—क्या समय आ गया? क्या अब और अधिक प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नही है? चिन्ता मत करो, मैं उतावली नही

होऊगी, यदि एक नही दो साल और प्रतीक्षा करनी पड़े, तो भी मैं उसे खुशी से करूगी। केवल यह मालूम हो जाना चाहिए, कि काम का अवसर आ रहा है।

—निश्चिन्त रहो अनाहिता! काम का अवसर आ गया है। तूफान को बीते सालभर होने को आ रहे है, उसके रुकने पर सदेह का प्रवाह चला। हमारे शत्रु अब धीरे-धीरे निश्चिन्त होते जा रहे है। हमने समझा कि हमारे सहकारी सभी नष्ट कर दिए गए—कितने ही जीवन से, और कितने ही विचारो से नष्ट हो गए, किन्तु बात यह नही है, इसी इस्तख्र मे अपनी प्रतिज्ञाओ पर डटे हजारो नर-नारी विद्यमान है। एक नही पचास तूफान भी आकर उनका उच्छेद नही कर सकते। यह विचार अमर है, यह आदर्श महान है, यह जन-कल्याण के लिए सर्वोत्सर्ग की भावना है, इसे उच्छिन्न करने की शक्ति किसी मे नही है। दीनक को तुम देख रही हो न, उस दिन इस्तख्र मे आने पर वह हमे कैसी मालूम हुई थी ?

—साधारण, निर्बुद्धि ग्रामीण लडकी-सी।

—हा, हमारे लोगो ने इसी तरह शत्रु के प्रहार को विफल किया। अब ।धी की धूल के जमीन पर बैठ जाने पर सभी बाते साफ-साफ दिखाई पड हैं। हमारे भाई कही चुपचाप नही बैठे है, सभी हमारी तरह आगे के लिए ।ार कर रहे हैं। शत्रु के निश्चिन्त हो जाने की आवश्यकता थी, अब वह भी गई है।

—अभी कितने दिन और हमे इस्तख्र मे रहना होगा ?

—तुमने बुढिया से कह ही रखा है कि हमारा व्रत-नियम अनाहिता के मन्दिर मे एक साल तक का है।

—जाने दो यह बात, लेकिन माह! बुढिया ने अनजाने ही हमारी बहुत सहायता की।

—अनजाने, किन्तु नि स्वार्थ भाव से नही। इतनी दक्षिणा देने वाला कोई यजमान बुढिया को नही मिला होगा। और सारी दक्षिणा बुढिया अपने पास रखती है। बेटे-बेटी अर्थात पुत्र और वधू को गध नही पहुचने देती, देखा न, मेरा और तेरा आने का प्रभाव ?

—कुछ भी हो माह ? बुढिया ने हमारी सेवा करने मे कोई कसर नही उठा रखी। ऋतु का प्रथम फल हमारे पास पहिले आता है। इस्तख्र की कोई

भी हमारे उपयोग की चीज ऐसी नही है, जिसे बुढिया ने हमारे पास नही पहु-चाया। हा, मुफ्त नही, ड्योढे दाम पर, किन्तु उसके तो हम अभ्यस्त है। जब वह कवात् और उसके बेदीन साथियो की बात कहने लगती है, तो सुनना असह्य होने लगता है, लेकिन हमारे प्रतीक्षा के समय को काटने मे बुढिया की सहायता उपयोगी सिद्ध हुई।

—और हमारी प्रतीक्षा अब समाप्त होने पर आई है, हमारी तपस्या अब फलवती होने जा रही है। पतझड से पहले-पहल हमे इस्तख़् छोड देना है। देखो वह बुढिया की आवाज बाहर के बाग से आ रही है। दीनक को वह किसी फूल के टूटे या किसी पात्र के औंधे होने के लिए झिडक रही है। चलो चले मन्दिर मे मध्याह्न-पूजा के लिए।

—अब तो मन नही करता, आत्मगोपन बडा कठिन काम है।

—बडी कठिन तपस्या है। लेकिन अब वह अन्त पर आ गई है। चलो, रुमाल सिर पर डालो।

कुछ ही क्षणो मे अनाहिता और माहपत बुढिया के पीछे-पीछे मन्दिर की ओर चल पड़े। गूगा कुबडा पूजा की सामग्री लिए उनके पीछे पीछे चल रहा था।

अनाहिता आज बहुत प्रसन्न दीख रही थी, क्योकि माहपत की सूचनानुसार उनकी प्रतीक्षा और चिन्ता का इसी सप्ताह अन्त होने वाला था। उसने इधर-उधर की बातें करते हुए अन्त मे अन्दर्जगर की दूरदर्शिता और अपार दया की प्रशसा के साथ समाप्त करते हुए कहा—सचमुच माह! कितनी परस्पर विरोधी बाते मैंने अपनी आखो से देखी, जिन्हे आखो से नही देखती, तो विश्वास करना भी कठिन होता। सारे जीवन को व्यसन मे बिताए, विलास मे पैदा हुए और पले लोग कैसे बडे से बडे कष्ट और उत्सर्ग के लिए तैयार हो गए?

—हृदय मे आग लगा दो, फिर अपने ही आदमी आग को बुझाने के लिए दौडता फिरेगा।

—ठीक कहा, अन्दर्जगर की वाणी कितनी मधुर होती है, मालूम होता है हजारो घडे मधु घोलकर तैयार की गई है, किन्तु वही पत्थर जैसे हृदय को पिघला-मोम सा नरम कर डालती है। कवात् को देखा न, दो साल भर के भीतर ही अन्दर्जगर की शिक्षा ने उसके जीवन को कहा से कहा पहुचा दिया?

—हा, अनाहिता ! उसने कडी से कडी परीक्षा को सफलता के साथ पास किया।

—और कितनी भविष्यद्वाणिया की जा रही थी ? जो हमारे विरोधी नही थे, वे भी कह रहे थे कि वामदात्-पोह्ल स्त्री-पुरुषो की समानता और उनके सम्बन्ध मे अधिक स्वच्छन्दता स्वीकार करके भूल कर रहा है, इससे वह लोगो को लम्पट बना देने भर की ही आशा रख सकता है।

—उनकी धारणा गलत थी , वे नही समझ पा रहे थे, कि बाहरी दबाव से स्वीकार किए हुए से अपने मन से स्वीकार किया हुआ नियम अधिक दृढ और आचरणीय हो सकता है। आज के ससार मे तो भीतर कुछ और बाहर कुछ और वाली बातो का अनुसरण किया जाता है।

—हा माह, मानव-सन्तान को बचपन ही से दुहरे सदाचार का उपदेश मिलता है, बाहर से तुम कुछ और दिखाओ, वह तुम्हारे दीनदार होने के लिए पर्याप्त है, और भीतर चाहे कुछ भी करो। पहले मुझे भी समझ मे नही आता था, लेकिन अन्त मे अन्दर्जगर की शिक्षा की यथार्थता प्रकट हुई। ससार मे दोहरे [illegible]चार की आवश्यकता नही। बाहर कुछ और भीतर कुछ और वाली बात [illegible]र मानव-जाति सदा घाटे मे रही।

—पुरुष और स्त्री को समान मानना तो बिल्कुल न्याय है। आखिर सारे [illegible]ज की भलाई के लिए जो काम करना है, उसका बोझ स्त्री-पुरुष दोनो क[illegible] पर बराबर पडता है। लेकिन स्त्री को निर्बल बनाकर रखा जाता है, उस[illegible] लता कहा जाता है, जो कभी बिना वृक्ष के सहारे नही रह सकती। तुम्ही बतलाओ, यदि लता बनकर ही तुम आज भी रही होती, तो इन जोखिम के कामो मे हाथ डालने की कभी हिम्मत होती ? स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध की स्वच्छन्दता के बारे मे हमारे शत्रुओ को बहुत कहने सुनने का मौका मिला है, किन्तु रूढियो के विरुद्ध जाने के सिवाय उसमे कौन-सी अबुद्धिग्राह्य बात है ?

—और वह स्वच्छन्दता भी तो हमारे मानसिक विकास मे सबसे ऊचे व्यक्तियो के लिए ही है ? लेकिन उसके गम्भीर अर्थ को समझना आसान नही है।

—हा, उसमे बहुत गम्भीर अर्थ है। देखती नही, राजा अपने अयोग्य पुत्र का पक्षपात करते है, जिसका परिणाम राज्य का विनाश होता है। मगोपत,

दपेह्, अस्राहपत सभी अपनी-अपनी संतानों को आगे बढाना चाहते हैं, चाहे वह योग्य हो या अयोग्य। 'मेरा-तेरा' का भाव जब तक रहेगा, तब तक ऐसा ही होता रहेगा, इसीलिए सबसे अधिक सबल और जन-कल्याण के लिए उत्तरदायी व्यक्तियों के वास्ते सन्तान में मेरे-तेरे का भाव बहुत हानिकर है।

—सुना है, राष्ट्र के कर्णधारों के बारे में यवन विचारक प्लातोन ने भी कुछ ऐसी ही बातें बतलाई हैं।

—हां, अन्दर्जगर ने कोई नई बात नहीं कही, उन्होंने बुद्ध के सैद्धान्तिक धार्मिक समाज को प्लातोन की अधिक व्यावहारिक राजनीति से मिला दिया। 'मेरा-तेरा' को पूरब और पश्चिम दोनों के विचारकों ने हानिकारक माना है। मनुष्य अपनी सारी शक्ति सारे जन के कल्याण में तभी लगा सकता है, जबकि वह 'मेरा तेरा' से ऊपर हो।

—बुद्ध ने भी मेरे-तेरे से ऊपर उठने का उपदेश दिया, प्लातोन ने भी वही किया, फिर उन्होंने अपने इस आदर्श को दूर तक ले जाने में क्यों सफलता नहीं पाई?

—शायद वह जनसाधारण पर उतना विश्वास नहीं रखते थे।

—अन्दर्जगर ने 'मेरा-तेरा' से ऊपर उठने के लिए साधारण जन तक को उपदेश दिया। उस पर उन्होंने जो विश्वास किया, उसके बारे में उन्हें धोखा खाना नहीं पड़ा, यह हमने देखा है। साधारण अशिक्षित मजूर और दास तक को हमने स्वार्थ-त्याग करते देखा, दूसरों के लिए हंसते-हंसते प्राण देते देखा। क्या यह उत्सर्ग लम्पट निम्नकोटि के मानव के बस का हो सकता है?

—नहीं, अनाहिता! इस तूफान ने बतला दिया, कि अन्दर्जगर की शिक्षा सुन्दर ही नहीं, व्यवहार्य्य भी है। 'मेरा-तेरा' का भाव बुद्ध ने केवल अपने साधुओं तक के लिए व्यवहार्य्य समझा और उन्हें स्त्री के अदर्शन करने की बात कही। मानो स्त्री पुरुष के लिए सांप है, जिसके डसे को जीवन नहीं मिल सकता। अन्दर्जगर ने बतलाया, कि मानव में कुछ अंश पशु के भी हैं, जो उससे सर्वथा हटाए नहीं जा सकते, क्योंकि मानव भी एक प्रकार का पशु है। मानव को भी आहार की आवश्यकता होती है, क्योंकि उसके बिना वह शरीर को धारण नहीं कर सकता। मानव को भी निद्रा की आवश्यकता होती है, क्योंकि उसके लिए सोना जरूरी है। मानव को भी आत्मरक्षा के लिए चिन्ता करने की आवश्यकता होती

है। मानव भी स्त्री-पुरुष के स्वाभाविक-आकर्षण से मुक्त नही रह सकता, न उसकी आवश्यकता ही है। हा, यह सब होते हुए भी कुछ और भी बाते है, जो मानव को पशु से ऊपर उठाती हैं। यदि वह न हो, तो अवश्य मानव को पशु मानना पडेगा। अन्दर्जगर ने बतलाया कि जन-जीवन के प्रति मन मे अपार सहानुभूति, अपार करुणा और वाचिक तथा कायिक तौर से उनका अपने जीवन मे व्यवहार, यह बातें हैं, जो मानव को पशु से ऊपर उठा देती है।

—हा, माह! मैंने अपने सामने मनुष्य को पशु से बहुत ऊचे उठते देखा। अन्दर्जगर के प्रथम श्रेणी के अनुयायी स्त्री-पुरुषो ने विवाह-प्रथा का त्याग किया, उन्होने आपस मे समानता और 'मेरा-तेरा' बिना सम्बन्ध स्थापित किया। यदि यह केवल कामवासना और विलासिता के लिए उन्होने किया होता, तो क्या उस महान आत्म-त्याग का उन्होने परिचय दिया होता, जिसे अयगान के कोने-कोने मे लोगो ने देखा?

—अनाहिता! अन्दर्जगर ने, यवन-विचारक प्लातोन ने तथा हिन्दू के ऋषि बुद्ध ने 'मेरा-तेरा' को सबसे बडी व्याधि समझा था, किन्तु उसके त्याग का जीवन मे व्यवहार हमारे समय मे ही हो पाया। इस भयकर सकट ने यह [illegible] कर दिया, कि मानव और पशु के कितने ही उभय-सामान्य गुणो के रहते मनुष्य का स्थान बहुत ऊचा है। अन्दर्जगर के ये अनुयायी 'मेरे-तेरे' [illegible] [illegible] को दिल से भुला चुके हैं, इसीलिए उनके भीतर आपस मे अधिक आत्मी-[illegible] देखी जाती है—बन्धन की आत्मीयता नही मुक्ति की आत्मीयता, स्वार्थ की [illegible]यता नही—विश्व-बन्धुत्व की आत्मीयता। सकीर्ण 'मेरे-तेरे' को छोडकर [illegible] जो यह आत्मीयता आती है, उसके कारण हम ईर्ष्या और द्वेष के वशीभूत नही होते। हम मानव की निर्बलताओ मे उसकी महानता को पहिचानते है। आखिर दूसरे दीन-धर्म वालो के विचारानुसार स्त्री-पुरुष का जो उज्ज्वल सम्बन्ध बतलाया जाता है, क्या उसमे स्त्री को पुरुष की सम्पत्ति होने का विचार नही काम करता?

—माह! इसे तो हम स्त्रिया ही अच्छी तरह अनुभव करती हैं। पुरुष स्त्री को सम्पत्ति जैसा मानते हैं। इस सद्-आचार और भव्य-आदर्श मे स्त्री के अपने व्यक्तित्व और अधिकार का कही पता नही है।

—अन्दर्जगर मानव कीसारी परतन्त्रताओ पर कुठाराघात करना चाहते

है। उन्होने एक ऐसे समाज को पृथ्वी पर लाने का सकल्प किया है, जिसमे पशुओ के गुण कम से कम और मानव के गुण अधिक से अधिक हो। वह व्यवहारवादी हैं, इसीलिए मानव को पृथ्वी के जीवन से सर्वथा विच्छिन्न करने की बात नही करते। मैं समझता हू, अन्दर्जगर के मार्ग के अनुसरण मे मानव की सर्वतोमुखीन प्रगति हो सकती है। स्त्री और पुरुष का ही भेद-भाव नही, पुरुष-पुरुष का भी जो अलग-अलग वर्ग और अलग-अलग स्वार्थ स्थापित है, उसे भी वह उखाड फेंकने की शिक्षा देते हैं। अयरान मे देखती नही, जातियो की कितनी जकडबन्दी है ?

—मेरा तो कभी-कभी दम घुटता-सा मालूम होता है। मगो का पुत्र मग होगा, पुरोहित होगा, दातवर (न्यायाधीश) होगा और विस्पोह्ल के पुत्र विस्पोह्ल होगे, सेना सचालन करेगे, वचुर्क, दपेह्ल और दूसरे वर्गो का भी काम और स्थान नियत है, जो जिस वर्ग मे पैदा हुआ, वह उससे बाहर जा के कोई व्यवसाय, कोई कार्य नही कर सकता। ऐसा तो कही नही होगा माह !

—नहीं, अनाहिता ! इससे भी गया बीता जातिवाद हिन्द मे है, वहा भी जन्म से ही व्यवसाय बटे हुए हैं। तुम्हारे विस्पोह्लो, अतरवनो, दपेह्लो और अजातो की भाति हिन्द मे भी क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र, अतिशूद्र आदि भेद हैं। यहीं की तरह वहा भी न वह एक दूसरे के साथ व्याह कर सकते हैं, न एक दूसरे का व्यवसाय स्वीकार कर सकते हैं, यहा तक कि एक-दूसरे के हाथ का भोजन करने की भी उन्हे आज्ञा नहीं है। अयरान मे तो शाह विशेष अवस्था मे किसी की जाति को बदल सकता है, किन्तु वहा नियम और भी कडे है।

अनाहिता ने लम्बी सास खीचते हुए कहा—मानवता को बहुत दूर तक जाना है।

—लेकिन जाना अवश्य है और ले जानेवालो से मानवता कभी वंचित नहीं होगी।

९

यात्रा

कारेन नदी के तट पर एक छोटी-सी पान्थशाला थी, जहा शाम के वक्त कितने ही यात्री दिन भर की यात्रा के बाद विश्राम ले रहे थे। तस्पोन से यद्यपि इस्तग् जाने वाला रास्ता सीधे यहा से नही जाता था, किन्तु भारत और चीन की तरफ जाने वाले वणिक-सार्थ कभी-कभी इसी रास्ते दक्षिण से उत्तर जाते थे। मार्ग के अनुरूप ही यहा एक छोटी-सी बस्ती थी। पान्थशाला मे पथिको के ही रहने का स्थान नही था, बल्कि उनके पशु, घोडे, खच्चर, गदहे और ऊट भी यहा ठहर सकते थे। भूमि पहाडी थी, और अयरान के अधिकाश पहाडो की भाति यहा का दिगन्त भी वृक्ष-वनस्पति-शून्य था। अधिक धनिको का आना-जाना इधर से कम ही होता था, और आने पर भी वह अपना तम्बू साथ लाते थे, छोटे राज-कर्मचारी गाव के कत्स्वता के घर के मेहमान होते। दूसरो के लिए पान्थशाला मे कुछ कोठरिया अच्छी थी। शाला के बाहर भी कुछ खुली कोठरिया थी, जिनमे गरीब और भिखमगे उतरते थे। लेकिन इनका उपयोग वह बर्फ या वर्षा के ही समय करते थे, नही तो सराय का खुला आगन उनके रहने का स्थान था। गरीब पथिको के तीन-चार छोटे-छोटे गरोह आज वहा डेरा लगाए हुए थे। उन्होने रास्ते की कटीली भाडियो, कुछ लीदे और गोबर का ईधन जमा करके आग जला रखी थी। यद्यपि अभी जाडे का आरम्भ नही हुआ था, किन्तु पतभड समीप आ रहा था, वृक्षो की पत्तिया पीली पड चुकी थी, इसलिए सायकाल को आग या धूए के किनारे बैठना सह्य था। एक जगह आग के किनारे एक स्त्री और दो पुरुष बैठे हुए थे। इसी समय एक चीथडे के कचुकवाला तीसरा व्यक्ति भी आ गया। उसने आज्ञा माग के अपने पीठ का छोटा गट्ठर भूमि पर रखा पास मे अपनी कमली बिछा दी। आदमी के उच्चारण से ही पता लग गया, कि वह अयरानी नही है।

पहले के तीनो व्यक्तियो मे एक तरुण ने, अपने मैले कचुक के कमरबन्द को ढीला करते हुए कहा—भाई! जान पडता है कि तुम भी हमारी तरह से ही परदेशी हो। किधर के रहने वाले हो, यदि किसी प्रकार की बाधा न हो तो बतलाओ।

आगन्तुक मानो पहले ही से इसके लिए तैयार था। अपनी दाढी के भूरे और सफेद वालो को पीछे की ओर हटाते उसने कहा—हा, तुम्हारा अनुमान ठीक है, मैं सोग्दी हू। वर्षो से अयरान मे भटक रहा हू। मेरे लिए जैसा सोग्द वैसा ही अयरान, न वहा कोई अपना और न यहा ही।

सोग्दी ने वात करते वक्त कचुक के सामने के भाग को खजलाने के वहाने इस तरह हटाया कि पहले पुरुष ने वहा एक लाल रग का चिह्न देख लिया। स्त्री ने भी आख के सकेत से अपने साथी का ध्यान आकृष्ट कर दिया। पुरुष ने सोग्दी के साथ वार्त्तालाप जारी रखते हुए कहा—दुनिया मे कब किसका ठिकाना है। घर द्वार की बात ही क्या राज्यो और राजवशो को भी बिगडते देर नही लगती। तरुण ने पास पडे झोले मे से एक मोटी रोटी और कुछ अगूर बाहर करके कपडे पर रखते हुए कहा—जान पडता है, आज तुम्हे बहुत दूर से आना पडा है, भूख लगी होगी, यदि आपत्ति न हो, तो कुछ खा के पानी पीयो। रात अपनी है, बात होती रहेगी। हा, हमे उत्तर की ओर जाना है, अगर उधर चलना हो, तो हम तीन से चार हो जाएगे।

सोग्दी पुरुष आख बचाकर बात करने वाले तरुण और उसके साथी की स्त्री के चेहरो की ओर बहुत ध्यान से देख रहा था। उसने वात मे अधिक व्यवधान न डालने के लिए कहा—बहुत धन्यवाद है बिरादर! आज मैं डेढ दिन के मार्ग को एक दिन मे पूरा कर यहा पहुचा हू। बेसरो-सामान के यात्री के लिए कहा समय पर खाना-पीना, सोना-बैठना मिलता है? मुझे यहा से गुन्देशापूर की ओर जाना है। देर हो गई, नही तो आज ही पहुच जाता, लेकिन मेरे लिए जैसे ही आज वैसे ही कल।—कहते सोग्दी ने अपनी गठरी मे से एक चमडे का कुतुप बाहर किया—कुछ सूखे मेवे, भुने गेहू और यह एक कुतुप मदिरा परसो एक देह-यक् (गाव के नम्बरदार) ने दी थी। मित्रो के इतने सुन्दर समागम के आनन्दोत्सव मे सोग्दी भिखारी की यह भेंट स्वीकृत हो।—कहते सोग्दी भिखारी ने अपने नये साथियो के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना अपना काठ का चषक निकाला और उसे ताजा मदिरा से आधा भर के कुछ घूटें पी भी गया।

स्त्री ने तीन लकडी के प्याले रखकर उनमे मदिरा डाल दी और झोले मे से एक रान मास का बाहर करते हुए कहा—यदि आप थोडा धीरे-धीरे भोजन करे तो मैं अभी इस वत्सतर मास-खड को तैयार कर देती हू।

सोग्दी भिखारी ने अपने सारे चेहरे को प्रसन्नता से भरते हुए कहा—लाल द्राक्षी मदिरा और वत्सतर-मास, स्वर्ग में भी इनसे बढ़कर कोई भोजन नहीं मिलता खाहर ! हम अवश्य प्रतीक्षा करेंगे।

स्त्री ने, जिसके चेहरे पर पड़ी मैल की रेखाओं ने उसके सौन्दर्य और आयु को छिपा रखा था, अपने पतले मलिन हाथों में छुरी लेते हुए कहा—आग धीरे-धीरे तैयार हो रही है, निर्धूम होने में देर होगी। जल्दी चाहते हैं तो नमक डालकर उबाल दूं, सिरका भी हमारे पास है, या चाहे तो आग में भून दूं।

लोगों की सलाह मास उबालने के लिए हुई। स्त्री ने पतीली में मास के टुकड़ों को डाल के उसे सामने बलती आग पर तीन पत्थर के सहारे रख दिया और वह भी बात में सम्मिलित हो गई। सोग्दी कह रहा था—खानाबदोशी का जीवन बहुत कठोर होता है, कितनी नरम-गरम, कड़वी-मीठी अवस्थाओं से पार होना पड़ता है, लेकिन मुझे तो यह बड़ा आकर्षक और आनन्ददायक जान पड़ता है। तीस वर्ष हो गए जबकि घर छोड़ मैं बेघर हुआ।

—तो उस समय तुम्हारी आयु बहुत छोटी रही होगी बिरादर ?

—सोलह बरस का था। नीड़ उजड़ गया और पक्षी को उड़ [illegible] बहाना मिल गया। सोग्द के भाग्य में उजड़ना और बसना सदा से बदा [illegible] उत्तर के तम्बूवाले सदा उसकी ओर लालच-भरी निगाह से [illegible]।

—पहला प्रहार तो सोग्दियों के ऊपर पड़ता है—तरुण [illegible] हम तो सोग्दियों के हिम्मत की प्रशंसा करते हैं। ये घुमन्तू हम [illegible] ऊपर सोग्दियों के प्रहार को सम्भाल लेने पर पहुंचते हैं, [illegible] हमारे लिए अजेय रहते रहे। यज्दगर्द द्वितीय बहुत दिन [illegible] निहत हुआ।

सोग्दी ने एक बार आग के लाल प्रकाश में [illegible] अंगुलियों की ओर भावपूर्ण दृष्टि से देखते हुए [illegible]—सोग्दी बच्चे [illegible] के साथ तलवार से खेलते हैं। सोग्दी तरुणियां [illegible] कोमल हाथों [illegible] अंगुलियों का उतना मान नहीं, जितना फौलाद [illegible] भालने वाली भुजाओं [illegible]

स्त्री ने हाथ और अंगुली का नाम लेते ही [illegible] कंचुक की बांह में [illegible] छिपा लिया और उसके साथी ने कहना आरम्भ किया—[illegible] धन्य हैं सोग्दी [illegible] उनकी वीरता की ख्याति अयरान में भी पहुंचने लगी [illegible], असनों में भी [illegible]

सोग्द वीरो की गाथाए गाते है ।

सोग्दी ने तरुण की बात को पूरा करते हुए कहा—अर्मनी भी वीर है, जिस तरह सोग्दियो को अपने उत्तर के घुमन्तुओ से लडते रहना पडता है, वैसे ही अर्मनी वीरो को भी अपने उत्तर के घुमन्तुओ से लोहा लेना पडता है।

तरुण के साथी ने सोग्दी की ओर दृष्टि डालते हुए कहा—अर्मनी भी तो देखा होगा बिरादर ?

—देखने की बात मत पूछो दोस्त ! इन तीस सालो मे मेरे पैर मे सदा चक्कर बधा ही समझो। अर्मनी भी देखा है, इबेर भी देखा है और वहा के गगनचुम्बी हिमाच्छादित पर्वतो को भी देखा है। वैसे पर्वत तो हमारे सोग्द के पूरब मे ही मिलते है। हा, हिन्दुओ का हिमवन्त उसी तरह का सुन्दर और विशाल पर्वत है। मुझे सदा हिम से आच्छादित रहने वाले पर्वत-शिखर बडे सुन्दर मालूम होते है। उनसे भी सुन्दर उनके कटि-भाग के सदा-हरित वृक्षो की वनराजि मालूम होती है। वह मानो देखनेवालो को निमन्त्रित करते हैं, यह स्थान है, जहा मनुष्य को रहना चाहिए।

मनुष्य ही नही बगो (देवताओ) के रहने का भी स्थान वही है, लेकिन बगो के स्थानो मे सुनते है देवो और पइरिकाओ ने अड्डा जमा लिया है। बगो (देवताओ) और देवो (असुरो) का द्वन्द्व बहुत पुराना है।

सोग्दी ने सिर हिलाते हुए कहा—नही मित्र ! तुम समझते होगे, इन महान पर्वत-शिखरो, उनकी सनातन हिमानियो और चिरतन वनालियो को देवो और पइरिकाओ ने दखल कर लिया है। यह विचार ठीक नही है। मनुष्य अपने से दूर के स्थानो के बारे मे ऐसी ही सुनी-सुनाई बाते कहा करता है। मैने कोह-काफ के पूरब वाले समुद्र के बारे मे सुना था, कि उसके तट पर मुह से आग उगलने वाली पइरिकाए रहती है। मै वहा गया हू। हूणो को मानुषाद कहा जाता है, लडाई मे लूट के समय अवश्य वे भयकर रूप धारण करते है, किन्तु उन मे भी मनुष्य हृदय वाले लोग है। मै तो उनके भीतर भी घूमा हू। खजार हूणो का जन उसी समुद्र के किनारे और बहुत दूर उत्तर तक रहता है। कहते है उधर तीन महीने तक दिन ही दिन रहता है। झूठ है या साच इसके बारे मे मै नही कह सकता। मै वहा गया नही हू, लेकिन पइरिकाओ के मुह से आग निकलने की बात झूठी है। वह किसी के मुह से नही बल्कि धरती के भीतर से निकलती

है। खजार-समुद्र के पास दूर तक पहाडी भूमि है, जिसमे जमीन के भीतर से कडी गध निकलती है, कुए के पानी मे भी वही गध होती है। मैने देखा है, किसी-किसी कुए के पानी को लत्ते मे लपेटकर आग लगाने से वह जलने लगता है। इसी को दूर देशो मे जाकर पडरिकाओ (परियो) के मुह से निकलने वाली आग बना दिया गया।

तरुण ने असहमति प्रकट करते हुए कहा—तो क्या देव और वग उन दुरारोह, दुर्लंघ्य पर्वतो पर नही है? क्या वगो और देवो का युद्ध नही चल रहा है?

सोग्दी ने मुस्कराते हुए कहा—देवो और वगो का युद्ध! मुझे तो वह कही दिखलाई नही पडा। शायद वह युद्ध समाप्त हो गया, और देव पराजित हुए, वग विजयी हुए।

तरुण के साथी ने आग मे कुछ काटे डालते हुए कहा—वग विजयी हुए, तब तो ससार मे दीन के लिए अनुकूल समय आगया है।

सोग्दी ने उसके कान के पास मुह करके कहा—"हा, देरेस्तदीन के लिए।" स्वर इतना धीमा था, कि चारो ने ही उसे सुन पाया।

अब वे एक दूसरे के बहुत समीप थे।

× × × ×

अगले दिन सूर्य के अच्छी तरह उग आने के बाद गुन्देशापूर के दक्षिणी नगर द्वार से तीन पुरुष और एक स्त्री प्रविष्ट हो रहे थे।

गुन्देशापूर अयरान के भीतर और बहुत समृद्ध नगर था। वह तस्पोन के बराबर विशाल नही था, किन्तु उसके मकान, सडके, गलिया, नगर-प्राकार, नगर-द्वार, उद्यान, पुष्प-वाटिकाए, दूकाने तस्पोन से सौन्दर्य मे कम नही थी। तस्पोन से गुन्देशापूर मे भारी अन्तर यदि कोई था तो यही कि यहा वैसी दरिद्र झोपडिया और गन्दी गलिया नही थी। गुन्देशापूर अयरान मे रोमक नगर का एक टुकडा था। यहा के निवासियो मे रोमको की सख्या अधिक थी। शापूर प्रथम और दूसरे शाहशाहो ने जब-जब रोम को घुटना टेकने के लिए बाध्य किया तब-तब हजारो रोमक बन्दियो ने गुन्देशापूर की सख्या बढाने का काम किया। बन्दियो ने यहा आकर अपने बन्दी जीवन से ही मुक्ति नही प्राप्त करली, बल्कि

प्रथम शाहपूर के बसाए इस नगर की समृद्धि और सौन्दर्य-वृद्धि मे पूरी तौर से भाग लिया। गुन्देशापूर धन की ही समृद्धि नही रखता, बल्कि विद्या और कला मे विचारो की उदारता और सहिष्णुता मे भी वह अद्भुत नगर था। यहा सभी धर्मो के अनुयायी प्रेम से एक साथ रहते थे। रोमक, जिनकी सख्या सबसे अधिक थी, ईसा के अनुयायी थे, अयरानी मज्द-यस्नी होते भी धर्मान्ध नही थे। भिन्न-भिन्न देशो के आदमी भी यहा पर्याप्त सख्या मे रहते थे। गुन्देशापूर मे विश्व का ज्ञान-विज्ञान सुरक्षित था। यहा यवन विचारको, रोमक कलाकारो, हिन्दी ज्योतिषियो-चिकित्सको को अपनी-अपनी विद्या और कला को प्रसार करते देखा जाता था। यहा विश्व के सभी धर्मो के देवालय थे, जिनमे लोग अपने-अपने विश्वास के अनुसार पूजा-पाठ करते थे।

चारो यात्रियो को दक्षिण नगर-द्वार पर कुछ प्रतीक्षा करनी पडी क्योकि बिना नाम लिखे द्वारपाल भीतर जाने नही देते थे। चारो यात्रियो को थोडे ही समय बाद नगर मे प्रवेश करने की छुट्टी मिल गई। द्वार-रक्षको ने लकडी की पट्टियो पर दाहिने से बायें ओर लिखी जाने वाली लिपि मे जो लिखा था, उससे पढनेवाला यही समझ सकता था, कि एक सोग्दी, दो अर्मनी स्त्री-पुरुष और एक रोमक कुल चार मिलकर अमुक तिथि को गुन्देशापूर मे प्रविष्ट हुए। सोग्दी अब अपने तीनो साथियो का पथ-प्रदर्शक बन गया था। वह उन्हे कई सडको और गलियो से घुमाते हुए नगर के उत्तरी छोर पर किन्तु प्राकार के भीतर ही एक अधेरी गली मे ले गया। यहा कच्ची ईटो के दोमहले मकान इतने नजदीक थे, कि दिन मे भी प्रकाश काफी नही पहुचता था। ऐसी सकरी और अधेरी गली के भीतर मकान उसी के अनुरूप होने चाहिए, लेकिन जब वे साधारण द्वार से प्रविष्ट हो बाहरी आगन को पार करके सामने के कमरे मे गए, तो जान पडा कि बाहर का दृश्य केवल भ्रम पैदा करने के लिए था। यद्यपि इस घर के कमरे महार्घ कालीनो और रेशमी पर्दो से सजाये नही गये थे, न दीवारें बहुत सजीले पत्थरो की और न द्वार मूल्यवान काष्ट के कपाटो से ही तैयार किये गये थे, किन्तु वहा स्वच्छता और सुव्यवस्था बहुत दिखाई पडती थी। सोग्दी उन्हे घर के पिछले भाग की कोठरी मे छोड गया और थोडी ही देर बाद दो स्त्रियो और एक पुरुष को साथ लिवाये मेहमानो के पास पहुचा। मेहमानो को आश्चर्य हुआ, जब उन्होने उस पुरुष को देखा, जिसे थोडे ही समय पहले नगर के दक्षिणी

द्वार पर द्वारपालों के सरदार के रूप में देखा था। यदि सोग्दी उसके साथ न होता तो अवश्य ही उनकी चिन्ता बढ़ जाती। उन्होंने आके मेहमानों का अभिनन्दन किया। रास्ते के बारे में कुशल-प्रश्न पूछ मेहमानदारी की तैयारी में अपने साथ आई स्त्रियों को लगा के पुरुष वहाँ से विदा हो गया।

यात्रियों के सिर से मानो बहुत भारी बोझ उतर गया था। स्त्रियों में से एक ने तीनों पुरुषों और दूसरी ने उनकी सहयात्रिणी को स्नान के लिए गरम जल के प्रस्तुत होने की सूचना दी, और यह भी कहा कि नहाने का सामान और कपड़ा पानी के पास रखा है।

१०

कारा से पलायन

गुन्देशापूर के उत्तरी भाग में वही साधारण से मुहल्ले में कुछ असाधारण-सा दिखलाई देता घर अब भी था, किन्तु आज उसके आँगन, दीवानखाना तथा कमरों को देखने से मालूम नहीं होता था, यह वही घर है। उसके कमरे महार्घ कालीन तथा रेशमी पर्दों से सजाए हुए थे। बैठने की आरामदेह और कोच देखने से ही जान पड़ता था, कि इस घर के सजाने में पूरी शाहखर्ची और सुरुचि से काम लिया गया है। व्यक्ति के बदल जाने से उसी घर में कितना परिवर्तन हो जाता है, इसका यह अच्छा उदाहरण था। अब इस घर में सोग्द के किसी सामन्त की कन्या रह रही थी। उसके परिचारकों में अधिकतर स्त्रियाँ थीं। स्वामिनी जिधर चली जाती, उधर ही मधुर सुगन्धि का प्रवाह बह जाता, जाड़े के दिन न होते, तो संभव है भौंरे भी उसका अनुसरण करते। आँगन के कोठे में [illegible] गए थे, किन्तु दिन में गमलों के फूल जब बाहर सजा दिए जाते, तो उद्यान सजीव हो उठता। स्वामिनी राजकुमारी को सुगन्धों का ही शौक नहीं था, बल्कि शरीर को अलंकृत करने में जो जान पड़ता था, वह और भी दिन [illegible] लगाती है। परिचारिकाएँ भी बहुत विनीत और सन्तुष्ट मालूम होती थीं। घर की निस्तब्धता जाड़ों में रह गई कुछ गृह-चटकाओं (चिड़ियों) [illegible] अतिरिक्त बहुत कम भंग होने पाती थी। लेकिन पक्षियों [illegible]

स्वामिनी का कलकंठ कम मधुर नही था। दिन का समय कभी बात करने, कभी आगन मे घूमने और कभी थोडा-सा सगीत के अभ्यास मे जाता था, लेकिन रात को सध्या होने के बाद ही सजे हुए बडे कमरे मे चौकी के नीचे निर्धूम कोयले की अगीठिया रख दी जाती, मूल्यवान कालीन, मखमली ममनदे चौकी के किनारे लगा दी जाती और फिर हसनूर-भरी एक लम्बी-चौडी रजाई चौकी के ऊपर बिछा दी जाती। राजकुमारी सबसे महार्घ आसन की तरफ रजाई के भीतर कमर तक शरीर को डाल के बैठ जाती। इस समय नगर के कुछ सभ्रान्त पुरुष मिलने आते, जिनकी सख्या दो तीन से अधिक कभी न होती। पुरुषो मे किसी के साथ देर तक बात चलती रहती और किसी के आने पर बैठक सगीत की महफिल मे परिणत हो जाती। लोग सोग्दी राजकन्या के सगीत और सौन्दर्य की प्रशसा करते नही थकते थे। बडी रात जाने पर भोजन और पान के बाद महफिल बर्खास्त होती।

लोग जानते थे कि सोग्दी राजकन्या धार्मिक-तीर्थो के दर्शन के लिए निकली है। दिन मे रोज पूजा-पाठ के लिए मग पुरोहित आ जाते। राजकन्या की जिस तरह कला और सौन्दर्य मे ख्याति थी, उसी तरह धर्म के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा भी थी। लेकिन यह आश्चर्य की बात थी, कि सौन्दर्य और सगीत की अद्वितीयता के रहते तीन महीने के बाद भी आने वाले सभ्रान्त पुरुषो की सख्या चार-पाच से अधिक नही हुई।

हेमन्त का मध्यकाल बीत रहा था, कभी-कभी बर्फ भी पड जाती थी, किन्तु अभी वह टहरती नही थी। आजकल राजकन्या के पास एक नया व्यक्ति आता-जाता दिखाई पड रहा था। उसकी पोशाक और साथ आने वाले परिचारको को देखने से मालूम होता था, कि वह असाधारण व्यक्ति है। उसकी पोशाक मे महार्घ रेशम जैसे चमकते कोमल चर्म-कचुक, उसी की सिर पर टोपी थी, जिन्हे कमरे के भीतर घुसते ही वह उतार देता और फिर उसके शरीर पर जरदोजी के रेशमी कचुक, कमरबन्द, पायजामे, रत्नजटित सुनहले कर्णभूषण, कठभूषण, ककण रह जाते। उसे सगीत से बहुत शौक था। उसकी बातो से मालूम होता था, कि वह सगीत का प्रेमी ही नही बल्कि पारखी भी है। वह भ्रपरानी सगीत ही नही, हिन्दी, रोमक और सोग्दी सगीत का भी अच्छा रसज्ञ था। उसकी इस कदरदानी पर राजकुमारी और भी अधिक मुग्ध मालूम होती थी, सिर्फ मन मे

ही नही मुह मे भी कहती थी—"मुझे सगीत-कला की शिक्षा विशेष ध्यान से दी गई थी, मेरी इस विषय मे स्वाभाविक रुचि भी थी, किंतु आप-सा सगीत-पारखी और जगह मैंने नही देखा।" राजकुमारी का प्रौढ अतिथि बहुत गम्भीर और समझदार आदमी मालूम होता था, इसलिए प्रशसा के द्वारा उसे फुसाया नही जा सकता था। राजकुमारी भी कम से-कम शब्दो का उपयोग करती और शब्दो की कमी को बोलने के ढग से पूरा करती। इसमे सन्देह नही, पहरभर रात जाने के बाद जब लाल मदिरा के चषक चलने लगते, तो शब्दो के ऊपर उतना सयम नही रह जाता था, तो भी अतिथि मदिरा को पीने मे मात्रा का ध्यान रखता था। राजकुमारी भी अधिक आग्रह नही करती थी, किन्तु दिन बीतते मालूम हो रहा था, मधुकुतुप को जब राजकुमारी अपने सुन्दर हाथो से चषक के ऊपर उठाती, तो मेहमान के इनकार करने का स्वर क्षीण हो जाता।

हेमन्त के दिन तेजी से बीत गए। अब राजकुमारी का मित्र भद्र पुरुष कितनी ही बार रात को यही रह जाता, रात्रि की हिमवर्षा इसके लिए कारण न जाती। मेहमान अब केवल राजकुमारी के निवास पर आने मे ही सतोष नही त, बल्कि राजकुमारी भी उसके घर जाने के आग्रह को ठुकरा नही सकती। नए मित्र का घर गुन्देशापूर मे कुछ हटकर दुर्ग के पास पहाड की ढालुआ मि पर था। साधारण घर नही, वह एक छोटा किन्तु सुन्दर प्रासाद था। वसन्त आने के समय इसका पीछे का फलोद्यान और आगे का पुष्पोद्यान बहुत सुन्दर दीखता। भद्र पुरुष को यही खेद था, कि इस समय वह राजकुमारी को उद्यान के सौदर्य को दिखा नही सकता था, किन्तु उसे विश्वास था, कि राजकुमारी को अभी स्वदेश लौटने की जल्दी नही है।

राजकुमारी के परिचारक-परिचारिकाए उधर कुछ [illegible] दिखाई पडते थे। उनकी स्वामिनी अविवाहिता थी। उसका नया मित्र [illegible] ही भद्रकुल—किसी पह्लव वश का प्रभावशाली व्यक्ति था [illegible] वश के साथ नजदीक का सम्बन्धी था। ऐसे व्यक्ति से राजकुमारी [illegible] को राजी हो जाए, तो पिता की ओर से आपत्ति नही उठाई [illegible] जहा तक कुलो की स्थिति का प्रश्न था, आपत्ति का कोई कारण नही था। [illegible] परिचारक परिचारिकाए देश लौटने को आतुर जान पडते थे। [illegible]

हजारपत के भवन मे परिचारक-परिचारिकाओ की संख्या बहुत थी, लेकिन परिवार का पता नही था। हजारपत के कथनानुसार परिवार मे उनके दो लड़के-लड़किया है, जो अपने दादी-दादा के पास चले गए है। लेकिन, राजकुमारी इस पर विश्वास नही कर सकती थी। उसे किसी ने बतला दिया था, कि उसकी पत्नी को इस भवन से गए बहुत दिन नही हुए। यह भी उसे मालूम हो गया, कि घनिष्टता बढने पर हजारपत ने अपने भवन मे ले आने का तब तक आग्रह नही किया, जब तक कि भवन अकंटक नही हो गया।

जाड़े के अन्त तक पहुचते-पहुचते हजारपत के रग-ढग मे भारी परिवर्तन हो गया। मदिरा-चषक की मात्रा अधिक होने पर न सयम रखने की आवश्यकता रह गई, और न मुह से कुछ कहने की। हजारपत के व्यवहार से मालूम होता था कि वह राजकुमारी को प्राणो से भी अधिक प्रिय समझता है। उस दिन सायकाल को राजकुमारी को थोड़ा सा सिर दर्द हो गया था, हजारपत ने रात-भर जाग के सेवा-सुश्रुषा की। राजकुमारी की अपनी परिचारिकाओ मे से एक या दो बराबर उसके साथ रहती। उसके पास आनेवाले पुरुषो मे एक हजारपत

का भी बहुत परिचित मित्रदात था। दोनो के जाति-वंश मे एक ही पीढ़ी का अन्तर था, इसलिए पुरुष को शिष्टाचार के लिए बहुत नीचे दर्जे का अभिनय नहीं करना पडता था। हजारपत के व्यवहार मे यह भी पता लगता था कि उसका इस पुरुष पर बहुत विश्वास है।

राजकुमारी अपने प्रेमी के बारे मे जानती थी, कि हजारपत गुन्देशापूर और उसके दुर्ग का सर्वोपरि अधिकारी है, यह भी शायद समझती थी कि यहा के दुर्ग का कुछ विशेष महत्त्व है क्योंकि पहले दिनो मे प्रेमिका के छुट्टी ले वह वहा प्रतिदिन जाता था। अब वह काम अधिकतर अपने और राजकुमारी के भी परिचित पुरुष मित्रदात पर छोडे हुए था। मित्रदात रोज प्रात साय हजारपत के पास कार्य की सूचना देने आता। सूचना देने के समय राजकुमारी को अलग रखने की कोशिश की जाती थी, किन्तु राजकुमारी को उसकी उत्सुकता नहीं थी। यद्यपि हजारपत प्रौढ-वयस्क था, दोनो की आयु मे बीस वर्ष का अतर था, लेकिन जान पडता था, राजकुमारी उस पर मुग्ध है।

वसन्त की गर्माहट के आने से पहिले जाडे के अन्तिम सप्ताहो मे गुन्देशा-[illegible] प्राय बर्फ की सफेद चादर से ढका रहता। हजारपत का भवन [illegible] पर रहने के कारण वह और अधिक हिमवर्षा का भागी था। राजकुमारी [illegible] बराबर अपने मित्र के ही भवन मे रहती थी। उनकी सगीत गोष्ठी [illegible] रात के तीसरे पहर तक चली जाती थी। हजारपत को अब मदिरा से बहुत प्रेम हो गया था। राजकुमारी के कोमल हाथो मे गिरती [illegible] आकर्षक मालूम होती थी। कि मना करने पर भी वह चषक पर चषक [illegible] जाता था। अवस्था यहा तक पहुच गई थी कि म[illegible] उस कुछ होश-हवास नहीं रहता। हजारपत कहता—"मेरा जीवन मरा [illegible] लिए है।" जब कभी राजकुमारी अपने देश और बन्धु-बान्धवो की चर्चा [illegible], तो हजारपत विकल हो जाता, और राजकुमारी को उसे [illegible] बहुत यत्न करना पडता।

को वह अपने मधुर आलाप और आर्थिक उदारता से सतुष्ट किए रहती थी। इस भवन की वह स्वामिनी थी। उसकी आज्ञा को सभी शिरोधार्य मानने के लिए लालायित थे। वह राजकुमारी को अपने बहुत समीप समझते थे। साय-प्रात आने वाले मित्रदात से यद्यपि अधिक घनिष्टता नही बढ पाई, लेकिन सामने रहने के क्षणो मे वह भी बहुत नम्रता प्रदर्शित करता था। राजकुमारी के लिए सचमुच एक बडे निर्णय का समय आ गया था। हजारपत का कहना था—अब तुम्हे देश जाने का ख्याल छोड देना चाहिए, नही तो मुझे भी अपने साथ ले चलना होगा।

राजकुमारी ने भी पहिले बहुत आनाकानी की। अपनी मा के प्रेम को वह भूल न सकती थी। वह कितनी ही बार नेत्रो मे करुणाश्रु गिराने लगती। हजार-पत हताश होने लगता, किन्तु राजकुमारी अन्त मे उसके प्रेम को सबसे बढकर स्वीकार करती। जाडे के अन्त मे अब अस्तरमागान (जोतिसियो) से शुभ मूहर्त के बारे मे पूछा जाने लगा। निश्चित हो गया था कि अबके वसन्त मे जब सूखे वृक्षो पर पत्तिया कुड्मलित होने लगेंगी, सेब के वृक्ष सफेद-सफेद फूलो से ढक जाएगे, उद्यान-भूमि मे हरे तृण बिछने लगेंगे और जाडे भर के लिए दक्षिण की ओर निर्वासित पक्षी लौटकर फिर लताओ और वृक्ष-शाखाओ पर कलरव करने लगेगे, उसी समय दोनो का प्रणय, परिणय का रूप धारण करेगा।

राजकुमारी भी अब इस घर को पराया नही समझती थी। इसकी हर-एक चीज मे अपनत्व स्पष्ट होने लगा था। पूर्वाण्ह के समय जब हजारपत मदिरा से प्रभावित नही होता, यह देखकर गर्व अनुभव करता, कि राजकुमारी अब मेरे साथ सम्बन्ध रखने वाली हरएक वस्तु के साथ आत्मीयता पैदा कर चुकी है। वह राजकुमारी की प्रसन्नता के लिए सब कुछ करने को तैयार था। उधर राज-कुमारी ने, जान पडता है, उसके प्रेम को स्वाभाविक तौर से स्वीकार कर लिया था, और वह किसी कृत्रिम शिष्टाचार के दिखाने की आवश्यकता नही समझती थी। वसन्त के साथ दोनो एक हो जाएगे। उस समय जाडों की चिरसुप्त प्रकृति जाग उठेगी। अभी से उद्यान, भवन और सारी चीजो को सजाने, नये बनाने की योजनाए बनने लगी थी। राजकुमारी को यदि कोई शिकायत थी, तो यही कि हजारपत को इतनी अधिक मदिरा नही पीनी चाहिए, लेकिन मागने पर वह इनकार नही करती थी। हजारपत को यह विश्वास था कि उसकी प्रेमिका उसके भविष्य और उसके हित को प्राणो से भी अधिक प्रिय समझती है। कभी-कभी

अधिक पान के लिए राजकुमारी कृत्रिम क्रोध भी प्रकट करती थी। किन्तु, मदिरा और अपनी राजकुमारी दोनो को वह अभिन्न बतलाता था।

× × ×

अंधेरी रात थी। पृथ्वी पर और आकाश मे घनी काली चादर फैली थी, पता नही लगता था, कहा समतल भूमि है और कहा पहाड, कहा उपत्यका है और कहा अधित्यका। आकाश मे बादल छाया होने से तारो की टिमटिमाहट कही देखने मे नही आती थी। रात आधी से अधिक बीत गई है, ऐसा समझने का कारण प्रकृति की कठोर निस्तब्धता और भीषण नीरवता थी। इस काली चादर के नीचे विश्व मे क्या हो रहा है, इसका किसे पता लग सकता था? लेकिन इस सन्नाटे मे भी सृष्टि के एक कोने मे तीन सजीव प्राणी दिखलाई पड रहे थे। वहा निबिड अधकार के बोझ से दबी जाती एक मोमबत्ती टिमटिमा रही थी। तीनो व्यक्तियो और उस क्षीण बत्ती के अतिरिक्त वहा और कुछ नही दिखलाई पडता था। जिस कोठरी मे बत्ती जल रही थी, वह बहुत छोटी थी। उसकी छत के नीचे, लम्बे आदमी के खडे होने की गुजाइश नही थी। कोठरी के दो ओर के दो किवाड बन्द दिखलाई पडते थे, जो बहुत मोटे तौर से बनाए थे। दोनो द्वार बन्द थे, इसलिए कहा नही जा सकता था, कि उनके बाहर [illegible]-सा ससार है? तीनो व्यक्तियो मे एक पुरुष द्वार के पास था, दूसरा [illegible] [illegible]-सी चारपाई पर बैठा हुआ था। उसकी स्वप्निल दृष्टि और चेहरे पर [illegible] के चिह्न अकित थे। वह खोया-खोया-सा अपने सामने दीपप्रकाश मे [illegible] [illegible] के पूर्ण प्रकाशित चेहरे को बेपरवाही से देखता मौन धारण किए हुए था। [illegible]-तीन बार आखे मल-मल कर देखने और चारपाई को हाथ से टटोलने के बाद पुरुष ने धीमे स्वर मे कहा—तुम क्यो आती हो? मत आओ, प्रिये! तुम्हारा आना मेरे लिए केवल परिताप ले आता है।

कृष्ण-परिधाना तरुणी ने धीमे और मधुर-स्पष्ट स्वर मे कहा—मै तुम्हे कष्ट देने के लिए नही आई।

—रोज तुम यही कहती हो। तुम तो सामने से [illegible] हो जाती हो, लेकिन तुम्हारी स्मृति सूइया चुभाने लगती है। भगवान जाने [illegible] [illegible] भूल गया हू। मुझे नही मालूम आज कौन सा वार है, कौन महीना है, [illegible] है। जाडा लगता है, तो समझता हू, यह जाडे का कोई महीना [illegible]

फूलो और वृक्षो को उद्यान नाम दिए उस स्थान मे भी जाना, मैंने छोड दिया है। भूल जाना अच्छा है। आह! तुम्हारी स्मृति!! लेकिन तुम मुझे भूलने नही देती!!!

करुणा की मूर्ति सी कृष्णवसना तरुणी धीरे-धीरे आगे बढकर चारपाई पर बैठ गई और पुरुष के हाथो को उसने अपने हाथो मे ले लिया। पुरुष कुछ अधिक उत्तेजित स्वर मे कहने लगा—तुम्हे मैं प्यार करता हू, सदा प्यार करता रहूगा, किन्तु इससे क्या लाभ? रोज तुम्हारे हाथ मेरे हाथो मे आते है, रोज तुम्हारे अधर मेरे कपोलो पर गरम-गरम चुम्बन देते है, किन्तु इस मृग-मरीचिका से कब सन्तोष हो सकता है? अब तो मुझे यह भी पता नही लगता कि कब जगा और कब सो गया। काश! यदि मैं यह स्वप्न ही सदा देखता। लेकिन भूल जाता हू, कि तुम्हारा स्वप्न भी बहुत मधुर है, इससे बढकर मधुर वस्तु मेरे लिए कोई नही है, किन्तु अफसोस, मैं इस स्वप्न को अधिक बढा पाने का सौभाग्य नही रखता।

तरुणी ने अपने मुह को पुरुष के कपोल से सलग्न कर दिया, उसके कपोल पर से ढरकते गरम-गरम अश्रु पुरुष के कपोल को भिगोने लगे। वह अधीर होकर बोल उठा—आह, तुम रोती हो! क्षमा करो, तुम्हारा प्रेम ही मेरा जीवन-सबल है। देखो, मैं भी रोता हू। मेरी अश्रुधार दाढी भिगो रही है। तुम जहा भी हो, स्मरण रखो, मैं तुम से कम विकल-हृदय नही हू। अच्छा आई, तो ऐसे ही बैठी रहो—कहते हुए पुरुष अपने दाहिने हाथ से तरुणी की कटि को लपेटते हुए उसे वक्ष से लगा नीरव हो गया। उसकी नीरवता तरुणी को असह्य-सी हो गई। वह कम्पित स्वर मे बोलने लगी—मैं स्वप्न मे नही आई हू।

—तुम रोज ऐसे ही कहा करती हो, लेकिन मैं जागृत को नही चाहता, मैं इसी स्वप्न को चिरतन रूप मे चाहता हू।

—ऐसा न कहो, फिर ऐसा न कहो। मेरा हृदय फट जाएगा। तुम स्वप्न नही देख रहे हो। मैं तुम्हारे सामने आई हू। बडी कठिनाई से यहा पहुची हू।

—यह कोई नई बात नही है, मैं ही नही इस छोटी कोठरी की दीवारें, ये दोनो काठ के कपाट, ये छत और फर्श, यह चारपाई भी तुम्हारे इन शब्दो को बहुत बार सुन चुके है। ये सब साक्षी देंगे। कल जब किवाड खुलेगा और चक्कर काट करके दिन की रोशनी इस कोठरी के भीतर आएगी, तो तुम्हारा कही पता

नही रहेगा।

—क्या कह रहे हो ? क्या मेरे इन ठोस हाथो को अपने हाथो मे ठोस नही देख रहे हो ? क्या मेरे उष्ण-अश्रुओ को अपने कपोलो पर से बहते अनुभव नही कर रहे हो ?

—सब कर रहा हू मेरी प्राण ! और यह सब मधुर है। इस स्वप्न की मै ज़रा भी अवहेलना नही करता।

तरुणी ने पुरुष के लम्बे रूखे बालो पर हाथ फेरते अपने ठोस शरीर का विश्वास दिलाते हुए कभी उसकी गर्दन, कभी कधे, कभी भुजमूल कभी वक्ष-स्थल और कभी कुक्षि को दबाया, किन्तु पुरुष की चेष्टा मे अन्तर नही जान पड़ा। वह घबडाई-सी आवाज मे बोल उठी—समय थोडा है, कवात् ! तुम्हारी सम्बिका इस रात को तुम्हें छुडाने के लिए आई है। जल्दी करो, निकलो इस कारा से ! निकलने का सारा प्रबन्ध हो गया है।

कवात् को ये शब्द सर्वथा नये मालूम हुए। स्वप्न की प्रिया के मुह से ऐसे शब्द कभी नही सुने थे। उसकी आखे चमक उठी और उसने बडे ध्यान से सम्बिका के मुह की ओर देखा। डर था कि कही फिर वह स्वप्नमुद्रा मे न चला जाए, इसलिए सम्बिका ने उसे पकडकर चारपाई से नीचे खडा किया। कवात् ने [illegible] विश्वास प्रकट करते, किन्तु चकित स्वर मे कहा—क्या सचमुच मेरी [illegible] मेरी प्राण जागृत अवस्था मे मेरे पास आई है ! ! कुछ भी हो, सम्बिका [illegible] रहेगी, कवात् उसी पर चलेगा।

दो कदम दूर खडे पुरुष ने एक तरफ से द्वार को खोल दिया। [illegible] की बत्ती का प्रकाश बाहर नही जा सकता था, इसलिए कवात् सम्बिका [illegible] हाथ पकडे पीछे-पीछे स्वप्न मे ही किसी अज्ञात देश की यात्रा करने [illegible] तैयार हो गया। बाहर आने पर मुह पर ठडी हवा का झोका लगा, [illegible] होने लगी। उसने पहले से कुछ अधिक विश्वास के साथ सम्बिका के शरीर पर हाथ फेरते कहा—सम्बिका तुम्ही हो। अच्छा तो मेरे लिए क्या आज्ञा है ?

सम्बिका ने अब की बार कवात् को अधिक प्रकृतस्थ देख उसका [illegible] आलिगन करते हुए उसके मुख और केशो पर अनेक बार चुम्बन [illegible] तुम्हारी मुक्ति का सारा प्रबन्ध हो गया है। कारापति मदिरा [illegible] दिरा के अतिरिक्त मैंने उसे कुछ और भी दिया है। वह तीन [illegible]

नही आ सकेगा, किन्तु मैं यही रहूगी। इसी बीच मे तुमको दूर चला जाना होगा।

कवात् का कंठ रुद्ध हो गया, फिर सभल कर उसने सम्विका को छाती से लगाते हुए कहा—लेकिन तुम सम्विका ?

—मेरी चिन्ता मत करो। अन्दर्जगर की कृपा मेरे साथ है। अपने धर्म-भाइयो की सहायता से मैं यहा तक पहुच सकी, तुम नही, वह मेरी रक्षा करेंगे। मित्रवर्मा इसी गुन्देशापूर मे मेरी सहायता के लिए मौजूद है।

कुछ स्मरण कर कवात् बोल उठा—और काबूस, मेरा—हमारा काबूस कहा है उसे हत्यारो ने—

—हत्यारे उसका कुछ बिगाड नही पाए। वह अन्दर्जगर के पास है। वहा तुम काबूस को भी देखोगे। तुम्हारे लिए घोडे तैयार हैं। स्मरण रखना, सियावख्श ने हमारे लिए जो किया, उससे हम कभी उऋण नही हो सकते।

—सियावख्श! पह्लव-तरुण सियावख्श, हमारे अन्दर्जगर का प्रिय शिष्य!

—बात करने का समय नही है। सियावख्श अपनी आयु से कही अधिक बुद्धिमान है। निर्भयता और वीरता तो उसमे कूट-कूटकर भरी हुई है—कहते हुए सम्विका एक बार फिर कवात् का गाढालिंगन और चुम्बन किया। उस वक्त कवात् देख रहा था, सम्विका की आखो से झर-झर आसू बह रहे हैं। प्रत्यालिंगन करते हुए विचलित-स्वर हो कवात् ने कहा—सासानी वंश की भगवती सम्विका! तुम्हारा आज्ञा शिरोधार्य है और कुछ सोचने-कहने की शक्ति मेरे पास नही है।

—विचार करने की शक्ति की तुम्हे इस वक्त आवश्यकता नही, हमारे इस साथी के साथ जाओ। चार घोडे और दो सवार मिलेंगे। रास्ते मे स्थान-स्थान पर नये घोडो का प्रबन्ध है। तुम चारो को सोग्दी व्यापारियो का अभिनय करना है।

—बचपन की सुनी सोग्दी भाषा को सम्विका! मैं भूला नही हू। कवात् "अनुस्वर्न" (विस्मृतिकारा) मे अपनी स्मृति को खो चुका था, किन्तु—

—किन्तु की बात फिर करेंगे, जब तुम्हारी सम्विका तुम्हारे पास आएगी।

उन्होंने अन्तिम आलिंगन किया और अपने अश्रुओ से मुख-प्रक्षालन करते

द्वारपालो को यह बडा अच्छा मौका हाथ आया था, उन्होने धमकाते हुए कहा—तुम हूणो के गुप्तचर हो, गुप्तचर भी व्यापारी बन के आया करते हैं।

प्रमुख सोग्दी ने अपने स्वर को बहुत नरम करके कहा—हमे गुप्तचर बनने से कोई लाभ नही। व्यापार से चार द्राख्म कमाना हमारा उद्देश्य है। हम आज हमस्तन पहुच जाना चाहते थे, लेकिन अधेरे के कारण यहा ठहरने के लिए मजबूर हुए हैं।

सदेश भेजने पर द्वारनायक भी आ गया। सोग्दी व्यापारियो को देखकर उसने अपने आदमी से कहा—क्या बात है, क्यो इनको रोके हुए हो ?

सोग्दी वक्ता ने द्वारपाल को जवाब देने का मौका न देते कहा—ख्वताय ! हम सोग्दी व्यापारी हैं, रात के लिए यहा ठहरना चाहते थे, ख्वताय की सेवा मे हाजिर होने ही वाले थे।

द्वारपालो के नायक ने "सेवा मे हाज़िर" का अर्थ समझ के नरमी दिखाते कहा—इधर पास के घर मे इनको ठहरा दो, सवेरे स्कन्धावार (कैम्प) के जागने से पहिले चले जाएगे।—फिर उसने व्यापारियो की ओर मुह करके कहा—रात को तुम्हे खाने का कष्ट न होगा। तुम्हारे घोडो के लिए चारा आदमी दे देंगे और खाना हमारे साथ खाना।

सोग्दी भीतर ही भीतर बहुत प्रसन्न हुए। वे समझ गए कि सरदार को भेंट-पूजा करनी पडेगी, सब काम बन जाएगा। घोडो को बाधकर उन्होने सौ दीनार (सोने के सिक्के) और दो रेशमी थान ले के नायक के सामने भेंट रखी। नायक ने दीपक के प्रकाश मे चमकते पीले दीनारो को देखकर बडी प्रसन्नता प्रकट करते कहा—हा, मैं जानता हू, आप सोग्द के बडे व्यापारी हैं। आप चिन्ता न करे, अगर कहे तो मैं अपने आदमियो को हस्मतन तक साथ कर दू।

सोग्दी मुखिया ने बहुत-बहुत धन्यवाद देते कहा—हस्मतन मे हमारे सोग्दी व्यापारी है। कल दोपहर तक वहा पहुच जाएगे। हमे आपके आदमी की आवश्यकता नही है, किन्तु यदि वहा पर कोई यहा की तरह प्रतिबन्ध हो, तो उसमे हम आपकी सहायता चाहेंगे।

नायक ने हस्मतन के अपने दोस्त के लिए चिट्ठी देना स्वीकार किया और सकेत से साफ हो गया कि वहा फिर भेंट-पूजा चढानी होगी।

सोग्दी व्यापारियो को इतनी आसानी से छूटने की आशा नही थी।

नायक ने स्वान बिछवाया और यात्रा मे जो खान-पान सुलभ थे उनको रख के मेहमानो के साथ भोजन किया। मदिरा का नशा चढ़ने के बाद सोग्दियो के प्रमुख वक्ता ने मदिरा और मदिरेक्षणा की बात छेड़ दी। नायक को [illegible] बाद मदिरेक्षणा की बात और पसन्द लगी। सोग्दी प्रमुख ने कहा—सु[illegible] तो अयरान मे ही होती है, किन्तु सोग्द भी सौन्दर्य मे खाली नही है।

फिर नायक ने अपनी यात्रा के अनुभवो से यमनी, [illegible], [illegible] (मिश्र), अयुर (असीरिया), कपिशा, कानिश (काबुल), हरहूती (हिरात) और वख्त्रिय मे से एक-एक की स्त्रियो के सौन्दर्य की प्रशसा की, जिसमे कुछ उसकी अपनी देखी थी, कुछ सुनी-सुनाई और कुछ बिलकुल मनगढ़न्त। नशा और चढ़ने पर बात भी चढ़ती गई और सोग्दी व्यापारियो को आधी रात बीत जाने पर मुश्किल से वहा से निकलने का मौका मिला।

सोग्दी अपनी जगह पर विश्राम करते द्वारपालो से कह चुके थे, [illegible] रहते ही जगा दे।

सूर्योदय से बहुत पहले व्यापारी गाव से दूर निकल गए थे। प्रमुख [illegible] ने कहा—धन्यवाद है, इतने सस्ते छूटने के लिए।

दूसरे साथी ने उसकी बात का समर्थन करते कहा—[illegible] [illegible] सकट का रास्ता तो स्वीकार ही किया है। हमे दिन मे नही [illegible]।

प्रमुख ने कहा—रात मे चलने पर और भी अधिक सन्देह होता, क्योकि यह प्रधान राजमार्ग है। लेकिन कोई हर्ज नही, दीनार पास मे रखना चाहिए। उनको क्या पता है कौन जा रहा है।

तीसरे सोग्दी ने कहा—मैं जानता हू इसका नाम [illegible] है। [illegible] और पैसा बनाना खूब जानता है। पहले शाहशाह [illegible] का [illegible] और अब जामाप्स का।

—वह किसी का भक्त नही है, यदि भक्त है तो दीनार का।

चौथे सोग्दी ने कहा—इसीको क्या दोष दिया जाए। [illegible] इसी तरह चल रही है। कही किसी [illegible] की जागीर [illegible] शान (मजूर या शिल्पी) रहा होगा। खुशामद और [illegible]

प्रसन्न करके कितने ही आगे बढते है। स्वामियो के वैभव को देखते हुए सभी दीनार की महिमा समझ जाते हैं, फिर जैसे हो तैसे दीनार जमा करना ध्येय हो जाता है।

—दीनार शाहशाह को भी कडवे नही हैं। इसकी आवश्यकताए कम दीनारो से पूरी हो सकती है, इसलिए सौ दीनारो से ही हमने काम बना लिया, किन्तु बडो के लिए हजारो दीनार चाहिए।

प्रमुख सार्दी ने कहा—यही तो आफत है देश मे धन पैदा करने वाले सब तरह का कष्ट उठाते हैं और उनकी कमाई मुफ्त मे खानेवाले उन्हे लूटने-खसोटने मे लगे हैं। तारीफ जरूर करेंगे कि आपस मे लडते रहने पर फिर सभी मिल जाते हैं। रथयेस्तर पार्थीय भी हैं, और ईरानी भी। पार्थियो का राज हटाके ईरानियो ने अपना राज्य स्थापित किया, लेकिन, आज भी सेनापति और दूसरे बडे-बडे पद पार्थीय विस्पोह्रो के हाथ मे वैसे ही हैं, जैसे ईरानी विस्पोह्रो के हाथ मे। आथ्रवन (पुरोहित) भी धर्माचार्य और न्यायाधीश बनकर मौज और आनन्द लूट रहे है। वस्त्रोश्यशान के हाथ मे वाणिज्य, दूकान चली गई है, और शिल्पियो, किसानो मजूरो की कमाई से बडी धन-राशि उनके हाथ मे एकत्रित है। यही तीनो वर्ग हैं, जो ईरान की सारी सम्पत्ति और भोग के मालिक हैं। हुतुखशान (छोटे व्यापारी किसान और मजूर) काम करने के मालिक है। दह और वन्दक (दास) सारा धन पैदा करते हैं, लेकिन अपमान और भूख की जिन्दगी व्यतीत करते है। ईरान मे सौ मे मुश्किल से बीस व्यक्ति होगे, जो रथयेस्तर (शाह-परिवार और विस्पोह्र), आथ्रवन और वस्त्रोश्यशान वर्ग के हैं, बाकी अस्सी है हुतुखशखान और वन्दक।

दूसरे सोग्दी ने उसका समर्थन करते कहा—हा, किसी व्यक्ति को दोष देने से कोई लाभ नही। जब कूए मे ही शराब पडी हो, तो कौन नही मतवाला होगा।

हरमतन प्रधान नगर था। यहा से कोहकाफ, सोग्द, दक्षिणी समुद्र और तस्पोन् के लिए राजपथ जाते थे। सायकाल के सकट को स्मरण करके उनकी इच्छा हुई, कि दिन मे हरमतन के भीतर से न जाया जाय। हरमतन मे सचमुच ही सोग्दी व्यापारी पर्याप्त सख्या मे थे, जिनसे मिलने के लिए वे तैयार नही थे। इसलिए नगर द्वार के भीतर प्रविष्ट हुए बिना उन्होने अपना रास्ता बदल

रहा हो गया था, उनका पुराना नगर हस्मतन अब नाम के लिए मद्र (माद) देश मे था, लेकिन इन पहाड़ो के निवासी अब भी अपने स्वतन्त्रताप्रेमी पूर्वजो से दूर नही हटे थे। अखामन्शी सम्राट कोरोश, दारयोश आए और चले गए। यवन सम्राट और उनके बाद पार्थीय (अशकानी) भी राज कर चुके और आजकल सासानियो का शासन चल रहा था। लेकिन सभी शासको को बल दिखला के भी अन्त मे इन पहाडी मादो से समझौता करना पडा। हा यह कहकर—ये बर्बर जगली है टिड्डियो की भाति मर कर के भी अपना स्वभाव नही छोडेंगे।

मदार अब मादो की उस भूमि मे जा रहे थे, जहा मानव का पतन उतना अधिक नही हुआ था। नागरिक जीवन ने कितनी ही अच्छी चीज़े जो समाज को दी थी, उनमे ये वचित ज़रूर थे। यहा उनको यात्रा करने मे कोई जल्दी का काम भी नही था।

चौथे दिन सूर्यास्त से कुछ पहले मदार नदी के एक भाग को पार करते ही एक खुली उपत्यका (दून) मे पहुचे। यह जगह काफी खुली तो थी ही, साथ ही यहा प्राकृतिक सौन्दर्य की अपार राशि एकत्रित थी, जिसे देख कर सवारो को मालूम हुआ कि वह किसी दूसरे लोक मे आ गए हैं। यहा पहाडो की चारो ओर वृक्षो की हरियाली दीख पडती थी। जगह जगह झरने बह रहे थे, जहा तहा कुछ नगे पाषाणो को छोडकर सभी जगह घास, जगली फूल लगे हुए थे। नदी कुछ समतल-सी भूमि मे चलने की वजह से पत्थरो पर सदा तरगित हो चलती भी उतनी मुखर ध्वनि नही कर रही थी। नदी की दोनो तरफ चौडी समतल भूमि थी। सवार जुते खेतो और बहती नहरो के किनारे से गुजरे। आगे चलने पर उन्हे मेवो के बगीचो मे से जाना पडा। विशाल बगीचे थे, लेकिन उनके किनारे कोई चहारदीवारी नही थी। अभी फलो के आने मे देर थी और वृक्षो मे से किन्ही मे फूल और किन्ही मे पत्ते भर आ पाए थे। लेकिन बगीचो का सौन्दर्य दर्शनीय था। उनके नीचे की भूमि को आदमी के हाथों ने सवार रखा था। सिवाय विशेष तौर से रखे स्थानो के कही घास का पता नही था। किसी वृक्ष मे कोई सूखी डाली नही थी और न टग-मग वृक्ष दिखलाई पडते थे। कही दूर तक सेबो की पक्ति चली गई थी, कही अनारो की। कही अजीर (उदुम्बर) लगे हुए थे और कही नासपातिया। अखरोट, बादाम, पिस्ता की वृक्ष-पक्तिया भी इसी

तरह क्रम से लगी थी। बीच-बीच मे अगूरो के केदार थे, जिनकी जडे भूमि मे डेढ-डेढ हाथ ऊपर खडी थी और उनमे शाखाए फूटने लगी थी। [illegible] कुछ टट्टियो वाले अगूर भी थे, जिनकी लताओ पर पत्तिया [illegible] दिखाई पड़ती थी।

सवारो ने अयरान के और स्थानो मे विशेष कर [illegible], [illegible] आदि मे कितने ही सुन्दर बाग देखे थे, शाही बागो को भी देखा था, जहा [illegible] कोई भी विचार न करके फूल सजाने की तरह बागो को सजाया जाता था, [illegible] वहा भी इस तरह के सुन्दर वृक्ष और बाग देखने को नही मिले।

बागो मे से होते आगे सवार बस्ती के पास पहुचे। [illegible], बाग, खेत, [illegible], पर्वत, नदी, सभी एक दूसरे मे मिले हुए, सभी एक दूसरे के पूरक थे। [illegible] की तरह यहा गाव के किनारे रक्षा प्राकार नही था, लेकिन शायद उसकी आवश्यकता भी नही थी, क्योकि रक्षा प्राकार का काम [illegible] कर रही थी। यहा के घर यद्यपि सीधे-सादे थे, लेकिन [illegible] मालूम होते थे। मकान पाती से बने थे, जिनमे बीच [illegible] और रास्तो पर भी हरित छाया या फलो के वृक्ष लगे थे। [illegible] दीवार या छतें गिरी-पडी बिना मरम्मत या गन्दी नही थी। [illegible] आदमी कही भी भूमि पर बैठ या लेट सकता था।

पहाडी मादो की तरह के नर-नारियो को भी अपने यहा देखा था, किन्तु यहा केवल उन्ही-उन्ही को और ऐसी प्राकृतिक पृष्ठ-भूमि मे देखकर उन्हे मालूम हुआ, जैसे उन्होने कभी ऐसे रूप को देखा ही नही।

सवारो मे से एक इस गाव का परिचित मालूम होता था, क्योकि उसके सामने से गुजरते सभी नर-नारी स्वागत वचन कहे विना नही रहते। हा, यह आश्चर्य जरूर होता था, कि आगन्तुक अर्मनी सवारो को देखकर उनमे अधिक जानने की जिज्ञासा क्यो नही होती थी ?

ग्राम विशाल था। सभी मकान समानरूपेण स्वच्छ और सुन्दर थे, यद्यपि उनकी आकृति तथा सादे ढग के वनाव सवार मे अन्तर था। वे बीच की बीथी से होते गाव के दूसरे छोर पर पहुचे। वहा अपेक्षाकृत एक अधिक लम्बे-चौडे घर के फाटक से भीतर जा उन्होने अपने घोडो को एक आदमी के हाथ मे दे दिया और जव भीतरी फाटक पर पहुचे, तो उसके द्वार पर एक श्वेतरक्त दाढी वाला सुन्दर प्रौढ पुरुष अपने अर्धस्मित मुखमडल से एक प्रभा-सी बिखेरता उनके स्वागत के लिए खडा था। "स्वागत" शब्द मुख से निकलने के साथ उसने सबसे प्रथम आए सवार को अपने अक मे भर लिया और उसी तरह बाकी तीनो सवारो का भी गाढालिगन किया। सबके नेत्रो मे हर्षाश्रु वह रहे थे।

१२

दिह-वगान

गाव के चार सवारो मे सियावरश और मिथ्रदात पहिले से ही दिह-वगान से परिचित थे किन्तु उनके दो साथी पहिले ही पहल इन पहाडो मे आए थे। यह कहने की आवश्यकता नही कि उनमे एक भारतीय मित्रवर्मा था और दूसरा कवात्, ईरान का पदच्युत शाहशाह। रात मे यद्यपि उन्हे ग्राम के जीवन को अधिक देखने का मौका नही मिला था, किन्तु भोजन के समय ही उन्हे मालूम हो गया कि यहा एक दूसरी ही दुनिया वसी हुई है। सारे गाव के पाच हजार व्यक्तियो का यद्यपि भोजन एक जगह नही था, किन्तु तो भी सौ से अधिक स्त्री-पुरुष-बच्चे वहा एक साथ बैठकर भोजन करते रहे। और उन्ही के बीच उसी पक्ति मे एक

समान ही उनके अन्दर्जगर मज्दक-वामदातान भी थे। भोजन में मांस नहीं था और न मदिरा ही, क्योंकि अन्दर्जगर अपने उन्नतवर्गीय अनुयायियो के लिए इन्हे अभक्ष्य-अपेय समझते थे। लेकिन मधु, मक्खन, चावल और मांस तथा मेवे जहा बहुतायत से हो और पाककला मे भी पूरा परिचय हो, वहा और तरह के स्वादिष्ट भोजन तैयार करने मे क्या कठिनाई हो सकती है? सिवावर्शी और कवात् को यह भोजन बहुत ही मधुर मालूम हुआ और उससे भी मधुर भोजनशाला का वातावरण था, जहा न स्त्री और पुरुष का भेद था और न छोटे बडे का। सब अकृत्रिम रूप में एक-दूसरे से बात करते भोजन कर रहे थे। पीछे आगन्तुको को पता लगा, कि इस तरह की सार्वजनिक भोजनशालाएं हर गांव में हैं, जहा सब लोग बैठकर इकट्ठा भोजन करते हैं। चाहने वाला अपने घर पर भी भोजन कर सकता और सबकी एक भोजनशाला बनाई जा सकती थी। गांव के भोजन का सारा प्रबन्ध सारे गांव की सम्मिलित पंचायत की ओर से होता है।

दिह-अगान उन गांवो में था, जहा से दजगर, मज्दक और उनके साथियों का स्वप्न साकार रूप में पृथ्वी पर उतारा गया था। यहा [illegible]

गाम होता।

दिह-वगान मे सादगी है, लेकिन सादगी का यह अर्थ नही, कि वहा के लोगो का कला से प्रेम नही है। वे कला को अपने धर्म का अग मानते है। वे अच्छी तरह जानते है, कि उनके परमगुरु मानी फातिक-पोह महान चित्रकार थे, वे सगीत के अद्भुत विद्वान थे। उनका काव्य और साहित्य पर पूरा प्रेम और अधिकार था। दिह-वगान को हम कलाकारो का गाम कह सकते हैं। यहा के एक-एक काय मे कला झलकती है। तावे और पीतल के वर्तनो को देखे या मिट्टी के वर्तनो को, सभी मे सुन्दर रग और सुन्दर चित्र उत्कीर्ण या आलिखित मिलेगे। और वातो की भाति कला मे भी दिह-वगान या उसके अन्दर्जगर एकदेशीयता को पसन्द नही करते। यहा चीन के ढग के भी चित्र देखे जाते और रोम के ढग के भी। भारतीय चित्रकला का तो वहुत अधिक सम्मान था। मित्रवर्मा पल्लव-चित्रकला के सिद्धहस्त चित्रकार थे और अपने मे कुछ समय पहले की उत्तर भारतीय-गुप्तकला के वडे प्रेमी पारखी भी। उन्हे अगले दिन सायकाल को मन्दिर मे जाने पर भीत्ति-चित्रो मे उसके सुन्दर नमूनो को देखकर वडा आश्चर्य हुआ था।

दूसरे दिन मित्रवर्मा के पूछने पर अन्दर्जार ने वतलाया—हम मनुष्य-मनुष्य मे भेद नही करते। हम अपने धम और पराये धर्म के विचार से मनुष्य का मोल नही लगाते। हमारे लिए विश्व के सारे मनुष्य भाई-भाई हैं। यदि कोई मार्ग भूला हुआ है, तो इसके कारण वह हमारा भाई छोड दूसरा नही हो सकता। जहा तक हमारे आतिथ्य और सहायता का सम्वन्ध है, हम पूर्ण मानव वन्धुता को मानते है, देश, काल या जाति का कोई भी भेद नही करते। हा, शत्रुओ से हमे सावधानी रखने की आवश्यकता होती है। हमारे लिए वह कितने भयकर हैं, इसे कहने की आवश्यकता नही।

मित्रवर्मा ने उनका समथन करते हुए कहा—अभी हाल ही मे उस भयकर रक्तपात से हम गुजरे हैं, जिसमे हमारे लाखो भाई-वहनो ने प्राण गवाए।

—इसीलिए हमे मनुष्यो से सावधान रहने की आवश्यकता पडती है। यहा इन दुर्गम पर्वतमाला मे और इन सच्चे किन्तु दुर्दान्त मनुष्यो मे दिह वगान को आच नही लग सकती, सभी इसे वगो (भगवानो, देवताओ) का दिह (गाव) मानते हैं। मनुष्य-मात्र से प्रेम और वन्धुता यही हमारे गुरुओ की शिक्षा है।

समान ही उनके अन्दर्जगर मज्दक-वामदातान भी थे। भोजन मे मास नही था, और न मदिरा ही, क्योकि अन्दर्जगर अपने उच्चवर्गीय अनुयायियो के लिए इन्हे अभक्ष्य-अपेय समझते थे। लेकिन मधु, मक्खन, चावल, गेहू, माष, सुस्वादु मेवे जहा बहुतायत से हो और पाककला से भी पूरा परिचय हो, वहा सैकडो तरह के स्वादिष्ट भोजन तैयार करने मे क्या कठिनाई हो सकती है? मित्रवर्मा और कवात् को यह भोजन बहुत ही मधुर मालूम हुआ और उससे भी मधुर भोजनशाला का वातावरण था, जहा न स्त्री और पुरुष का भेद था और न छोटे-बडे का। सब अकृत्रिम रूप मे एक-दूसरे से बात करते भोजन कर रहे थे। पीछे आगन्तुको को पता लगा, कि इस तरह की चालीस भोजनशालाए दिह बगान मे है, जहा सब लोग बैठकर इकट्ठा भोजन करते हैं। चाहते तो सारा गाव एक जगह भोजन कर सकता और सबकी एक भोजनशाला बनाई जा सकती, क्योकि भोजन का सारा प्रबन्ध सारे गाव की सम्मिलित पचायत की ओर से होता है।

दिह-बगान उन गावो मे था, जहा अन्दर्जगर, मज्दक और उसके पूर्वज गुरुओ का स्वप्न साकार रूप मे पृथ्वी पर उतारा गया था। यहा किसी की कोई वैयक्तिक सम्पत्ति नही, सारे फलोद्यान, सारे खेत, सारी जगम-स्थावर सम्पत्ति गाव के सारे व्यक्तियो की सम्मिलित सम्पत्ति है। जिससे जितना हो सकता है, वह कोई न कोई उपयोगी कार्य करता है—और लोग शक्ति से अधिक काम करने के लिए प्रयत्नशील रहते है। और जैसी जिसके लिए आवश्यकता होती है, उस परिमाण मे लोगो को चीज़े दी जाती हैं। रोगी और बच्चे काम नही करते, यही बात अधिक बूढे-बूढियो की भी है। लेकिन यहा काम भार-सा मालूम नही होता। लोग उसे अपने धार्मिक कर्त्तव्य का प्रधान अग मानते है इस प्रकार सबके सम्मिलित श्रम से उपार्जित फल हो या अन्न, दूध हो या मधु, सभी की सम्मिलित सम्पत्ति है। हा, मधु? दिह-बगान मे तो जान पडता है, उसकी सरिता बहती है। पास के पहाडो मे वृक्षो की अधिकता के कारण यहा के घरो मे लकडी का उपयोग अधिक है। हरेक घर मे दीवार के भीतर मधुमक्खियो के रहने के लिए, चारो तरफ से लकडी के फलको से घेरकर सन्दूक से घर बने है, उसमे बाहर की तरफ बहुत छोटा एक छेद मधुमक्खियो के भीतर जाने के लिए रहता है। छत्तो से मधु निकालने के लिए छोटी कपाटिका भी लगी होती है। दिह बगान अपने श्वेत मधु के लिए सर्वत्र प्रसिद्धि प्राप्त कर लेता यदि वह कोई व्यावसायिक

गाम होता।

दिह्-बगान मे सादगी है, लेकिन सादगी का यह अर्थ नही, कि वहा के लोगो का कला से प्रेम नही है। वे कला को अपने धर्म का अग मानते हैं। वे अच्छी तरह जानते हैं, कि उनके परमगुरु मानी फातिक-पोह् महान चित्रकार थे, वे सगीत के अद्‌भुत विद्वान थे। उनका काव्य और साहित्य पर पूरा प्रेम और अधिकार था। दिह्-बगान को हम कलाकारो का गाम कह सकते हैं। यहा के एक-एक काय मे कला झलकती है। तावे और पीतल के वर्तनो को देखे या मिट्टी के वर्तनो को, सभी मे सुन्दर रग और सुन्दर चित्र उत्कीर्ण या आलिखित मिलेंगे। और वातो की भाति कला मे भी दिह्-बगान या उसके अन्दर्जगर एकदेशीयता को पसन्द नही करते। यहा चीन के ढग के भी चित्र देखे जाते और रोम के ढग के भी। भारतीय चित्रकला का तो वहुत अधिक सम्मान था। मित्रवर्मा पल्लव-चित्रकला के सिद्धहस्त चित्रकार थे और अपने से कुछ समय पहले की उत्तर भारतीय-गुप्तकला के वडे प्रेमी पारखी भी। उन्हे अगले दिन सायकाल को मन्दिर मे जाने पर भीत्ति-चित्रो मे उसके सुन्दर नमूनो को देखकर वडा आश्चर्य हुआ था।

दूसरे दिन मित्रवर्मा के पूछने पर अन्दर्जार ने वतलाया—हम मनुष्य-मनुष्य मे भेद नही करते। हम अपने धम और पराये धर्म के विचार से मनुष्य का मोल नही लगाते। हमारे लिए विश्व के सारे मनुष्य भाई-भाई हैं। यदि कोई मार्ग भूला हुआ है, तो इसके कारण वह हमारा भाई छोड दूसरा नही हो सकता। जहा तक हमारे आतिथ्य और सहायता का सम्बन्ध है, हम पूर्ण मानव बन्धुता को मानते हैं, देश, काल या जाति का कोई भी भेद नही करते। हा, शत्रुओ से हमे सावधानी रखने की आवश्यकता होती है। हमारे लिए वह कितने भयकर है, इसे कहने की आवश्यकता नही।

मित्रवर्मा ने उनका समर्थन करते हुए कहा—अभी हाल ही मे उस भयकर रक्तपात से हम गुजरे हैं, जिसमे हमारे लाखो भाई-वहनो ने प्राण गवाए।

—इसीलिए हमे शत्रुओ से सावधान रहने की आवश्यकता पडती है। यहा इन दुर्गम पर्वतमाला मे और इन सच्चे किन्तु दुर्दान्त मनुष्यो मे दिह् वगान को आच नही लग सकती, सभी इसे वगो (भगवानो, देवताओ) का दिह् (गाव) मानते है। मनुष्य-मात्र से प्रेम और व धुता यही हमारे गुरुओ की शिक्षा है।

उन्होने इसे थोडे क्षेत्र मे व्यवहृत करना चाहा, मैंने उसे और व्यापक रूप दिया। उनको आरम्भ करना था, और आरम्भ मे इतना अवसर नही था। मैंने अब ऐसा अवसर देखा है, जबकि उसे मनुष्य-मात्र मे फैलाया जा सकता है। केवल बेघरो मे ही नही, घरवालो मे भी समान भोग और समान जीवन को व्यवहार-सगत बनाया जा सकता है। हमने अपने शिष्यो को मनुष्य-मात्र के साथ प्रेम करने की शिक्षा केवल मौखिक नही दी। हमने उन्हे इस प्रेम को कार्यरूप मे परिणत करने के लिए भिन्न-भिन्न देशो मे भेजा है। वे चीन मे गए, हिन्द मे गए, रोम और यवन देश मे गए है, यही नही वे दक्षिण मे अरब के तम्बूवासियो और उत्तर के हूण शक यायावरो मे भी हो आए हैं। प्रेम का मार्ग फूल की शय्या नही है, यह वह जानते हैं, और वे प्रसन्नता से इतनी कठोर यात्राओं के लिए तैयार हुए। साथ ही वह यह भी जानते हैं कि प्रेम से बढकर रक्षक दूसरा कवच नही। उन्होने भिन्न-भिन्न देशो और जातियो मे केवल अपनी बात सिखाने के लिए यात्रा नही की, बल्कि स्वय भी बहुत-सी चीजे सीखी, जो कि यहा दिह बगान म चलेंगी। सबसे बडी सीख जो उनको मिली, वह थी कूपमडूकता से निकलना।

—कूपमडूकता !

—हा, कूपमडूकता भारी अभिशाप है। यह अज्ञान का ही दूसरा नाम है, यद्यपि इसके नशे मे आदमी उसे समझ नही पाता। मुझे बहुत देशो मे घूमने का मौका नही मिला, यद्यपि मेरी बहुत इच्छा रही, किन्तु समय नही निकाल पाया और अब तो और भी कठिन मालूम होता है। लेकिन मैं अपने साथियो से दुनिया के बारे मे पूछा करता हू। जानने योग्य ससार बहुत बडा नही है, फिर क्यो न उसका ज्ञान प्राप्त किया जाए। रोमक ज्योतिषियो ने पृथ्वी को गोल कह कर उसकी लम्बाई-चौडाई भी निश्चित कर दी है।

—रोमक ज्योतिषी ही नही, हमारे एक आज भी जीवित भारतीय ज्योतिषी आर्य्यभट्ट ने पृथ्वी का व्यास १०५६ योजन, और परिधि ८००० योजन बतलाई है, लेकिन वह पृथ्वी को सूर्य के किनारे घूमने की बात कहता है, जिससे लोग उसे अधर्मी कह के बदनाम करते हैं।

—लोगो को नाहक दोष दिया जाता है—मज़्दक ने कहा— धर्म के व्यापारी इस तरह का विरोध करते हैं। सारा नवज्ञान सत्य ज्ञान हानिकारक अत अधर्म है। उस भारतीय ज्योतिषी ने ठीक ही बात कह डाली

निश्चय कर दी होगी ? उसने वर्षो रात-दिन इस खोज मे लगाए होगे। कुछ भी हो मुझे विश्वास है, पृथ्वी उतनी वडी नही है। हमारे बच्चे देशान्तरो से लौटे हैं। उन्होने कही पैदल यात्रा की, कही घोडे पर और कही सामुद्रिक जहाजो पर भी। चीन से नौ मास मे हिन्द (सिन्ध) नदी के सगम पर जहाज पहुचता है और वहा से दो मास मे तस्पोन्, यवद्वीप से नौ मास मे तस्पोन् पहुचते हैं। खुतन (खोतन) तस्पोन् से केवल चार मास का रास्ता है। रोम और यवन तो और नजदीक हैं। यहा से दो महीने मे उत्तर के हूण घुमन्तुओं के देश मे पहुचा जा सकता है। हमारे लोगो को इस देश-ज्ञान से बहुत लाभ हुआ। हमारी जडता इससे दूर हुई, साथ ही हमने इसका आर्थिक लाभ भी पाया है। आज हमारी गायें तुमने देखी हैं।

—हा, मैंने यहा कुछ गाये अपने देश जैसी देखी।

—और कुछ रोम और यवन देश जैसी भी हैं। हमारी यह गायें साधारण गायो से अधिक दूध देती हैं और अधिक मक्खन भी। हमने भिन्न-भिन्न देशो से गाये और बछडे मगवाए, कवात् के शासनकाल मे इसमे और भी सुभीता मिला। अब हमारे यहा अधिक से अधिक दूध-घी देनेवाली गायें है। इसी तरह घोडो की जाति को भी हमने बेहतर बनाया है। भिन्न-भिन्न देशो की अच्छी जाति के घोडो के समिश्रण से ऐसा हुआ। अभी ताजे फल नही हैं, किन्तु पुराने फलो को तुमने खाया है।

—हा, वह बहुत बडे और मीठे हैं। किन्तु वह छ-छ महीने तक कैसे ताजे बने रहे ?

—रखने की विधि है। अच्छे पौधो के तैयार करने की युक्ति है। हमारे यहा की द्राक्षा, सेब, नाशपाती, उदुम्बर, खर्बूजे-तर्बूजे किसी चीज को ले लो, सबसे मीठे और सबसे बडे फल यहा दिह-बगान मे मिलेगे। यदि दिह-बगान केवल अपने बल पर वैसा करना चाहता, तो कभी उसे सफलता नही होती। उसे सभी देशो का सहयोग मिला है। सभी देशों के मानव-बन्धुओ ने अपने अनुभवो को हमे सिखलाया है, इसीलिए इतने कम समय मे दिह-बगान को यह सारी नियामतें मिली।

नवागन्तुक व्यक्तियो मे यद्यपि दो ही ऐसे थे, जिन्होने इस अद्भुत ग्राम को पहले नही देखा था। किन्तु पहले देखे हुओ के लिए भी यहा की हर नई यात्रा मे

कुछ नई चीजें देखने को प्रस्तुत रहती थी, क्योंकि दिह्-बगान के निवासी नि-नवीनता के पक्षपाती थे। कभी वहा नये ढग के मकानो की पक्ति तैयार देखने मे आती, कभी कोई नई नहर निकली दिखाई पडती, कभी पहाडी भूमि और जगल को काटकर समतल करके नये खेत और बाग तैयार किए दीख पडते, कभी नदी किनारे नई आटा पीसने की पनचक्किया या लकडी के बर्त्तनो तथा दूसरी वस्तुओ के लिए पन-खराद लगे मिलते।

आज-कल खेत बोये जा चुके थे। कुछ अब और कुछ जाडे मे पहले के बोये खेत थे। दोनो मे हरियाली छाई हुई थी। उनमे कही निराई का काम हो रहा था और कही सिचाई का। स्त्री-पुरुष अपने-अपने काम मे लगे हुए थे और उनके सम्मिलित सगीत के स्वर से पता लगता था, कि उन्हे यह काम श्रम का काम नही मालूम होता। यहा के खेत बहुत बडे-बडे थे। जब वे सारे गाव की सम्मिलित सम्पत्ति थे, और मा-बाप से बेटो तथा बेटो से पोतो मे टुकडे टुकडे होकर बटने वाले नही थे, तो बडे क्यो न होते? एक खेत मे काम करने वाले नर-नारियो के [illegible] का उत्तर दूसरे खेत वाले दे रहे थे। गाने की होड की भाति जान पडता [illegible]म की भी होड लगी थी। बागो मे भी कही खोदने और कही सूखी [illegible] वृक्षो के निकालने का काम चल रहा था।

लेकिन दिह्-बगान के सारे निवासी खेतो और बागो मे ही नही थे। [illegible] [illegible]टे बच्चे अपने खेलो मे लगे थे, जिनमे ही कवान-पुत्र कासिम भी था। उनमे [illegible]ने पढने मे लगे थे। दिह्-बगान का कोई निवासी ऐसा नही था, जो [illegible] न सके। परमगुरु मानी ने जिस पूर्ण लिपि को तैयार किया था उसी मे यहा सारी पढाई होती थी। कुछ ऊपरी श्रेणी के बडे विद्यार्थी थे, जिनमे [illegible] ग्राम के बाहर के थे और जिन्हे पिछली राजनीतिक आधी ने यहा ला फेका था। ये विद्यार्थी दूसरे देशो के धर्मो को ही नही, विद्याओ को भी पढ रहे थे। [illegible] यवनानी भाषा के ही द्वारा पढते थे। यवन दार्शनिक प्लातोन और अरिस्तातिल का यहा आदर था, साथ ही अध्यापक ने भारतीय नागार्जुन, असग और [illegible] के दर्शन, विशेषकर तर्कशास्त्र की बडी प्रशसा की। यहा देखने से पता [illegible] क्यो देरेस्तदीन वाले इतने उदार होते है। दर्शन के अध्यापक ने बतलाया अधकार या अज्ञान भय की वस्तु है, ज्ञान या प्रकाश तो केवल [illegible] बटमारो के लिए ही भयावह हो सकते है।

दिह् वगान अपने उपयोग की सारी वस्तुए तैयार कर लेता है और बहुत कम चीजे बाहर से मगाता है। परिधान की वस्तुओ मे थोडा रेशम और कुछ कपास के कपडे ही बाहर मे आते हैं। ऊनी वस्त्र बनाने मे बहुत कम-स्थान यहा का मुकाबला कर सकेंगे। यहा एक ही दो तरह के महत्त्वपूर्ण कपडे नही बनते, बल्कि ऊनी कपडो के अच्छे से अच्छे नमूने यहा तैयार होते हैं, । कुछ मे सीधे ताने-बाने की विचित्रता देखने मे आती है । कुछ मे फूल-पत्ते निकालने की। कुछ कचुक के काम के कपडे होते और कुछ ओढने के । फर्श पर बिछाने से सुन्दर कालीन, अनेक फूल-पत्तो और भिन्न-भिन्न काल और स्थान के दृश्यो से अलकृत तैयार किए जाते । वह नाना प्रकार के प्राकृतिक दृश्यो सहित महापुरुषो की जीवनियो तथा उपदेशप्रद कहानियो से चित्रित कर दीवार के कालीन भी बनाए जा रहे थे। कलाचार्य चित्रशाला मे अपने शिष्यो को चित्रविद्या सिखाने और मूर्तिनिर्माण कराने मे लगे थे।

इस पर भी अन्दर्जगर का कहना था—हम जानते हैं, कि हम अपने एक छोटे गाव मे विश्व की सारी सुन्दर चीजो को नही ला सकते, उसके लिए तस्पोन् भी पर्याप्त नही हो सकता। हा, तस्पोन् बडा नगर भले ही हो, लेकिन वह दिह्-वगान की समानता नही कर सकता । कहा वहा लोगो के रक्त के गारे से उठाए महल, भूखे रखकर दूसरो से छीन कर लाए भोग और कहा दिह्-वगान, जहा रक्त निकालने और भोग छीनने की कल्पना भी नही हो सकती।

अगला दिन आगन्तुको का या तो गाव या उसके बाहर घूमते लोगो को काम करते, खेलते, खाते देखने या अन्दर्जगर से वार्त्तालाप करने मे बीता। सायकाल को अन्दजगर के साथ वे मन्दिर मे गए। इस विशाल मन्दिर मे यद्यपि गाव के सभी नर-नारी नही बैठ सकते थे, किन्तु एक सहस्र तो जरूर वहा आ सकते थे। सामने की दीवार पर एक विशाल चित्र अकित था, जिसमे सिहासन के ऊपर भगवान अहुमज्द थे, जिनके कन्धो पर पख और सिर पर मुकुट था । उनकी अगल-बगल मे चार बग (देवता)—अन्वेपण, ज्ञान, स्मरण और आनन्द—खडे थे, उसी तरह जैसे कि अयरान के शाहशाह की अगल-बगल मे मगोपतान्-मगोपत्, हेर्पत-वचुर्क, अस्पाह्पत और रामशगर रहते। इनके नीचे सात दूसरे अधिकारियो की भाति बारह दूत दूसरी कतार मे भगवान की सेवा मे हाथ बाधे खडे थे, जिनके नीचे ये बारहो नाम लिखे हुए थे—स्वानन्दक (स्वनन्तक),

देहन्दक (ददन्तक) वरन्दक (भरन्तक), स्वरन्दक (स्वरन्तक), दवन्दक (गाय-न्तक), स्वेजन्दक (उत्तिष्ठन्तक), कुशन्दक (ताडन्तक), जनन्दक (हनन्ता), कुनन्दक (कुण्वन्तक), आयन्दक (आयान्तक), शवन्दक (शवन्तक) और पाव न्दक (पावन्वक)। उनके नीचे अकामेनू (शैतान) हाथो पैरो मे शृंखलाबद्ध, नत-शिर दिखलाया गया था। दीवारो के बाकी भागो मे भी तरह-तरह के दृश्य चित्रित किए गए थे, जिनमे कुछ मे मानी के जीवन की घटनाए थी—उसका प्रथम अदशीर के शासनकाल मे भारत जाना, प्रथम शाहपोह (शापोर) के शासनारूढ होने पर उसके दरबार मे जाना, लोगो के सामने उपदेश देना और ससार के सामने घोषित करना—"अब्जेर्वानग् इश्-इश्नोसाग हेम। चे अज वाबेल् जमिग् विस्प्रेख्त।" (मैं अबजेरवानग् का आदमी हू और बाबुल जमीन से सदेश पहुचाने के लिए आया हू।) "स्वर्ख् शेव् इ रोशन उद् पूर् माह अजाग्।" (सूर्य प्रकाशमान और पूर्णचन्द्र दीप्तिमान है।) एक चित्र मे मानी को दार पर खीचा गया और दूसरे मे उसके सिर को काट कर गु देशापूर के एक द्वार पर दिखलाया गया था।

चित्रो मे कुछ बुद्ध के जन्म, उपदेश और निर्वाण से सम्बन्ध रखते थे और मे बुद्ध के परोपकारमय जीवन की जातक कथाए बडी सुन्दरता से भार तीय ढग से चित्रित की गई थी। मित्रवर्मा के लिए यह उतनी अचरज की नही हो सकती थी, क्योकि पहिले ही से वह जान चुका था, कि मानी ने भारत मे जाकर बुद्ध के उपदेशो का अध्ययन ही नही किया था, बल्कि उनमे से कितनी ही बातें स्वीकार भी की, जिनमे ससार मे फिर जीवन धारण करना भी एक था, जो कि पश्चिम के किसी धर्म मे नही माना जाता था। ईसा की भी कुछ जीवन-घटनाओ को बडे भावपूर्ण रूप मे अकित किया गया था। मन्दिर की एक पूरी दीवार मज्दक के अपने मधुर स्वप्नो के लिये सुरक्षित थी। यहा जहा पर पृथ्वी पर स्वर्ग लाने के प्रयत्न चित्रित किये थे, वहा भविष्य की सुन्दर झाकी भी दी गई थी। मनुष्य के पूर्णतया समान होने, सबके समान कार्य करने और समान भोग के अधिकारी होने, सबमे मानव-प्रेम को प्रचारित और स्वीकृत होने से कैसे गाव, कैसे नगर और कैसी दुनिया बनेगी, इसे दिखलाया गया था।

अन्दर्जगर ने नर-नारियो, वृद्धो-बच्चो से भर मन्दिर मे प्रार्थना शुरू की "हे वगानवग् अहुर! तूने स्वर्ग मे अकामेन् को पराजित किया और उसे धरा पर

दिया, कि वह फिर सिर न उठा सके। लेकिन अब भी हमारे हृदयो को उसने रणागन बना रखा है। अब भी हमारे भाई-बहनो मे 'मेरा-तेरा' का भाव बना है, अभी भी उनमे राग है और द्वेष है। हे मज्दा ! हमे बल दे, कि जैसे तूने अकामेनू पर विजय प्राप्त की, उसी तरह हम अपने हृदय पर विजय प्राप्त करें और तेरे यशस्वी पुत्र बने। "

अपने अन्दर्जगर के साथ सभी लोगो ने वगानूवग् की प्रार्थना की, फिर अन्दर्जगर के सक्षिप्त उपदेश को सुना। अन्दर्जगर बेकार के उपदेश के पक्षपाती नही थे। वह उपदेश स्वय अपने काम से देते हैं, इसीलिए उनके सक्षिप्त उपदेश का भी बहुत मान था। प्रार्थना और उपदेश के आदि, मध्य और अन्त मे सगीत से सारी शाला मुखरित हो गई।

मन्दिर मे अब भी कुछ लोग थे, जब कि अन्दर्जगर अपने अतिथियो के साथ बाहर निकले। उन्होने मित्रवर्मा को सम्बोधित करके कहा—आज देख रहे हो, यह भूमि कितनी गो और गोस्पन्दो (भेडो) से पूर्ण है, कितने सुन्दर उद्यान और खेत यहा लगे हैं। तीस साल पहिले यहा आदमी का वास नही था, भूमि कही ऊची-नीची और कही पत्थरो से भरी थी। आज यह जो सुन्दर परिवर्तन दिखाई दे रहा है, यह आदमी के हाथो का चमत्कार है। मज्दा ने धरती, आकाश, पर्वत, पानी सब बनाया, साथ ही आदमी को कितना सुन्दर ही नही, कितना चमत्कारिक हाथ दिया, ऐसा हाथ जो मनुष्य छोड किसी के पास नही है। उसी हाथ ने यह सब कुछ किया। उस हाथ से काम करो, ससार मे दुख का लेश नही रह जाएगा। उस हाथ को बेकार छोडो, फिर दुनिया भर के पाप होने लगेंगे। मज्दा ने हाथो को बेकार या बदकार होने के लिए नही बनाया। जो बदकार और बेकार हैं, वह हाथो से वह काम नही लेते, जिनके लिए कि वे बनाए गए। लेकिन मनुष्य कब तक इस सत्य को नही समझेगा, और कब तक अकामेनू (शैतान) के ओछे से अनुचरो की बात मे पड कर गुमराह होता रहेगा। अन्त मे मनुष्य अवश्य अपने ध्येय पर पहुचेगा, वह ध्येय है—समस्त मानवो की समता, परस्पर प्रेम और सार्वत्रिक सुख-समृद्धि !

१३

समता

दिन जाते देर नही लगती, दिनो और सप्ताहो के बीतने के साथ दिह् वगान की प्रकृति मे भी नए परिवर्त्तन आए। उस दिन साप्ताहिक छुट्टी थी। मध्याह्न भोजन के उपरात ग्राम के नर-नारी वन-उपवन-चारिका के लिए निकले थे। किसी की पोशाक (कचुक और सुत्थन) पीली थी, किसी की नीली, किसी की हरी, किसी की लाल तथा किसी-किसी की सफेद भी थी। कुछ स्त्रियो ने अपने पिंगल, अरुण या कृष्ण-श्वेत केशो को जूडे की तरह पीठ की ओर बाध रखा था, किन्तु अधिकाश मुक्त-केशिया थी। लोग उद्यानो, नहर-तटो और वनो की ओर बिखरते जा रहे थे। सेव के वृक्ष अब हरे पत्तो से ढक गए थे, किन्तु उनमे पत्तो की अपेक्षा फल अधिक थे। अभी-अभी उनके फलो पर सूमरित रक्तिमा चढने लगी थी। फलभार के मारे कितनी ही वृक्ष-शाखाए भूमि तक पहुच गई थी, और कितनो को टूटने से बचाने के लिए थूनियो का अवलम्बन दिया गया था। अगूर की पेडिया या लताए अब बडे-बडे हरे-हरे पत्तो से ढक गई थी और उन पर हरे फलगुच्छक मोती की लडी की तरह से पिरोये जा रहे थे। यद्यपि अभी फलो के पकने मे दो-तीन मास की देर थी, किन्तु नेत्रो और हृदय को तृप्त करने के लिए वे अब भी सक्षम थे। उद्यान की क्यारियो और कुल्या-तटो पर कही-कही रग-बिरगे गुलाब खिले हुए थे, जिनमे से कुछ दिह्-वगान की सुन्दरियो के केशो की शोभा बढा रहे थे। उद्यान और खेत के बाहर भूमि ना प्राकृतिक पुष्पवाटिका का रूप ले चुकी थी। नर-नारी कही-कही बच्चो के साथ भी छोटी-छोटी टोलियो मे बैठे थे। कही गीत-मडली जमाई जा रही थी और कही ऐसे ही वार्त्तालाप चल रहा था। एक जगह नहर के किनारे मखमली-मखमल जैसी हरी घास पर तीन जोडिया स्त्री-पुरुषो की बैठी थी, सभी तरुण थे, किसी की आयु ३० से ऊपर नही थी। यहा हमारे चिरपरिचित तीन अतिथि मौजूद थे — मित्रवर्मा के पास सम्बिक् बैठी थी, ववान् के पास सुवर्णाक्षी और गिरिधर के पास एक नीलाक्षी। तीनो घास पर कुछ बैठे और कुछ भूमि पर सहारे से दिखाई पड रहे थे। सम्बिक् शाही-महल की परम सुन्दरी सामानी अनिन्दा थी। चम्बिरन् (महारानी) यहा दूसरी नारियो से भिन्न नही मालूम हो रही थी।

अकृत्रिम रूप से मित्रवर्मा के मुख की ओर देखती निभृत-वार्त्ता मे लीन थी। उसके पास ही कवात् अपनी सुवर्णाक्षी तरुणी के हाथ को अपने हाथो मे लिए स्मित मुख कोई बात कहते उसे हसा रहा था, सियावख्श भी अपनी नीलाक्षी को न जाने किस साहस-यात्रा की बात कह रहा था कि वह चमकती पुतलियो के साथ बडे ध्यान मे उसकी ओर देख रही थी।

दिह्-वगान मे इतनी श्रेष्ठ और अधिक परिमाण मे सौन्दर्यराशि एकत्रित थी, कि यहा आने पर दुनिया की बहुत सी श्रेष्ठ सुन्दरियो का गर्व खर्ब हुए बिना नही रहता। नम्बिक् तो यहा की कोमलागियो किन्तु दृढ बाहुकाओ को देखकर कहती थी—मैं इनका पानी भरने लायक भी नही हू।

थोडी देर के भीतर ही एक दूसरे से पूछकर तीनो सुन्दरियो ने कोई मधुर गीत गाया, नीलाक्षी का स्वर कोकिल-कठ को लज्जित कर रहा था। गीत समाप्त होते-होते कवात् ने कहा—दिह्-वगान ठीक नाम है। यह वगो (भगवानो, देवताओ) का गाव है।

मित्रवर्मा ने उसकी बात पूरी करते कहा—वगो और वगो के लोक की कल्पना इससे अधिक ऊची नही जा सकती थी, जो कि हम यहा देख रहे हैं।

सियावख्श—कितना मुक्त वातावरण और कितना मधुर तथा आनन्दमय!

कवात् ने नम्बिक की ओर दृष्टि करके कहा—और तुम कैसा अनुभव कर रही हो नम्बिका?

—क्या ईर्ष्या तो नही हो रही है?

कवात् ने सुवर्णाक्षी के हाथो को उसी तरह लिए हसते हुए कहा—वगों के लोक मे ईर्ष्या कहा नम्बिका! किन्तु तुम्हारे साहस को स्मरण करके मुझे आश्चर्य होता है।

नम्बिक् ने मित्रवर्मा के हाथो मे से अपने हाथो को लेकर उसे कवात् को दिखलाते हुए कहा—पीरोज दुरुस्त अब वह नही हैं, अब वह देखने मे कोमल होते हुए भी भीतर से उसी तरह फौलाद-सी होती जा रही हैं, जैसी दिह्-वगान की दूसरी नारिया। अब मैं उनके साथ बराबरी के साथ खेतो मे काम करती हू, उनके साथ गाने और नाचने की होड लगाती हू,

कवात् ने व्यग करते हुए कहा—देखना नम्बिका! कही बाहर से भी

फौलाद न हो जाना, भीतर से तो फौलाद बन ही गई हो।

नीलाक्षी ने कवात् को अबकी जवाब दिया—दिह-बगान की नारियां यदि भीतर और बाहर से फौलाद की बन ही गई हो, तो भी उन्हें मोम की बनते देर नही लगती। पीरोज-पोह्र को चिन्ता नही करनी चाहिए, म्याहर (बहिन) सम्विक् सब कुछ होते भी अपनी कोमलता को नही छोड सकेगी।

सब लोग उसी वार्त्तालाप की ओर ध्यान किए हुए थे। अब की मित्रवर्मा ने मुह खोला—मेरे लिए और शायद आप सबके लिए भी यह कैसी दूसरी मधुर दुनिया दिखाई पड रही है। यहा चिन्ता और कटुवचन स्वप्न हो गए है। यहा भूमि, आकाश, वायु और पास बहती कुल्या मे भी केवल प्रेम प्रवाहित हो रहा रहा है, इन दो महीनो के निवास मे मैंने अनुभव से देखा, एक मनुष्य दूसरे मनुष्य से भिन्न है, इसलिये कभी-कभी आपस मे मतभेद हो सकता है, लेकिन उसका प्रभाव क्षणिक होता है। क्योकि यहा के वातावरण म प्रेम, सहानुभूति बहती रहती है, यहा द्वेष के लिए स्थान नही और न आर्थिक लोभ की गुजाइश, और यही जगत को कटु बना देते है।

सियावख्श—सुख और शान्ति का जीवन मनुष्य को ऊपर उठाता न?

मित्रवर्मा—कितने ही सदेह करते हैं, कि सुख और शान्ति के जीवन म आदमी स्वार्थी और कायर बनता है। लेकिन सम्विक् ने पहिले ही अपने उदाहरण से इस बात को झूठा सिद्ध कर दिया।

सम्विक् ने अपने अरुण कपोलो को और भी अरुण करते कहा—नही मित्र! मेरी प्रशसा मुख पर तो न करो। मैं समझती हू, मेरी यह दोनो सखिया ही नही, बल्कि दिह-बगान की जितनी तरुणियो से मुझे परिचय प्राप्त है, सभी समय पाने पर अद्भुत वीरता दिखाए बिना नही रहगी।

मित्रवर्मा ने सम्विक् के रेशम जैसे कोमल सुवर्ण-केशो के स्पर्श म अनिर्वचनीय आनन्द-सा अनुभव करते हुए उनके दीर्घ-पक्ष्मल विशाल नेत्रो की ओर देखते हुए कहा—सम्विका! रोष मत करो, जीवन का भोग अज्ञान-पूर्वक भी होता है और ज्ञानपूर्वक भी। कायरता वही आती है, जहा भोग अज्ञानपूर्वक [illegible] जाते है। लेकिन अज्ञानपूर्वक भोग करने वालो मे भी हम दो [illegible], [illegible] और उनके सामन्त-भट भोग का दाम चुकाने के लिए [illegible]

कूदते हैं शत्रु से भिडते हैं। दिह्-ब्रगान के नर-नारियो के लिए तो कहना ही क्या, जिनके सामने एक उच्च आदर्श काम करा रहा है और जो चाहते हैं कि ऐसे दस-पाच गाव नही, बल्कि सारा देश दिह्बगान जैसा हो जाए। मैं ही जानता हू इन उच्च आदर्शों के मतवालो मे आकर मुझे कितना आनन्द प्राप्त हुआ।

सियावरश ने अपने को रोकने मे असमर्थ हो कहा—मित्र! और तुम भी हमारी आग मे कूदे, जान को जोखम मे डाला।

मित्रवर्मा ने कुछ अनमना होकर कहा—नही बात! मैंने उससे कुछ भी अधिक नही किया, जो कि अन्दर्जगर के साधारण अनुयायियो को भी मैंने करते देखा। मेरा भी तो दुनिया मे घूमना उसी आदर्श और सत्य की खोज के लिए है, मैं भला उनसे कैसे पीछे रह सकता था?

अन्तिम वाक्य समाप्त नही होने पाया था कि अन्दर्जगर आके सम्विक् की बगल मे बैठ गए और लोगो के बात मे व्यवधान न होने देने के लिए बोले—मैं भी सुनना चाहता हू मित्र! आशा है तुम सकोच न करोगे।

अन्दर्जगर की उपस्थिति से सबके नेत्रो और मुख पर विशेष-प्रकार की आभा दौड गई, किन्तु सभी पूर्ववत् अपनी जगह पर बैठे रहे। मित्रवर्मा ने अपने वाक्य के क्रम को आगे बढाते हुए कहा—पहिले ही दिन मन्दिर मे नर-नारियो को रक्त-पट पहिने देखकर मुझे अपने देश के किसी की स्मृति हो आई।

—बुद्ध शाक्यमुनि की?—अन्दर्जगर ने कहा।

मित्रवर्मा का मुख अधिक विकसित हो उठा और उसने कहा—हा, अन्दर्जगर ने वही बात कही, जो मैं अपने मन मे सोच रहा था।

अन्दर्जगर—इसमे कोई चमत्कार समझने की आवश्यकता नही है। यह रक्त-पट बुद्ध के ही सघ से लिया गया है।

—हमारे यहा रक्त पट (ताम्रसाटीय) भिक्षु-भिक्षुणियो का एक प्रसिद्ध वर्ग है, कुछ स्थानो पर अरुण या पाडुरवर्ण के भी परिधान (चीवर) पहने जाते हैं, किन्तु गधार और काश्मीर की ओर रक्त-पट की प्रधानता है।

अन्दर्जगर—हमारे परम गुरु मानी फातिक-पोह्र भारत की यात्रा मे काश्मीर, गधार ही गए थे। बुद्ध की शिक्षा और भिक्षुओ के नियमो का अध्ययन करके उन्होने बहुत-सी बाते अपनायी। यद्यपि मानी ने अपने मज्दयस्नी धर्म के अतिरिक्त दूसरे सारे धर्मो का अध्ययन किया था, यवन दर्शन का भी अवगाहन

किया था, किन्तु वे बुद्ध के धर्म मे जितने प्रभावित हुए, उतने किसी से नही। उनकी प्रकृति थी, गुण सबसे लेना, किन्तु दूसरो के अवगुणो को गिनने न दिना। यह भी उन्होने बुद्ध से ही सीखा। धर्म की सेवा मे सदैव तत्पर रहनेवाले स्त्री पुरुषो के लिए अविवाहित रहना भी उन्होने बौद्ध भिक्षुओ से सीखा और प्राणि-मात्र पर दया और सबमे समता का भाव भी। हमारे गुरुओ ने जो बात नहीं की थी और आज मैं व्यवहार मे ला रहा हू, उस पर भी बुद्ध के विचारो की छाप है। मित्र! जानते हो न त्रिरत्न को?

मिश्रवर्मा—बुद्ध, धर्म और सघ।

—हा, बुद्ध अर्थात् ज्ञानी या परमज्ञानी। दुनिया का कल्याण ज्ञानी की शरण मे जाने से हो सकता है, अज्ञानियो, स्वार्थियो और पाखण्डियो की शरण मे जाने से कभी कल्याण नही हो सकता। तुम जिसे धर्म कहते हो, उसी को हम देरेस्तदीन (सम्यक्-मार्ग) कहते है, जिस पर चलने वाले कभी दूसरे का अनिष्ट नही करना चाहेगे। इसी मार्ग से व्यक्ति और समष्टि सबका कल्याण हो सकता है। ऐसे धर्म की शरण जाने मे कौन से बुद्धिमान पुरुष को सकोच हो सकता है? और तुम्हारे तीसरे रत्न सघ को तो हम सबसे अधिक मानते है, और सबको सघ की शरण मे ले जाना चाहते हैं। बुद्ध जिस देश और काल मे हुए थे, वहा पूरा सघवाद अपने व्यवहार मे नही लाया जा सकता था। देश काल की भी सीमाए होती हैं, व्यवहार-प्रधान महापुरुष ऐसे समय मार्ग का सकेत भर करके छोड देते हैं। हम जिस सघवाद को आज फैला रहे हैं, मुझे विश्वास है, कि शाक्य मुनि को उसका परिचय था। मैंने उनके सभी उपदेशो को पढ़ने का अवसर नही पाया, और न ईरानी अथवा सोग्दी भाषा मे सबका अनुवाद है, तो भी मुझे विश्वास है कि बुद्ध सघवाद के समर्थक थे। मित्र! तुमको अधिक पढ़ने और जानने का अवसर मिला है, क्या बुद्धोपदेश मे कहीं ऐसी बात या उसकी ध्वनि देखने मे आई?

मुझे देगी, तो तुझे व्यक्ति को दान देने का पुण्य प्राप्त होगा और यदि सघ को दोगी तो साघिक दान का। व्यक्ति चाहे कितना ही बडा हो, किन्तु वह सघ के बराबर नही हो सकता। इसलिए यदि तू महापुण्य की भागिनी होना चाहती है तो इसे मुझे न दे, सघ को दान कर दे। इसी समय बुद्ध ने यह भी कहा था कि आज ही नही भविष्य काल मे सघ चाहे अयोग्य व्यक्तियो से ही बना हो, तो भी उसकी महिमा मुझसे बडी होगी, क्योकि मैं एक व्यक्ति भर हू।

अन्दजगर के दाढी से अनावृत मुख पर पूरी प्रसन्नता छा गई और उन्होने उल्लसित स्वर मे कहा—मुझे इसका विश्वास था मित्र! मैं बुद्ध को अद्वितीय पथ-प्रदर्शक मानता हू उनकी बुद्धि अनुपम थी, उनका हृदय असीम था। मैं समझता हू, यदि उन्हे सभव जचा होता, तो अपने सघवाद और समतावाद को सारी जनता मे फैलाने से वह बाज न आए होते।

मित्रवर्मा—उनका जो सघवाद या साम्यवाद था भी, उसे पीछे के राजाओ और सामन्तो ने बरबाद कर दिया।

अन्दर्जगर—उनका स्वार्थ इसी मे है। हमारे गुरुओ ने बुद्ध की भाति इहलोक और परलोक दोनो के सुख के लिए लोगो को मार्ग दिखलाया। बुद्ध की तरह उन्होने भी थोडे से नर-नारियो मे समता के आदर्श को व्यावहारिक रूप देना चाहा लेकिन विषमता के समुद्र मे समता का द्वीप ठहर नही सकता।

मियावर्मा—विषमता का समुद्र कभी उसे सह्य नही कर सकता। समता अपनी शक्ति से विषमता के समुद्र को सोख सकती है, क्योकि समता से लाभ उठाने वाले अनन्त व्यक्ति है, जब कि विषमता से लाभ पाने वाले मुट्ठी भर।

अन्दजगर—लेकिन हमारे आचार्यो और बुद्ध ने भी अपने साम्यवाद को भोग की समानता ही तक सीमित रखा था। भोग के उत्पादन मे समान श्रम के [illegible] का उन्होने आश्रय नही लिया, इसीलिए वहा दिह-वगान नही, भिक्षु-भिक्षुणियो के मठ भर बन पाए, जो अन्त मे अपनी चहारदीवारियो के भीतर भी समता को सुरक्षित नही रख सके।

नासिका ने अब की अन्दजगर की तरफ बडे स्नेह और सम्मान की दृष्टि से [illegible] हुए कहा—केवल भोग की समानता सचमुच अधूरी ही समानता नही [illegible] वैसी समानता है जिसकी जड भूमि के भीतर गड नही सकती।

[illegible] ने [illegible] के पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा—ठीक कहा

सम्विक् ! समानता से उत्पन्न की हुई सामग्री ही भोग-साम्य को भी स्थाई बना सकती है, साथ ही उत्पादन का श्रम बड़े आनन्द की वस्तु है।

सम्विक्—मुझे इसके बारे मे अपना तत्काल का अनुभव है। एक मास तक मेरे शरीर को कष्ट ज़रूर मालूम होता रहा, हाथो मे छाले भी पड गए, किन्तु उसके बाद शरीर कितना हल्का और कितना उत्साहयुक्त मालूम होता है ? मा तो काम भी गीत और नृत्य की तरह एक प्रसन्नता की वस्तु मालूम पड़ता है।

अन्दर्जगर—किन्तु प्रसन्नता की वस्तु तभी तक सम्विक् ! जब तक उसे मात्रा के भीतर किया जाए। स्वादिष्ट भोजन भी मात्रा से अधिक होने पर दुस्वादु हो जाता है। अस्तु, इसीलिए मैंने भोग साम्य को श्रम-साम्य के बिना अधूरा समझा। लेकिन श्रम मे उत्पन्न सामग्री मे समता का आदर्श इतो ही स चिरस्थाई नही हो सकता। भाई-भाई मिलकर प्रेम से काम करते है, कुछ समय तक उनमे प्रेमपूर्वक भोग-साम्य भी चलता है, किन्तु आगे वह समता टूटने लगती है, जब कि उनकी पृथक्-पृथक् सतानें आन उपस्थित होती ह। हरेक भाई अपनी ,तान का पक्षपात करने लगता है, जिनके जितने अधिक बच्चे हैं, उतनी चिन्ता ... ही अधिक बढती है। और वे उतने ही अधिक निजी स्वार्थ के फेर म पडने लगते हैं। इसका परिणाम बडी कटुवाहट के साथ उनका विलगाव होता है। हमारे तथा कुछ दूसरे गुरुओं ने इसका इतना ही उपाय सोचा, कि विवाह ही न किया जाए।

मित्रवर्मा—हमारे यहा हिमवन्त के पास एक दूसरा उपाय भी साथ निकाला गया, या पहिले ही से चला आ रहा है।

सम्विक् ने बीच मे टोक दिया—सो क्या मित्र ?

मित्रवर्मा—यही कि सभी भाइयो की केवल एक पत्नी हो, जिससे सभी की सतानें सम्मिलित हो।

साधना के लिए हो सकता है। एक माता-पिता की संतानो मे प्रेम स्वभावत होता है, उसको बाध करके रखना कम कष्ट-साध्य है, किन्तु इसके द्वारा मानव-मात्र मे प्रेम का प्रसार नही किया जा सकता। सम्बन्ध-निषेध करके साम्य-धर्म की रक्षा तो मुझे अस्वाभाविक मालूम होती है, क्यो कवात् ?

—कवात् के ही हृदय की बात बोल रही हो।

सुवर्णाक्षी—इसे अस्वाभाविक मैं साधारण दृष्टि से कह रही हू, एकाध ऐसे व्यक्ति हो सकते है, जो अपने उच्च आदर्श मे तन्मय रहने के कारण उधर आकृष्ट न हो।

नीलाक्षी ने असतोष प्रकट करते हुए कहा—इसकी भी क्या आवश्यकता है ख्वाहर ! क्या पास मे खिले सुन्दर गुलाब को देखकर सूघने की इच्छा बुरी है ? यदि सुवर्णाक्षी के दीर्घ-नेत्रो मे आकृष्ट होकर कोई चुम्बन दे दे, तो यहा कौन-सा बडा अन्तर हो जाता है ? मियावख्श यह प्रशस्त ललाट, तुग नास, पीत श्मश्रु, कम्बु ग्रीव, वृष स्कन्ध, पीनउरस्क पुरुष यदि किसी सुवर्णाक्षी, नीलाक्षी या सम्विक् को हठात् एक स्पर्श के लिए आकृष्ट करे, तो कौन-सी अस्वाभाविक बात हो जाती है ? मैं तो समझती हू, प्रेम जीवन का स्वाभाविक रस है। हा, हमे हरेक चीज को अति मे नही जाने देना चाहिए।

मित्रवर्मा—अर्थात् मध्म मार्ग पर रहना चाहिए क्यो ?

नीलाक्षी—ठीक कहा मित्र ! लेकिन अब हमे अन्दर्जगर से सुनना चाहिए।

अन्दर्जगर—ठीक है नीलाक्षी ! हरेक चीज सीमा के भीतर ही अच्छी होती है, तभी जीवन के हरेक अग का सामजस्य रहता है। यदि प्रेम का परिणाम दो ही तक सीमित रहता, तो मानव वग होते।

मित्रवर्मा—वग भी भिन्न नही होते अन्दर्जगर ! हमारी कथाओ मे मेनका-रम्भा आदि वगनियो (देवियो) की कथा आती है, जो अपने प्रेम के परिणाम-भूत सतति को छोड कर चली गयी।

अन्दजगर—बच्चे-बच्चियो को अनाथ छोडकर ! बडी क्रूरता !

मित्रवर्मा—ऐसे ही एक प्रेम का परिणाम शकुन्तला जैसा सुन्दर शिशु था, जिसको लेकर हाल ही मे हमारे देश के एक महाकवि कालीदास ने नाटक लिखा है।

—नाटक ! अभिनय किया जाने वाला नाटक ?

हा, अभिनय वाला नाटक। किन्तु उसके बारे मे फिर कभी, अभी हमे

अन्दर्जगर की वात मुननी है।

अन्दजगर—मैंने भाइयो के सम्मिलित विवाह को परिवार तक ही उपरान्त समझा और अपने गुरुओ के समय से चला आता विवाह-प्रतिषेध थोड़े से नगजी दगान (सत) नर-नारियो तक ही व्यवहार्य देखा। लेकिन हमे तो एक ऐसा आदर्श सामने रखना है, जिसमे विपमता आ न सके। इसीलिये मैने सोचा कि विवाह-प्रथा सतान मे 'मेरा-तेरा' का कारण होती है, जिसकी वजह से माता-पिता समता को तोड फेकना चाहते है। यहा दिह-बागान मे देख रहे हो न, हमारे सुन्दर बालको को पता ही नही, कि पिता जानने-पूछने की भी आवश्यकता है, आवश्यकता पडने पर वे केवल माता का नाम लेते है। आज पच्चीस साल तक के तरुण इस नवीन वातावरण मे पल-पोसकर बड़े हो गए हैं, जो पुरानी भावनाओ को समझते ही नही। दिह-बागान मे यदि बच्चो के प्रति पिता और पुत्र का 'मेरा-तेरा' वाला भाव पैदा हो जाए, तो निश्चय ही इस समानता को लुप्त होते देर नही लगेगी।

सम्बिक्—काबूस भी अब कवात् को भूल गया मेर अन्दजगर!

—अच्छा, तुम्हे तो नही भूला—कवात् ने ताना देते हुए कहा।

तीनो तरुणियो ने एक स्वर से कहा—माताओ को इससे लिए विशेष अधिकार है। माताओ का यह अधिकार सामाजिक-समता मे बाधक नहीं हो सकता।

तीनो पुरुषो ने एक सास मे कह डाला—तो विपमता की जड़ पुरुष है?

अन्दर्जगर ने वात समाप्त करते कहा—किसी एक ही कारण से रोग नही हुआ करता, बहुत कारण मिलकर एक रोग पैदा करते है। इसीलिए हमे समता के मार्ग के सभी काटो को दूर करते रहना है। मानव दुःख से बचना और सुख की इच्छा रखता है और वह सुख समता मे ही मिल सकता है।

१४

'क्व गच्छामि'

मनुष्य के श्रम का फल देनो और इच्छाओ से तैयार था। [illegible]

भी अच्छी रही और फल भी। बोने-जोतने के समय जिस तरह से दिह-बगान मे तत्परता दिखाई देती थी, वही बात अब खेत काटने और फसल-सचय के समय हो रही थी। खेतो के काम मे तो लोग न दिन को दिन समझ रहे थे और न रात को रात। खेती की कटाई के समाप्त होने के बाद भी फलो के सचय का काम जारी रहा। अगूर की लताओ मे डेढ-डेढ अगुल लबे तथा अगूठे जैसे मोटे सुनहले दानो के बडे-बडे गुच्छे लगे हुए थे। ज्यादातर अगूर सुनहले रग के थे, किन्तु कुछ लताए काले अगूरो की भी थी। अगूरो के गुच्छो को टागने के लिए खास तरह के घर बने थे। छतो के ऊपर झरोखेदार दीवारे भी अगूर सुखाने के लिए तैयार की गई थी। फलो के सचय मे बच्चे भी बडी तत्परता दिखा रहे थे, लेकिन यह कहना मुश्किल था कि मीठे मीठे दानो को चुनकर मुह मे डालने के लिए वे जाते थे या वस्तुत काम मे सहायता करने के लिए। हा, वे कभी यह मानने के लिए तैयार नही थे, कि उद्यानो मे जाकर काम नही करते। गुच्छे या शाखाओ से गिरे दानो को दौड-दौड कर जमा करने मे बच्चे बहुत फुर्ती दिखा रहे थे।

प्रकृति अपने यौवन पर पहुच कर अब निढाल होने जा रही थी। पहाड के ऊपरी भागो मे नगे होने वाले वृक्षो के पत्ते पीले पडने लगे थे, यद्यपि नीचे अभी सर्दी उतनी बढी नही थी। गाव के सारे घराट (पनचक्किया) जाडे भर के लिए आटा तैयार करने मे लगे हुए थे। ढोर और भेड-बकरिया मुटाई की चरम सीमा पर पहुच चुकी थी। लेकिन अब गोचर-भूमि के तृण सूखते और उच्छिन्न होते जा रहे थे, और आगे घर मे जमा किए तृण-भूसे की ही आशा थी। दिह बगान मे मास नही खाया जाता, नही तो इस वक्त अपनी मुटाई की पराकाष्ठा मे पहुचे हजारो पशु मास के लिए मारे जाते। दिह-बगान जाडो के लिए चारा काफी जमा कर लेता था, इसलिए हेमन्त के अन्त तक उनके पशु उतने दुर्बल नही होते थे। गाव से दूर-दूर भी कितने ही गोष्ठ बने हुए थे, तो भी जाडो मे पशुओ के एक जगह रखने से स्थान का स्वच्छ रखना कठिन काम था।

एक ओर दिह-बगान के सारे नर-नारी जाडे के पाच महीनो के खाने-चारे-ईंधन आदि के सचय मे लगे थे, और दूसरी ओर कुछ और भी योजना तैयार हो रही थी। आज योजना पर खुलकर विचार करने और निर्णय पर पहुचने के लिए एक कमरे मे अब्दजबार, नियाजबेग, बदान्, गिरदर्मा, नम्बिक बैठे हुए थे। अतिथि छ महीने तक दिह-बगान मे रहे। बाहर की सूचनाए बराबर उनके पास

पहुचती रही, इसलिए वे किसी बात के अंधेरे मे नहीं थे, तो भी कवात् के लिए उनकी चिन्ता कम न थी। अनुश्वर्न से कवात् के भाग निकलने पर उसके शत्रु कैसे निश्चिन्त रह सकते थे ? पिछले छ महीनो मे सारा प्रदेश छाना जा रहा था। यदि दिह-वगान अकेला ऐसा गाव होता और दुर्गम पहाड़ो तथा दुर्गम वनो के भीतर न होता, तो निश्चय ही वह बच नही पाता। इधर ध्यान न देने का एक कारण इस प्रदेश का स्वता (अधिकारी) भी था, जो देरेस्तदीन का गुप्त अनुयायी था। उसने दिखावे के इतने अधिक अभियान इधर-उधर भेजे, जितने न नेशापूर के कनारंग, न गर्जिस्तान के वराजबन्द, न जाबुलिस्तान के पीरोज न किर्मान शाह के शाह अथवा किसी प्रदेशपति ने भेजे, और न इतनी तत्परता और कड़ाई ही दिखलाई। लेकिन कवात् का एक जगह छिपकर चुपचाप रहना भी ठीक नही था, क्योकि इसमे और मृत्यु मे क्या अन्तर था ? भेष बदलकर अनुयायियो मे कवात् को जिन्दगी भर रखा जा सकता था, लेकिन यह जिन्दगी न कवात् के काम की होती, न देरेस्तदीन के। आज सोचा जा रहा था कि कवात् को कहा भेजा जाए ? कहा उसे सहायता मिलेगी, जिसमे वह फिर [illegible] के सिहासन पर बैठकर देरेस्तदीन के स्वप्न को सत्य बनाने मे सहायक हो।

मित्रवर्मा ने अपनी राय देते हुए कहा—पूरब मे भारत या चीन समुद्र के रास्ते आसानी से पहुचा जा सकता है, लेकिन चीन मे सैनिक-सहायता मिलेगी, इसकी बहुत कम सम्भावना है। चीन एक तो बहुत दूर है और दूसरे आजकल वह कई राजवंशो मे बटा है। कम्बोज और यवद्वीप से तो और भी आशा नहीं रखी जा सकती। भारत के दक्षिण भाग मे पल्लव, राष्ट्रकूट और गंग बड़े प्रभावशाली राजवंश है।

मियादस्त—पल्लव तो हमारे पह्लव है ?

तस्पोन् पर अधिकार जमाने की हिम्मत करेगी। हिम्मत होने पर भी सफलता पाने मे भारी सन्देह है।

हाथ से दाढी के बालो को खीचते चिन्तामग्न अन्दर्जगर ने कहा—मैं इसे असम्भव समझता हू। तस्पोन् जल-सेना नही, स्थल सेना द्वारा ही हाथ मे किया जा सकता है। तिग्रा के भीतर घुसने पर सैनिक-पोतो को सबल अयरानी स्थल सेना से लोहा लेना पडेगा। अत जलमार्ग से सैनिक सहायता की आशा नही रखनी चाहिए।

मित्रवर्मा—वैसे तो उत्तर भारत का राज्य स्थल-सेना मे सदा सबल रहता रहा है, लेकिन स्थल सेना कपिशा (काबुल) से पश्चिम कभी आई हो, इसका हमे पता नही। आजकल गुप्तवश के छिन्न-भिन्न होने पर उत्तरी भारत कई राज्यो मे बट गया है। ऊपर से उनके बहुत बडे भाग को हूणो ने ले लिया है।

अन्दजगर—हूणो ने नही, केदारियो ने। वस्तुत ये हूण नही है, बल्कि सोग्द ने उत्तर की महानदी के पार हूणो का राज्य हो जाने से उस पुराने शकद्वीप को पिछले चार-पाच सौ वर्षो से हूण-देश कहा जा रहा है। वहा के कुषाण, पार्थीय आदि शक दक्षिण भाग आए, लेकिन कितने ही शकवशी वहा रह गए, जिन्हे भी हूण कहा जाने लगा। अपने जनपति केदार के नेतृत्व मे उन्होने दक्षिण की ओर बढकर सोग्द, खारेज्म, बल्खी, कपिशा और हिन्द के भीतर तक को जीत लिया। उन्होने अपने शत्रुओ के साथ हूणो से कम बर्बरता नही दिखलाई, इसीलिए लोग उन्हे हूण कहने लगे। लेकिन केदारियो की बात अभी छोडो, पहिले और जगहो को देखो, जहा यवान् जाके शरण ले सकता और सहायता की आशा कर सकता है।

मियादरश—हमारा पश्चिमी पडोसी बहुत समीप और सबल भी है।

मित्रवर्मा—अर्थात् रोमक कैसर!

—हा—मियादरश ने कहा—रोमक कैसर को समुद्र पार से सेना लाने की आवश्यकता नही, उसके दुर्ग तो फुरात के किनारे हमारी राजधानी से कुछ ही दिनो के रास्ते पर मौजूद है।

—लेकिन मियादरश तुम दूसरी तरफ ध्यान नही दे रहे हो—अन्दर्जगर ने कहा—ये ठीक है कि जरथुस्त्री और ईसाई जैसे परस्पर विरोधी धर्मो के मानने वाले होने पर भी, अयरानी और रोमक एक दूसरे को शरण देते रहे है, और अपना

काम बनाने के लिए अपने अनुकूल आदमी को सैनिक सहायता भी देते हैं, लेकिन कवात् को वह कभी सहायता देने को तैयार न होंगे, क्योंकि कवात [illegible] विचारो का समर्थक है, जिसे न मज्दयस्नी, फूटी आंखों देखते और न ईसाई ही। सहायता की बात तो दूर, शायद कवात् को शरण भी न दें।

—हां, हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए—मित्रवर्मा ने कहा—[illegible] दीन केवल दीन (धर्म) की बात नही करता, नही तो बहुत से मत भेदो की गुंजाइश थी। देरेस्तदीन स्वल्पजन नही, बहुजन के हित के लिए संघर्ष कर रहा है। जहां वह अपनी बातो को समझा पाता है, अपने कामो को दिखा पाता है, वहां लोग उसकी ओर खिंच आते हैं। अयरान मे देखा न, लोग कितने [illegible]

सियावख्श—अयरान ही नही, उत्तर के घुमन्तुओं मे भी जो हमारे दूत गए उन्होंने उनको अपनी तरफ खींचने मे काफी सफलता पायी। मैंने [illegible] नही दिया था और "शत्रु का शत्रु मित्र" के साधारण न्याय को [illegible] था। मैं भी समझता हूं, कि रोमक सम्राट मज्दकी-कवात् की कभी सहायता नही करेगा, बल्कि भय है कि वह धोखा न दे। अच्छा, उत्तर [illegible] घुमन्तू [illegible] गे?

—उत्तर के घुमन्तू चाहे उत्तर-पूरब के घुमन्तू—अन्दजगर [illegible] कहा—उत्तर [illegible] मन्तू खजार आजकल उतने सबल नही, उनमे आपस मे फूट है, उन [illegible] [illegible] हैं। दस-पांच हजार की संख्या मे हो अचानक ग्रामो नगरो [illegible] [illegible] है, लेकिन अयरानी सेना से लड़ते हुए तस्फोन तक [illegible] सम्भव नही।

—तस्फोन का उनका रास्ता उतना आसान नही। [illegible] (गुर्ज) और अरमनी जैसी लड़ाकू जातियो के भीतर से गुजरना पड़ेगा। [illegible], रास्ते भर लड़ते हुए खजारो के पास उतनी शक्ति रह जायगी, [illegible] तक पहुंच सकें।

हो सियावरश ने कहा।

—नही—मित्रवर्मा ने उत्तर दिया।—वीरता की कमी नही है, लेकिन जब वह वीरता पारस्परिक लडाई मे खर्च होने लगे, तो विदेशी शत्रु से लोहा कैसे लिया जा सकता है ? फूट बडी बुरी चीज होती है। फूट के अतिरिक्त और भी एक बुरी चीज हमारे देश मे है। वहा लडाई केवल एक क्षत्रिय जाति का काम मान लिया गया है, अर्थात् सौ मे केवल पाच व्यक्ति सग्राम मे जाने के अधिकारी हैं।

—हमारे यहा भी मगोपतो ने बाध तो ऐसा ही बाधा था—कवात् ने अबकी कहा—और केवल विस्पोह्र, सथ्रदार युद्ध के अधिकारी थे। किन्तु पडोसी शत्रुओ से कई बार ठोकर खाके अजातो (किसानो-शिल्पियो) को भी शस्त्र चलाने का अधिकार देना पडा।

अन्दर्जगर—कुछ भी हो यह निश्चित है, कि हमारे पडोसियो मे केदारी घमन्तू सबसे अधिक शक्तिशाली है। पिछले पचास वर्षो से उनकी शक्ति घटने का नाम नही ले रही है।

—जबसे कि उन्होने हमारे दादा येज्दगर्द द्वितीय को युद्ध मे मारा। कवात् ने कहा—लेकिन मैं समझता हू, हमारी पैतृक शत्रुता के बाद भी केदारी हूण हमारी सहायता करने के लिए तैयार हो सकते हैं।

—क्योकि उनको मज्दकी भय तग नही किए हुए हैं।—अन्दर्जगर ने कहा —यद्यपि केदारी सामन्त और राजा अब राजसी टाट-बाट से रहते हैं, किन्तु अब भी उनके भीतर घुमन्तू जनो का प्राबल्य है। उनका राजा दूसरो के लिए राजा है किन्तु अपने भीतर जन-इच्छानुवर्ती जनपति मात्र है। और साथ ही वर्तमान केदारी राजा कवात् का अधिक स्नेही-सबधी भी है।

—वह मेरा भगिनी-पति ही नही है—कवात् ने कहा—मैं बचपन मे कई सालो उसके पास रहा हू। युद्ध के समय चाहे कैसी भी क्रूरता हो, किन्तु है वह वैसा क्रूर नही। उसका पुत्र मित्रकुमार (मिहिरग्युल) मेरा समवयस्क था। हम दोनो साथ खेला करते थे। साथ ही मेरी बहन भी वहा सहायता के लिए मौजूद है।

—केदारी हूण—मित्रवर्मा ने कहा—हा, हम उन्हे भारतवर्ष मे हूण ही कहते रहे हैं। यद्यपि हूणो के नाम से जैसी बबरता का ख्याल आता है, वह शायद उनमे नही है। धर्म के बारे मे वह और उदार हैं। उत्तर भारत के गोपगिरि

(ग्वालियर) मे राजा तोरमान ने एक बहुत सुन्दर सूर्य मन्दिर बनवाया। कहते हैं इतना कलापूर्ण मन्दिर गुप्तो के वैभव के समय मे ही बन पाता था।

—उनकी उदारता बातों से प्रति देखने मे नही आती, यह बात तो आप भी मित्र! किसी समय कही थी।—इतनी देर के बाद सम्बिक ने मन्द गोप से कहा।

—लेकिन इसमे कारण धार्मिक असहिष्णुता नही है—मित्रगुप्त ने उत्तर दिया—केदारी हूण कुषाणो के उत्तराधिकारी हैं। सोगद गान्धार भारतवर्ष के भीतर तक फैले कुषाण-राज्य का उन्होने ध्वस किया। मूलतः दोनो ही शक थे, किन्तु केदारी सनातन घुमन्तुओ की भूमि से शताब्दियो बाद अभी-अभी निकले थे, इसलिए शताब्दियो से राज करते, भोग भोगते कुषाणो की तरह वह कोमल नागरिक नही बन पाए थे। तो भी कुषाणो ने हथियार नही रखा। दोनो मे भीषण सघर्ष चला। कुषाण कनिष्क राजा के समय से बौद्ध धर्म के पक्षपाती होते आये थे, इसलिये बौद्धो का कुषाण वश के प्रति अनुराग होना स्वाभाविक था, फिर केदार बौद्ध धर्म मे कैसे सहानुभूति रखते? लेकिन हम को वैर और पक्षपात की बात नही देखनी है, बल्कि यह देखना है, कि तोरमाण वह कैसा स्वागत करेगा और कहा तक सहायता देने के लिए तैयार होगा।

जहा तक स्वागत का सबध है—कवात् ने कहा—मुझ इतना सुभीता कोई ही नही मिलेगा।

को भी वर्षो ढेर के ढेर पीले पीले दीनार मिलते रहेगे। यह प्रलोभन इतना बडा है, कि वह ऐसे अवसर को हाथ से जाने नही देगे।

—और जहा तक यहा से हूण-सीमा मे पहुचने की बात है—सियावख्श ने कहा—खतरा तो पग-पग पर है, इसे मैं इनकार नही कर सकता, किन्तु मुझे विश्वास है, अपने धर्म-भाइयो की सहायता से कवात् को हूण सीमा के भीतर पहुचने मे कोई भारी बाधा नही होगी।

—इसलिए कवात् का हूणो की तरफ जाना ही ठीक है।—अन्दर्जगर ने उपसहार करते हुए कहा।

१५
लोलियो मे

"क्या यह पर्वत सदा हिमाच्छादित रहता है?"

—आजकल भला कौन-सा पहाड है, जिसपर बरफ दिखलाई पडेगी? हिमपात होने मे अभी कम से कम दो महीने की देर है।

—तो यह पर्वत बहुत ऊचा होगा।

—ऊचा तो पास जाने पर मालूम होगा, किन्तु यह हम जानते है, कि इसके शिखर से कभी हिम नष्ट नही होता, इसीलिए बल्कि इसे दिमवन्त (दमावन्द) कहते है।

—यह शायद वही हिमवन्त शब्द है। आश्चर्य! कैसे भारत के महान पर्वत का नाम यहा चला आया?—मित्रवर्मा ने कहा।

—चले आने की क्या आवश्यकता? बर्फ को जब हिम कहते है, तो बर्फवाले पहाड को हिमवन्त (हिमवाला) कहना स्वाभाविक है।

दो नौज्वान गदहो को हाके आपस मे इस तरह बातें करते चले जा रहे थे। गाव के बाहर नहर के किनारे बैठी एक तरुणी ने खडे होते कहा—देवर! मैं तुम्हारे लिए ठहर गई। क्यो देर हुई?

—देर की बात पूछती हो भाभी! यह तुम्हारे गदहो का कसूर है, जो चलना ही नही चाहते और चाहते है कि इसी गाव मे डट जाये।

(ग्वालियर) मे राजा तोरमान ने एक बहुत सुन्दर सूर्य मन्दिर बनवाया है कहते है इतना कलापूर्ण मन्दिर गुप्तो के वैभव के समय मे ही बन पाया था।

—उनकी उदारता बाह्यो के प्रति देखने मे नही आती, यह बात तो तुमने भी मित्र ! किसी समय कही थी।—इतनी देर के बाद मम्बिक् ने मुह खोलने कहा।

—लेकिन उसमे कारण धार्मिक असहिष्णुता नही है—मित्रवर्मा ने उत्तर दिया—केदारी हूण कुषाणो के उत्तराधिकारी हैं। सोग्द, कपिशा मे भारतवर्ष के भीतर तक फैले कुषाण-राज्य का उन्होने ध्वस किया। मूलत दोनो ही शक थे, किन्तु केदारी सनातन घुमन्तुओ की भूमि से शलभदल की भाति अभी-अभी निकले थे, इसलिए शताब्दियो से राज करते, भोग भोगते कुषाणो की तरह वह कोमल नागरिक नही बन पाए थे। तो भी कुषाणो ने हथियार नही रखा। दोनो मे भीषण सघर्ष चला। कुषाण कनिष्क राजा के समय मे बौद्धधर्म के पक्षपाती होते आये थे, इसलिये बौद्धो का कुषाण वश के प्रति अनुराग होना स्वाभाविक था, फिर केदार बौद्धधर्म मे कैसे सहानुभूति रखते ? लेकिन हमे तो ...। वैर और पक्षपात की बात नही देखनी है, बल्कि यह देखना है, कि कवात् । वह कैसा स्वागत करेगा और कहा तक सहायता देने के लिये तैयार होगा।

जहा तक स्वागत का सबध है—कवात् ने कहा—मुझे इतना सुभीता और ...ही नही मिलेगा।

—और सहायता भी वहा से पूरी मिलेगी—अन्दर्जगर ने जोर देते हुए कहा— किंतु यह किसी परमार्थ के विचार से नही, केदारियो मे अब भी तम्बू मे रहनेवालो की ही अधिकता है, अब भी थोडा-सा पशु-पालन के अतिरिक्त लूट और युद्ध को ही वे बहुत पसन्द करते है। केदारी जनपति कवात् का मुह देखकर उसे सैनिक सहायता देने के लिये अधीर नही हो जायगा। घुमन्तुओ के राजा को सदा अपने अनुयायियो को काम देकर युद्ध और लूट का अवसर देकर, शान्त रखना पडता है। बाहर लूट-मार का मौका न मिलने पर वह आपस मे लडने लगते हैं। केदारी शासक जानता है कि यदि मेरे घुमन्तुओ को लूट मार का मौका नही मिला, तो इतने परिश्रम के साथ सजाई-बसाई राजधानी (बरूशा) उजाडकर रख दी जाएगी। केदारी सेना जब कवात् को लेकर तस्फोन आएगी, तो रास्ते मे उसे कितने ही नगर और ग्राम लूटने को मिलेंगे और उनके राजा

को भी वर्षो ढेर के ढेर पीले पीले दीनार मिलते रहेंगे। यह प्रलोभन इतना बडा है, कि वह ऐसे अवसर को हाथ से जाने नही देंगे।

—और जहा तक यहा से हूण-सीमा मे पहुचने की बात है—सियावरश ने कहा—खतरा तो पग-पग पर है, इसे मैं इनकार नही कर सकता, किन्तु मुझे विश्वास है, अपने धर्म-भाइयो की सहायता से कवात् को हूण-सीमा के भीतर पहुचने मे कोई भारी बाधा नही होगी।

—इसलिए कवात् का हूणो की तरफ जाना ही ठीक है।—अन्दर्जगर ने उपसहार करते हुए कहा।

१५
लोलियो मे

"क्या यह पर्वत सदा हिमाच्छादित रहता है?"

—आजकल भला कौन-सा पहाड है, जिसपर बरफ दिखलाई पडेगी? हिमपात होने मे अभी कम से कम दो महीने की देर है।

—तो यह पर्वत बहुत ऊचा होगा।

—ऊचा तो पास जाने पर मालूम होगा, किन्तु यह हम जानते हैं, कि इसके शिखर से कभी हिम नष्ट नही होता, इसीलिए बल्कि इसे दिमवन्त (दमावन्द) कहते हैं।

—यह शायद वही हिमवन्त शब्द है। आश्चर्य! कैसे भारत के महान पर्वत का नाम यहा चला आया?—मित्रवर्मा ने कहा।

—चले आने की क्या आवश्यकता? बर्फ को जब हिम कहते है, तो बर्फवाले पहाड को हिमवन्त (हिमवाला) कहना स्वाभाविक है।

दो नौजवान गदहो को हाके आपस मे इस तरह बातें करते चले जा रहे थे। गाव के बाहर नहर के किनारे बैठी एक तरुणी ने खडे होते कहा—देवर! मैं तुम्हारे लिए ठहर गई। क्यो देर हुई?

—देर की बात पूछती हो भाभी! यह तुम्हारे गदहो का कसूर है, जो चलना ही नही चाहते और चाहते हैं कि इसी गाव मे डट जाये।

—नही देवर ! हमारे लोग अगले गाव मे पहुच ही नही गए होग, बल्कि वहा तम्बू भी तान चुके होगे।

—लेकिन ये गुल और बुलबुल चलें तब न ?

—चलना नही चाहते, छोड दो यही—पहिले पुरुष ने विहसित वदन हो अपने साथी के प्रस्ताव का अनुमोदन करते कहा।

—चाहे इन्हे कधे पर ही ले चलना पडे, लेकिन पहुचना अवश्य है इन्ह लेकर अगले गाव मे।

—इनके चलाने की विद्या मै जानती हू देवर, यह तुम्हे पहचान गए है—कहते स्त्री ने "देवर" के हाथ मे डण्डा लेकर तावडतोड गदहो की पीठ पर लगाया। सचमुच गुल और बुलबुल बडी तेज़ी से चलने लगे। स्त्री ने गव के साथ कहना शुरू किया—गदहो को इस तरह हाका जाता है, मैं क्या-क्या तुम्हे सिखाऊ ?

देवर के साथी ने मुस्कराते हुए कहा—भाभी नही सिखलाएगी तो कौन सिखलाएगा।

—लेकिन, तुम बच्चे तो नही हो।

—भाभी यह तो तुम स्वीकार करोगी कि तुम्हारा देवर सीखने मे मन्द नही है, एक दो बार बतलाने मे वह सीख जाता है।

भाभी ने देवर का हाथ पकड के उसकी आखो की ओर देखते कहा—सचमुच देवर ! लेकिन अब गाव से बाहर निकल चले तब बात करेगे—कहते भाभी ने बात बन्द कर दी।

गाव बहुत बडा नही था, लेकिन प्रधान वणिक् पथ पर होने के कारण वहा से व्यापारिक सार्थ आते-जाते रहते थे, जिससे गाववालो को आमदनी होती रहती थी। गाव से बाहर बहुत-से मेवो के बगीचे थे। एक स्त्री और दो पुरुषो को गदहे हाके जाते देख, कौन उनकी ओर ध्यान देता ? उनके कपडे गदे और फटे थे, बाल और हाथ-मुह देखने से जान पडता था, कि उन्होने शायद युगो स पानी नही डाला। गदहे भी दुबले-पतले और उनकी पीठ पर की चीजे भी लत्ता-पात्रा थी, फिर ऐसे यात्री की ओर कौन देखता ? कही यदि टिकान मागने लगे तो और भी मुश्किल होती। लेकिन उन्होने टिकान नही मागी। स्त्री ने गाव से निकलते ही एक तान छेडी, जिसे सुनकर पथ मे खडे लोगो का ध्यान उधर आकृष्ट

अवश्य हुआ, क्योकि स्त्री का कंठ मधुर था। लेकिन इन लोली गायिकाओ और नर्तकियो का गाना-नाचना इस गाव के लिए कोई नई चीज नही थी। गा-नाच के मागना लोलियो का पेशा समझा जाता था। दूसरे गावो की तरह इस गाव के लोग भी लोलियो को भयकर जादूगर समझते थे। माताए विशेष तौर से सावधान रहती थी। बच्चो को चुरा ले जाना तो लोलियो का व्यवसाय बन गया था। तीनो को इस तरह गाव की सडक से जाते देखकर लोग चौकन्ने हो गए थे। गाव से निकलते-निकलते एक दो-तीन वर्ष का लडका सडक पर खडा दिखाई पडा। मा को, मालूम देता है, सकेत से ही तीनो लोलियो के आने की सूचना मिल गई थी। उसने बच्चे को बहुत बुलाया, लेकिन वह सडक पर मिट्टी का घरौंदा बना रहा था। तीनो यात्रियो को निकट आता देख मा का धैर्य टूट गया। वह दौडकर बच्चे की बाह पकड मारती घसीटती घर मे ले गई। लोलियो का ऐसा ही आतक था, क्या जाने उठाके थैले मे डाल लें। जादूगरनी का क्या ठिकाना, वह तो आदमी को मच्छर बना सकती है।

गाव से काफी बाहर निकल गए। कुछ दूर पर नगे पहाड थे और रास्ता नगी ऊची-नीची भूमि पर जा रहा था। गुल और बुलबुल को दण्ड-धारिणी का पता लग गया था, इसलिए खासना भी सुनकर वे टनमन होके चलने लगते थे।

—छोडो बात फिर कहूगी, किन्तु देख रहे हो न देवर, यह लोग हमे किस दृष्टि से देखते है।

—बडी घृणा की दृष्टि से और बडी शका की दृष्टि से भी।

—घृणा यह सभी के लिए करते हैं, लेकिन भय और शका सभी लोलियो से करने की आवश्यकता नही। बहुत-से लोली ऐसे भी हैं, जो भीख नही मागते, जिनके सगीत का दरबारो मे बहुत मान है।

—तो क्या उन्हें भी ये लोग इसी तरह घृणा की दृष्टि से देखते है ?

—उनके शरीर पर स्वच्छ सुन्दर कपडा होता है, हाथ मे दीनार होते है, पास मे दास-दासिया रहती है। इन गाववालो को उन्हे पहचानने का मौका कहा मिल सकता है? यदि पहचान पाए तो, माताए जरूर सावधान हो जाएगी। हमारी गोरी लडकियो को देखकर कहते हैं—काले लोलियो के पास अपरानियो जैसे बच्चे कहा से आए? जरूर इन्होंने कही से चुराया है। लोलियो का

जीवन !

—भाभी ! तुमने भारत तो देखा है, उधर चले जाने का क्यो नही ख्याल करती ?

—देवर ! हमे यह पता है कि हम भारत के हैं, हम बोली भी अपनी भूले नही हैं, अर्मनी और इबेर मे जरूर हमारे कुछ भाई पहुच गए है, जिनकी भाषा बिगड गई है। कुछ तो केवल नाम के लोली हैं। मैं दस वर्ष की थी, जब कि हम भारत गए थे। अब भी मुझे याद है, वहा की हरी-भरी भूमि, बडी-बडी नदिया, जगल से ढके पहाड। यहा कहा वह बातें ?

—लेकिन ईरान के मेवे बहुत मीठे होते हैं।

—लेकिन हिन्द का आम कहा मिल सकता है देवर ?

—क्या वह अब भी भूला नही है ?

—अपना देश कही भूलता है—लम्बी सास लेकर स्त्री ने कहा—लेकिन हमारे भाग्य मे एक जगह रहना कहा बदा है ? हमारे पैरो मे तो चक्कर बधा आ है, आज यहा तो कल तीन योजन दूर।

—लेकिन भाभी ! तुम्हे देश देखने का कितना अच्छा अवसर मिलता है ?

—हमारे इस जीवन मे भी आकर्षण है और रस भी देवर—स्त्री ने हा।—तभी तो हम लोग बराबर चक्कर काटते रहते है। लोलियो को बाध के रखा नही जा सकता, न उनके लिए राज्य की सीमा बाधक होती है।

—क्या एक राज्य की सीमा पार करके दूसरे राज्य मे जाते समय दिक नही करते ?

—दिक करने पर भी हम लोग उसकी परवाह नही करते, सुनी को अन-सुनी, और कही को बे-कही मान लेते हैं। पिछले साल बसत मे हम रोमक राज्य के भीतर थे, अब अयरान मे से चल रहे हैं। आधा अयरान भी समाप्त कर चुके हैं। कल या परसो रगा (रै, तेहरान) मे पहुचेगे। जाडा पूरी तरह से आने से पहले हम हूणो के राज्य मे पहुच जाने की आशा रखते हैं। सभी सीमात-सैनिक जानते हैं, कि लोलियो का काम ही है एक जगह से दूसरी जगह जाना। और यदि आखें कडी देखी, तो जहा दो तान सुनाई कि उनका दिल नरम हुआ।

—यह तुम्हारा जीवन तो मुझे भी बहुत पसद आता है भाभी ! किन्तु—

—किन्तु की क्या बात है देवर ! हमारे लोलियो ने तो मजरा बाधा

की बात मान ली है, हा भीतर से ही, बाहर कहने की आजकल किसको हिम्मत है। लेकिन यदि चाहो तो वह बीस बरस की मेरी बहन बदक तुम्हारे लिए तैयार है।

—क्या कह रही हो भाभी! क्या देवर को ठुकराना चाहती हो इसी बहाने?

—स्त्री ने देवर के हाथ को फिर अपने हाथ मे ले लिया और यात्रा जारी रखते कहा—नही देवर! लेकिन भाभी को छोड मत जाना।

—छोडना न छोडना मेरे हाथ मे नही है भाभी! यह तो तुमको मालूम ही है।

—हा देवर! लेकिन मेरा हृदय तो सन्न हो जाता है, जब सोचती हू—कि देवर का सग छूटनेवाला है।

—अभी नही छूटेगा भाभी। अभी खुरासान और गुरगान के रास्ते के अलग होने तक हमे साथ चलना है।

—मै तो सोचा करती हू देवर! कि कैसे तुम्हे बाध रखू।

—मन मे बधा हू भाभी! और तुम तो भाभी भी हो और गुरु भी। पिछले तीन सप्ताहो मे मुझे तुमने कितनी बातें सिखलाई।

—सचमुच ही देवर! अब तुम पक्के लोली बन गए हो और यह भैया तो बोलते ही नही?

—देवर भाभी के बीच मे पडना जानती हो न, अच्छा नही होता। सब बाते सुन तो रहा हू। बीच-बीच मे तुम जब दूसरी भाषा बोलने लगते हो, तो मेरे लिए कठिन हो जाता है, इसीलिए मैने निश्चय किया है, कि देवर-भाभी को बोलने का काम छोड दो और स्वय गुल और बुलबुल को सम्भाले उसे सुनते चलो।

—तो भाभी! अब तो तुमको विश्वास है न, कि हमे लोली छोडकर दूसरा नही कहा जाएगा?

—हा, देवर! और तुम्हे पहले भी दूसरा नही कहते, क्योकि बाल कोयले की तरह काले है [illegible] बहन नही तो कम से कम यहा वालो की अपेक्षा अधिक [illegible] ही। लेकिन भैया को उतना सुभीता नही है। बाल और दाढी मे एक दिन भी रग न लगाए, तो पीले-पीले मालूम होने लगते है।

—यह तो बताओ भाभी ! तुमको अन्दर्जगर की बातें क्यो अच्छी मालूम हुई ?

—यह भी पूछने की बात है देवर ! देखते नही सारी दुनिया हम बे-घरो को घृणा की दृष्टि से देखती है। मनुष्य के समाज से हम बहिष्कृत हैं, लेकिन अन्दर्जगर बड़े सहृदय हैं। वह कितने विशाल और कितने कोमल हृदय हैं। मैंने तस्पोन् मे अकाल के समय उन्हे कई बार नज़दीक से देखा था। उन्होने लाखो के प्राण बचाए। उनका स्वभाव कितना सरल है। हमारे बच्चे उनके पास जाते, तो वह उन्हे अपनी गोद मे बैठा लेते। मुह से नही कहने पर भी उनके रोम-रोम से मालूम होता है, कि वह हमे अपना सगा-सम्बन्धी समझते हैं। मैं उनकी बातें कहा समझ सकती हू, एक तो स्त्री और उस पर से लोली। लेकिन जो कुछ हमने आखो से देखा, उस पर कैसे अविश्वास कर सकते हैं ? अन्दर्जगर को हमारी जाति वाले सबसे प्रिय समझते हैं।

बात का क्रम गम्भीर होते देख देवर ने उसे दूसरी ओर मोड़ते कहा—
।र यह देखो भाभी, यह दमावन्त पास खड़ा है, कितना सुन्दर पहाड़ है !

—सुन्दर है देवर ! किन्तु पास की बात मत कहो। यह दमावन्त, जानते ो, ऐसा-वैसा पहाड़ नही है।

—हा, ऐसा-वैसा नही है भाभी ! वहा तो पैरिकायें (परिया) रहती हैं।

—लोग इसीलिए वहा जाने से डरते हैं। लड़के-लड़कियो को तो वह अवश्य उठा ले जाती हैं।

—वह भी लोलिया तो नही हैं, क्यो देवर की भाभी ?—तीसरे व्यक्ति ने कहा।

—उधर जाओ तब पता लगे, यहा से बात करना बहुत आसान है।

—पैरिकायें क्या अधी, लूली, लगड़ी होती हैं ?

—नही, बहुत सुन्दर, तप्तकनक या अग्नि-ज्वाला की तरह बड़ी सुवर्ण।

—फिर ऐसी पैरिकाओ के हाथ मे पड़ना तो सौभाग्य की बात है। वह खा तो नही जातीं ?

वह तो नही खाती, लेकिन उनके भाई-बद देव भी इसी दमावन्त म रहते हैं, जो मनुष्य-मास को बहुत पसन्द करते हैं।

—क्यो भाभी ! तुमने कभी किसी देव को देखा है ?

—देव देखती तो क्या देवर-भाभी की इस समय बात हो सकती थी ? ये देव एक एक पहाड जैसे होते है, और उनके सिर पर कई हाथ लम्बी सींगें, मुह मे कई बित्ते के दात होते है। दमावन्त पर इसीलिए लोग नही चढते। रात को तो लोग और भी जाने से डरते है।

—पहाड के ऊपर वैसे भी कोई क्यो जाएगा ? जाके भूखे मरना पडेगा। हा, कोई पैरिका मिल गई तो अवश्य भाग्य खुल जाएगा। भाभी ! इतनी सुन्दर पैरिकाओ के वधु देव इतने कुरूप, इतने बुरे क्यो होते है ?

—बुरी क्या पैरिकायें कम होती हैं ? वह दूसरे के आदमी-बच्चे को पकड कर भेड बना रखती है, या वृक्ष बना के खडी कर देती है।

—इसमे कौन सी बुरी बात है ? दिन-भर की चिन्ता से बच जाएगा, यदि आदमी वृक्ष बना दिया जाए। मैं पैरिकाओ को देखने की बडी इच्छा रखता हू। एक पैरिका को भी देख लू तो भी अच्छा।—देवर ने कहा।

—वह देखो एक पैरिका तुम्हारी प्रतीक्षा मे खडी है।—सामने रास्ते पर खडी नारी को दिखलाकर उसके साथी ने देवर से कहा।

—हा देवर ! यह देखो वर्दक। इसे इतना भी धैर्य नही हुआ, कि तम्बू मे थोडी देर प्रतीक्षा करती। देखो रास्ते मे आके खडी है।

वर्दक सचमुच ही वर्दक (गुलाब) थी। उसके साधारण और कुछ मैले से वस्त्रो के कारण उसका सौंदर्य निस्तेज नही हो सकता था। उसका सारा शरीर साचे मे ढला मालूम देता था। अयरानियो के लिए वर्दक अद्वितीय सौन्दर्य रखती थी, वे उसके चमकीले कृष्ण-केशो पर मुग्ध हो जाते थे।

साथियो को पास आए देख वर्दक ने कहा—हमने तो समझा, तुम लोगो को डाकू ले गए।

देवर ने वर्दक के पास पहुचकर जवाब दिया—तुम यही मना रही थी क्या ? हमे यदि डाकू ले जाते या दमावन्त का देव ले जाता, तो कोई परवाह नही होती, लेकिन इन गुल और बुलबुल की क्या हालत होती ?

वर्दक ने देवर के कपोल पर लीला-ताडन करते कहा—खान-पान तैयार है। लोग तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। मुझसे प्रतीक्षा नही हो सकी, इसलिए इधर चली आई। सचमुच मेरे हृदय मे तरह-तरह की आशकाए होती थी।

—आहाहा—वर्दकी भाभी ने कहा—तू समझती होगी, तेरे तरुण को

दमावन्त की कोई परी न उठा ले जाए और मक्खी बनाकर रख न छोड़े।

—दमावन्त की परी की क्या आवश्यकता है—

—जबकि कोई साथ ही चल रही हो—नवतरुणी ने कहा।

—क्या वर्दक ! तू अपनी बहन पर विश्वास नही करती।

वर्दक ने अपनी बहन को अंक मे भर लिया और मुख चूमते हुए कहा—नही बहिन ! तू बुरा मत मान।

लोग जल्दी-जल्दी कदम बढाने लगे। गाव के बाहर नहर के किनारे एक बाग के पास छोलदारिया खडी थी। पुरुष अपने पीछे छूटे साथियो की प्रतीक्षा कर रहे थे। गुल और बुलबुल अपने भाई-बन्धुओ मे जा मिले, उनके साथ आए पुरुष और स्त्री भी अपनी जाति वालो मे मिल गए। थोडी देर मे वह कम्बल पर बैठे गर्म-गर्म मास-सूपको फूक-फूककर पीने मे लग गए।

अभी अधेरा नही हुआ था। रात यही काटनी थी। लोलियो का तम्बू ही घर है, और जिस गाव मे वह गड गया वही उनका अपना गाव। इसलिए कोई हरज नही, जो खाने और पान के बाद बाजे बाहर निकाल लिए गए और सभी स्त्री-पुरुष गीत और नाच मे व्यस्त हो गए। बडी रात जाने तक सोना आज ही नही हुआ, जहा कही भी एक दिन से अधिक के लिए डेरा लगता, वहा नाचे-गाये बिना उन्हें कल नही पडती।

१६

मृत्यु का नृत्य

आस-पास पहाडो से दूर, किन्तु उन्हे देखते हुए रगा (तेहरान) की नगरी फैली हुई थी, जो देखने मे उद्यान-सी मालूम होती थी। इन वृक्ष-वनस्पतिहीन पर्वत-माला और मैदान के बीच मे यह उद्यान-नगरी सचमुच ही दर्शक को अपनी ओर आकृष्ट किए बिना नही रह सकती थी। स्पन्दियार विस्पोह्न की नगरी रगा उद्यान-भवनो से परिपूर्ण ही नही थी, बल्कि चीन और भारत से आने वाले स्थल-मार्ग पर होने के कारण सार्थवाहो और श्रेष्ठियो की नगरी होने से बडी सम्पन्न भी थी। स्पन्दियार विस्पोह्न सासानी साम्राज्य का पुश्तैनी अरगबत

(दुर्गपाल) था, इस नगर और कितने ही ग्रामो का वह शाह था। पिछले दस साल विस्पोह्र और वचुर्कों के लिए बुरे थे। लेकिन अब उनके विचारो से अहुर-मज्द ने दीन की रक्षा कर ली और वेदीनो को ध्वस्त कर दिया। अब वह फिर अपने दासो और कर्मकरो के प्राण-धन के वैसे ही स्वामी है। रगा नगरी के वाहर वहुत-सी छोलदारिया उस जगह गडी थी, जहा से दमावन्त के हिम-शीतल जल को लाने वाली नहर वह रही थी। यह सभी छोलदारिया लोलियो की थी। उनकी अधिकता से जान पडता था, वहा चारो दिशाओ के लोली एकत्रित हुए है।

दिन का तीसरा पहर था। तम्वुओ के मालिक वाहर निकल गए थे। डेरे मे अधिकतर उनके कुत्ते, वच्चे और वूढी स्त्रिया रह गई थी। कुछ अपनी वानर-वानरी को लेकर गए थे, कुछ अपने भालू को लेकर तमाशा दिखाके जीविका अर्जित करने निकले थे और कुछ जादू का तमाशा दिखाने गए थे। कितने ऐसे ही भीख मागने या भिन्न-भिन्न देशो से लाई चीजो को वेचने गए थे।

एक तम्वू मे वर्दक पीतल के दर्पण को सामने रखे वालो और चेहरे को सजाने मे लगी थी। उसका तरुण मित्र, "देवर" सामने वैठा वात कर रहा था। वर्दक कह रही थी—मुझे आज विस्पोह्र के प्रासाद मे जाना है।

तरुण ने पूछा—विस्पोह्र के प्रासाद मे अकेले जाने मे डर नही लगता ?

—डर क्यो लगेगा, क्या सिह है जो खा जाएगा ? सभी जीविका कमाने के लिए किसी न किसी तरफ गए हुए हैं। गलियो या घरो में गाने के लिए उतना थोडे ही मिलता है, जितना विस्पोह्र के दरवार मे। गाना और नाचना दोनो मे से एक दिखलाना होगा, और मैं अकेले नहीं होऊगी।

—क्यो, वहा और भी गायिकाए होगी ?

—विस्पोह्र का अन्त पुर तस्पोन् के अन्त पुर से कम नही है। हजारो नारिया और एक से एक सुन्दर और गुणी वहा मौजूद हैं। मेरी वारी मे मैं भी गाऊ या नाचूगी। मुझे विश्वास है, यदि अवसर मिला तो नृत्य मे सवको परास्त करके आऊगी।

—आने पाओगी ? वर्दक ! मुझे भी अपने साथ ले चल, मैं वाजा वजाऊगा।

—दुत् ! पुरुप का अन्त पुर मे जाना, विशेपकर जहा पान और सगीत,

गोष्ठी चल रही हो, सम्भव नही है ।

वर्दक ने अपने काले केशो को बीच से फाडकर पीठ की ओर लेजा उनकी कवरी (जूडा) बनायी, भौओ के बालो के ठीक करने मे डेरे की सर्व चतुर वृद्धिया ने सहायता की, और अतिरिक्त रोमो को अलग करके दो जुडी कमानो की भाति उन्हे सजाया। आखो मे हल्की अजन-रेखा, ओठो पर अधर-राग लगाया। शरीर पर नये सुन्दर रग का कचुक और नीचे सुत्थन नही अधिक घिराव का लहगा था। तरुण उसकी ओर देखते हुए बोल उठा—तो आज तू अपनी कला से सभी को परास्त करके आएगी !

—और बहुत-सा पारितोषिक भी लाऊगी, जिसमे विस्पोह्ह के अग री पुरानी लाल मदिरा अवश्य होगी। फिर हम दोनो बैठकर पीएगे। क्यो मौसी ?

—हा, बेटी, जीती रह !

वर्दक के सज के तैयार होते-होते सूर्य भी अस्ताचल की ओर चल दिए और वह मौसी के साथ अर्ग की ओर रवाना हुई।

वह अन्त पुर की रक्षिता नही थी। कितनी ही बनी-ठनी होने पर भी ोशाक उसकी जाति को छिपा नही सकती थी। अर्ग मे जाने के लिए रगा की पण्य-वीथि से नही जाना था, नही तो सायकाल मे भी हाट-बाजार देखने को मिलती। भिन्न-भिन्न वस्तुओ की पण्यवीथिया सारे नगर मे फैली हुई थी, जिनमे कुछ तो अपने ऊपर की छतो के कारण दिन मे भी अधेरी मालूम होती थी। वर्दक को नगर के बाहर की वीथी से जाना था, जिस पर, घर तो थे, किन्तु पण्यशालायें नही थी, इसीलिए उसपर अधिक लोगो का आना जाना भी नही होता था। अर्ग के महाद्वार से बहुत पहिले ही लोली राजा (मुखिया) मिला और "समय हो गया है", कहकर उन्हे लिए महाद्वार की ओर चला। अर्ग वस्तुत एक सुदृढ दुर्ग था और उसका महाद्वार एक सुदृढ द्वार। उसके विशाल कपाटो पर बाहर की ओर आधे-आधे बित्ते की मोटी नोकदार कीले [illegible] काटो की तरह लगी थी। इस वक्त अर्ग आमोद-प्रमोद का स्थान था, लेकिन उसे शत्रु के आने पर दुर्ग बनने के लिए तैयार होना आवश्यक था। क्या जाने [illegible] केदारी इधर आ पडें या खजार कोहकाफ को कूदते-फादते इधर आ धमकें।

अर्ग के भीतर प्रवेश सबके लिए खुला नही था। लोली राजा अपनी रग बिरगी पोशाक मे बडी निश्चिन्तता से फाटक के भीतर चला गया, उस [illegible]

नही रोका। हा, द्वारपाल भटो के हाथ वर्दक को देखते ही अपनी मूछो पर पहुच गए। राजा ने भीतर जाके एक प्रौढ स्त्री के हाथ मे वर्दक को सौपा, जो न जाने कितनी ड्योढियो को पार करते वर्दक और उसकी मौसी को क्रीडोद्यान मे ले गई। वहा एक ओसारे के नीचे और भी पचासो तरुणिया प्रतिक्षा कर रही थी। एक दूसरी वृद्धा ने आके उनमे से दस को चुना। वर्दक को प्रसन्नता होनी ही चाहिए, क्योंकि वह उन दसो मे थी। दसो को अब और भीतर जाना पडा। दोनो ओर के कमरो की पातियो के बीच से गुजरते हुए वर्दक की नज़र कभी किसी कमरे के भीतर जा पडती और कभी दीवारो पर बने चित्रो पर। अन्त मे वह एक अत्यन्त सजे कमरे मे पहुचाई गई, जिससे निकलती सुगन्ध बहुत पहिले ही उसके पास पहुच चुकी थी। कमरे के फर्श पर एक सुन्दर विशाल कालीन बिछा था। दीवारो पर सुन्दर चित्रकारी थी, जिनमे कई शिकार के दृश्य थे—घोडे पर चटा कोई विस्पोह् कानो तक ज्या को तान कर क्रुद्ध सिह को वाणो से वेध रहा है, कही घोडे पर बैठा पीठ की ओर मुह करके भागते जगली भेडो का आखेट कर रहा है, कही सूअर और हरिन पर प्रहार हो रहा है।

चित्रो पर एक नज़र दौडाकर वर्दक का ध्यान एक सजीव चित्र की ओर आकृष्ट हुआ। कमरे या शाला के छोर पर सिहासन के ऊपर एक तरुण सुन्दरी सहित एक अधेड पुरुष पैरो को एक-दूसरे पर फैलाए बैठा था। उसके सिर पर एक छोटा सा मुकुट था, जिससे कुछ कटे से केश पीछे की ओर फैले हुए थे। मछें बडी किन्तु दाटी छटी हुई थी। उसके शरीर से चिपका घुटनो तक का कचुक था, जो कामदार मूल्यवान लाल ऊनी वस्त्र का बना था। कचुक के ऊपर सुवर्ण-सूत्रो से बने सुन्दर फूल-पत्तो के अतिरिक्त सामने की ओर गोल वृत्त मे एक कुत्ता बना हुआ था—कुत्ता मज्दयस्नी धर्म मे अच्छा पशु माना जाता है। पुरुष की उम्र पचास से कम न होगी, किन्तु व्यायाम और मृगया के अभ्यास के कारण उसके शरीर मे व्यर्थ की चर्वी नही थी। उसका शरीर छरहरा था, छाती से कमर पतली थी, जिसमे रत्नजटित सोने का कमरवन्द बधा था। नीचे पखदार चौडा पाजामा था, जिसमे नीचे पैरो की एडी और पजे नगे थे। पुरुष के शरीर मे कमरवन्द के अतिरिक्त गले मे एकावली माला और हाथो मे ककण थे। सिहासन पर बहुत नरम मखमली गद्दा बिछा था, और पीठ की ओर गद्दीदार ओठगनी लगी थी। सिहासन के चारो पैर हाथी दात के थे, जिन पर सोने का काम किया

हुआ था। सिंहासन से थोडा हटकर एक अंगीठी जल रही थी, जिसके ऊपर लोहे के तीन छडो के सहारे पानी भरा बर्तन रखा हुआ था। कमरे के भीतर उस पुरुष के अतिरिक्त सारी स्त्रिया ही स्त्रिया दिखाई देती थी—जिनकी संख्या बीस से कम नही थी। स्त्रियो का कचुक एडी के करीब तक पहुचता था, और नीचे सलवार तथा उसमे मिला पैरो का मोजा दिखलाई पडता था। खान-पान से सम्बन्ध रखने वाली सभी स्त्रियो के मुह पर रुमाल बधी थी, जिसमे कि मुह की गन्दी श्वास स्वामी के चर्व्य,-चोष्य-लेह्य-पेय मे न पड जाए। कुछ स्त्रियो के हाथो मे जल की भारी या सुरा की सुराही थी, जिनके हाथो मे कुछ नही था, वह बडे सम्मान से दोनो हाथो को स्वस्तिक बनाते छाती पर रखे खडी थी। पुरुष के पास सिंहासन पर बैठी स्त्री आयु मे बहुत कम थी, और मद्य वितरण करने वाली परिचारिकाए, मद्य-चपक देते समय उसके प्रति उतना ही सम्मान दिखा रही थी, जितना कि पुरुष के लिए।

सिंहासन की अगल-बगल मे दो और स्त्रिया खडी थी, जिनमे मे एक के हाथ मे चवर था और दूसरे के हाथ मे मोरछल। इनकी पोशाक मे कुछ विशेषता थी। इनके शरीर मे सलवार के स्थान पर चौडा लहगा था और लम्बा कचुक घुटनो तक ही पहुच पाता था। इनके गले के नीचे कधे और पीठ को लेते काम-दार कपडे की चुदन सिली थी।

वर्दक के पहुचने के समय सिंहासन से थोडा हटकर एक स्त्री मुह से वशी बजा रही थी, दूसरी त्रिकोणी-तन्त्री के तारो को छेड रही थी। परिचारिकाए चषक को मदिरा से रिक्त नही होने देती थी, लेकिन पुरुष और साथ बैठी सुन्दरी स्वय धीरे-धीरे पी रहे थे। हा, नीचे बैठी सुन्दरियो को पान कराने मे व अधिक उदार मालूम होते थे।

गाने का दौर समाप्त हुआ। पुरुष ने परिचारिका से धीमे से कुछ कहा। अब दूसरी चार स्त्रिया सामने लाई गई, जिनमे एक वदक भी थी। एक स्त्री के हाथ मे शकटाकार तन्त्री थी, जिसके तारो का स्वर मधुर होने भी अधिक गम्भीर था। दो स्त्रिया हाथ मे डफ लिए थी। उन्होने पहले तान बजाई, तान हिन्दी थी। विस्पोह्र को हिन्दी तान, जान पडता है, अधिक प्रिय थी। हिन्दी तान पिछले सौ वर्षो से ईरान मे बहुत लोकप्रिय हो गई थी, जब कि शाहंशाह बहराम ने अपने मित्र भारतीय राजा से विशेष आग्रहपूर्वक सगीत [illegible]

मगवाए। भारतीय सगीत को स्वीकार करते भी अयरान ने उसे अपने रग मे रगा, और भिन्न-भिन्न तानो और रागो को ऋतुओ, मासो और दिन की घटिकाओ के साथ जोड दिया। गत के बाद वर्दक ने अयरानी भाषा मे हिन्दी राग का एक प्रेम गीत गाया। सिंहासनासीन पुरुष की आखें अब रक्त हो चुकी थी। वर्दक के मधुर कण्ठ ने उन्हे अपनी ओर आकर्षित किया और वह उसकी ओर देखने लगा। पास बैठी तरुणी के चेहरे पर आशका की छाया दीख पडी। पुरुष ने मुस्कराते हुए परिचारिका से कुछ कहा। गीत समाप्त होते ही उसने वर्दक से और बाजा बजाने वालियो से भी कुछ कहा।

अब नृत्य की गत बजने लगी। वर्दक उठ खडी हुई। यह नही कहा जा सकता, कि वहा वही सबसे सुन्दर स्त्री थी, चेहरे और उसकी रग रेखा मे दूसरी और भी अधिक सुदर हो सकती थी, लेकिन शरीर का जैसा सुन्दर गठन वर्दक के पास था, वैसा और किसी के नही। वर्दक के हाथ धीरे-धीरे फैलते गतिशील होने लगे। जान पडता था, हस के पख हल्की हवा मे धीरे-धीरे नीचे उतर या ऊपर चढ रहे हैं। उसके पैरो की गति, गति नही जल मे कुशल तैराक का प्लवन या पारावत का लीलापूर्वक आकाश मे नीचे ऊपर उड्डयन जैसा जान पडता था। धीरे-धीरे नृत्य की गति बढती गई। सिंहासनासीन-पुरुष भी सब ओर से दृष्टि हटाकर वर्दक की ओर एकटक देखने लगा। वर्दक अपने एक-एक अग पर अधिकार रखती थी और उसकी आज्ञा पर उसका अग-अग इस तरह मुडता था, मानो वहा हड्डी जैसी कोई कडी चीज़ नही है। वर्दक अब बहुत शीघ्रता से घूमती मडल बना रही थी। कभी वह अपने इर्द-गिर्द पूरा चक्कर बनाती और कभी अर्द्ध-चक्कर, कभी हाथो को गुल्फो तक ले जाती और कभी कमर पर शरीर को दुहरा करती। मालूम होता था, उसे नाचते युगो हो गए। सभी समय का ज्ञान भूल गए थे। अन्त मे वर्दक ने नृत्य समाप्त किया, लोग स्वर्ग से पृथ्वी पर उतर आए। पुरुष की आज्ञा पर परिचारिकाओ ने स्वामी की लाल मदिरा मे से चषक भर के वर्दक के हाथ मे दिया। वर्दक ने एक बार धरती तक झुक के वदना की, फिर उसे एक सास मे पी गई। वर्दक की कला दरबार को पसन्द आई। आज उसका भाग्य खुलने वाला था।

भाग्य खुलने पर भी वर्दक के लिए उसकी सीमा थी, वर्दक क्या, किसी के लिए भी सीमा थी। वर्दक तो नीच लोली (रोमनी) जाति की कन्या थी।

यदि अयरानी भी होती, तो भी विस्पोह्र के अन्त पुर मे विस्पोह्र छोड दूसरो की कन्या पत्नी के तौर पर नही स्वीकृत की जा सकती थी। रगा के विस्पोह्र के पास सौ से अधिक विस्पोह्रो की कन्याए थी। इनके अतिरिक्त कुछ अपनी बहनें और पुत्रिया भी पत्नी के रूप मे मौजूद थी, जिनका सम्मान सबमे अधिक था। इन्ही की ज्येष्ठ सन्तान भावी स्पन्दियार हो सकती थी। पातेरशाहजन (भट्टारिका) का पद इन्ही मे से किसी को मिलता। दूसरे विस्पोह्रो और वनुकों की कन्याए साधारण पत्नी हो सकती थी। उनके बाद चाकरजन (चाकर-पत्नी) का नम्बर आता था, जिनकी सख्या रगा के अन्त पुर मे एक हजार से कम न थी, फिर सुन्दरी दासियो-परिचारिकाओ का नम्बर आता था। स्वीकृत होने पर वर्दक दासी और परिचारिका तक ही पहुच सकती थी और उसमे भी उसे किसी अन्न-पान को छूने का अधिकार नही होता।

वर्दक के बाद और भी गायिकाओ ने अपना जौहर दिखलाया और उनमे कुछ ने प्रशसा के शब्द भी पाए, लेकिन नृत्य मे कोई वर्दक की बराबरी नही कर सकी। वर्दक यद्यपि हर बार थक जाती थी, किन्तु बीच-बीच मे थोडा वाद्य-सगीत को अवसर देकर उसे फिर-फिर नाचना पडता। रात का तीसरा पहर आरम्भ हुआ था। नशे का जोर सारी मजलिस की आखो पर स्पष्ट दिखाई पड रहा था। स्वामी की आखें झप-झप जाती थी। थक कर चूर-चूर वर्दक को चौथी बार नाचने के लिए आज्ञा दी गई। यद्यपि हर नृत्य के बाद प्रसाद-रूपेण प्राप्त चषक की मदिरा ने उसके शरीर को पूरी तौर से अवसन्न नही होने दिया था, लेकिन चौथी बार नृत्य के लिए उसका शरीर असमर्थ हो चुका था। वर्दक साहस करके उठी और उसने शरीर की शक्ति की कमी को मन की शक्ति से पूरा करना चाहा। वह नृत्य मे अब की भी उतनी ही यत्नशील रही, उसकी गति मे कही शिथलता नही आने पाई, लेकिन नृत्य और वाद्य के तानो के मौन रूप धारण करने के साथ वर्दक अपने को सम्भाल न सकी, वह कटे वृक्ष की भांति [illegible] पर गिर पडी। सिहासनासीन पुरुष की नशे मे झपकती आखे [illegible] हो उठी थी, बल्कि स्वय दौडकर उसके पास पहुचा और परिचारिकाओ [illegible] उसने स्वय भी वर्दक को उठा बैठाने की कोशिश की, लेकिन वहा [illegible] शक्ति कहा बच रही थी। वर्दक के मुह पर स्वेद बिंदु झलक रहे थे और [illegible] पसीने से भीगा हुआ था। सकेत पा परिचारिकाए [illegible]

छुट्टी दे दी गई। स्वामी के चेहरे से नर्तकी के प्रति भारी सहानुभूति झलक रही थी और उसने उसकी सेवा-उपचार मे परिचारिकाओ से भी अधिक भाग लिया। वर्दक को इसका पता नही था, नही तो वह कितनी प्रसन्न होती ?

१७

जीवन का दर्शन

कल इन तम्बुओ के गाव मे कितनी चहल-पहल थी ? अधिकाश व्यक्तियो के बाहर चले जाने पर भी डेरे मे रह गए लडके-लडकियो की किलकारियो से यह बस्ती हसती-सी मालूम होती थी। आज डेरे के सभी नर-नारी घर मे मौजूद थे, लेकिन चारो ओर मौन और उदासी छाई थी। इसी छोलदारी के भीतर कल वर्दक अपने केशो और मुख को सवार रही थी और भविष्यद्वाणी कर रही थी —"आज मैं विजय प्राप्त करके आऊगी", वह वस्तुत विजय प्राप्त करके लौटी। आज वह उसी छोलदारी के सामने लेटी हुई है। उसका सारा शरीर नए लाल वस्त्र से ढका है, केवल मुह खुला है। वर्दक गम्भीर निद्रा मे है। कोई उसे जगाओ मत, वह स्पन्दियार की मजलिस मे विजय करके आई है। उसकी आखें बन्द हैं, किन्तु ओठो मे हल्की मुस्कराहट साफ दिखाई पडती है। अधर-राग और मुख-चूर्ण कब के मिट चुके हैं, चेहरे का रग भी कुछ पीला है, लेकिन जान पडता है, वर्दक को जो आत्मसतोष मिला, उससे उसका चेहरा पहले से अधिक खिल उठा है। उसके पास बैठी उसकी बहन, और मौसी अपने बालो को नोच रही है— "हा वर्दक !" "हाय मेरी बहन !" "हाय मेरी बेटी !" और फिर छाती पीटती, बाल नोचती हैं।

क्यो इतना कोलाहल मचा हुआ है ? इन्हे मालूम नही कि वर्दक सोई है, उसे जगाना नही चाहिए। हा, डेरे के बच्चे वर्दक के मुह को देखकर ऐसा ही सोचते और आपस मे बोलते थे, लेकिन क्या वर्दक जागने के लिए सोई थी ? डेरे के सभी नर-नारी इस तरुण जीवन के अवसान को असह्य मान रहे थे। किसी के नेत्र गीले हुए बिना नही थे। सभी चिल्ला के नही रो रहे थे, किन्तु सबके दिल मसोस रहे थे। वर्दक, कितनी सुन्दर गुलाब जैसी। फूल भी नही अभी

उसे मुकुल की अन्तिम अवस्था मे ही कहना चाहिए। और कितने गुण थे ?—सगीत-नृत्य का ही गुण नही, बहुत से दूसरे गुण भी। डेरे की नारियां सभी कह रही थीं—"आ वर्दक किसी से लडना नही जानती थी। हमेशा प्रसन्न रहती थी।" जान पड़ता है, उसने एक लम्बे जीवन के आनन्द को बीस वर्ष के जीवन मे भर लिया था, इसीलिए वह किसी समय भी शोक और चिन्ता को अपने पास नही आने देती थी।

भाई-बन्धु अब अन्तिम क्रिया की सोच रहे थे। दख्मा के कूप मे रख आना, यही अन्तिम क्रिया अयरानी धर्म मे प्रचलित थी। दख्मा के गवाक्षो मे शरीर को बैठाने की देर होती, फिर गिद्ध-कौए उस पर टूट पडते। लेकिन वर्दक का स्मित-वदन कह रहा था—क्या मैं चील-कौओ के लिए हू ? शायद यही जानकर वर्दक के बहनोई ने कहा—"हमारे लिए दख्मा मिलना आसान नही है। दख्मा बडी जातिवालो के अपने होते है। हमारी वर्दक को कौन अपने दख्मा मे रखने देगा ? जमीन मे गाडने के पक्ष मे भी मैं नही हू। वर्दक के इस हसते मुख को गिद्धो के सामने छोडना या भूमि के भीतर कीडो के कुतरने के लिए दबा देना, दोनो ही क्रूरता है।"

—तो क्या उसे डेरे मे रखना चाहते हो ?—पास बैठे मुखिया—राजा ने कहा।

—नही, डेरे मे रखने की बात नही है, डेरे मे रहना होता तो वह क्या मृत्यु से लडने न गई होती—कहते-कहते बहनोई का गला भर आया—मेरी राय है, कि वर्दक को न हमे मज्दयस्नियो की तरह दख्मा मे रखना चाहिए और न ईसाइयो की तरह भूमि मे गाडना चाहिए। हमे अपने हिन्द देश का रिवाज स्वीकार करना चाहिए। कुछ अधिक पैसा लगेगा, लकडी यहा महगी है, लेकिन वर्दक के हसते मुख को अग्नि की भेंट करना अच्छा होगा। वही बात की बात मे वर्दक की सौन्दर्यपूर्ण आकृति को अपने मे लुप्त कर लेगी।

—आज मुझे आग मे जलाने का गुन मालूम हो रहा है—मुखिया ने कहा—सचमुच ही अपने प्रिय को, चाहे उसमे दुख-सुख अनुभव [illegible] रह गई हो, इस तरह कौओ और कीडो के हाथ मे छोडना अच्छा नही लगता।

डेरे के भीतर पहर-भर दिन तक रोना और [illegible] बीच मे सारी तैयारी कर ली गई। नगर मे बहुत [illegible]

की मूक अनुमति भी प्राप्त हो गई। वर्दक अब चार जनो के कन्धो पर जा रही थी। अगले दोनो आदमी वही दोनो थे, जो उस दिन गदहो को हाके आ रहे थे। उस दिन के 'देवर' ने कन्धा अवश्य बदला, लेकिन पाटी नही छोडी। उसका दिल भीतर ही भीतर घुट रहा था। वह सोच रहा था—दूसरे मुझसे अधिक भाग्यवान् हैं, जो रोकर अपनी व्यथा हल्की कर लेते हैं।

रगा मे शायद ही कभी कोई मुर्दा जलाया गया हो। अग्नि बग (देवता) मुर्दा जलाने से अपवित्र हो जाते हैं, यह कहकर शायद कोई बाधा भी उपस्थित की जाती, किन्तु स्पन्दियार वर्दक की मृत्यु से बहुत प्रभावित हुआ था। वह व्यक्तिगत तौर से बुरा आदमी नही था। नशे की अवस्था मे उसने फिर-फिर नाचने का हुक्म दिया और इसी हुक्म का परिणाम यह भीषण घटना हुई, इसे वह अच्छी तरह समझता था। रात को ही वर्दक के अचेत होने पर उसका नशा दूर हो गया था। उसने अपनी शक्ति भर सारी कोशिश की, रगा के अच्छे से अच्छे वैद्य उसी रात को बुलाए गए, लेकिन कई वैद्य तो अभी धाम मे पहुच भी नही पाए थे, कि वर्दक के हृदय की गति सदा के लिए बन्द हो गई। स्पन्दियार ने इतने आसू जीवन मे कभी नही बहाए होगे। उसने सोचा —"जीवन मे तो वर्दक के लिए मैं कुछ नही कर सका, इसलिए उसकी मृत्यु का ही सम्मान करना चाहिए।" किन्तु वह सर्वोच्च जाति का एक श्रेष्ठ विस्पोह्र—सामन्त था। एक लोली बालिका के साथ मृत्यु के बाद भी अधिक घनिष्टता दिखलाना कुल-धर्म और देश-धर्म के विरुद्ध था। लेकिन उसने वर्दक के शव को अच्छे कपडे से अपने सामने ढकवाया, उसे एक अच्छी शव-मचिका पर लिटा के लोलियो के डेरे मे भेजा। शव क्रिया के व्यय के अतिरिक्त उसने वर्दक के परिवार के लिए उसकी मौसी के हाथ मे हजार दीनार दिए। हजार सोने के दीनार, जिससे चार हजार धेनु गाए खरीदी जा सकती, यह कोई कम धन नही था। लेकिन इससे वर्दक को क्या ?

नए श्मशान मे पहली चिता चुनी गई। वर्दक के शव को उस पर रखा गया। अन्तिम बार फिर एक बार उसकी बहन ने मुह खुलवाया। फिर रोदन का कोलाहल मचा। वर्दक गाढ निद्रा मे थी। अब भी उसके मुह से मुस्कराहट लुप्त नही हुई थी। मुह फिर ढक दिया गया। चिता मे आग लगा दी गई। देखते-देखते लकडिया धाय धाय जलने लगी। वर्दक के शरीर पर पडे कपडे का

लाल रग आग की लाल लपटो मे उतर आया था। लोग तब तक वहा बैठे रहे, जब तक लकडिया दहकते कोयले मे परिणत न हो गयी। और ऊची चिता भूमि के बराबर नही बैठ गयी।

सबसे अधिक मार्मिक पीडा उस तरुण को हो रही थी, जो उस दिन वर्दक के सिगार करते समय सामने बैठा था और जिसने कौतूहलवश साथ चलने के लिए कहा था। वर्दक को अकेली महायात्रा पर जाना था, वह क्यो किसी को साथ ले चलती? रात वर्दक नही आई, तो सवेरे आने का विश्वास था। सवेरे जिस रूप मे आई, उस पर उसे विश्वास नही होता था। अभी कै घडी बीती थी, जब कि उसने उसी मुह से कितनी मीठी-मीठी बातें सुनी थी। उसे विश्वास नही होता था कि वह कठ सदा के लिए मौन हो गया, वह स्वर और वे शब्द फिर सुनने को नही मिलेगे, जो कि अब भी उसके कानो मे गूज रहे थे। लोग वर्दक को डेरे से उठाने की सोच रहे थे, किन्तु उसका मन कह रहा था —"क्यो उसे दूर कर रहे हैं, इतनी जल्दी इसे लोप मत करो।" लेकिन जब दफ्ना और मिट्टी दबाने की जगह जलाने की बात आई, तो एक बार उसकी बुद्धि लौट आई। उसने मन ही मन उस सलाह का अनुमोदन किया। श्मशान-यात्रा मे अन्त तक वह वर्दक को अपने कन्धे पर ले गया, वह इसी तरह अपना अन्तिम स्नेह दिखला सकता था। वर्दक सुन्दर सुगधित गुलाब थी। गुलाब मे काटे होते हैं। किन्तु वर्दक बिना काटो का गुलाब थी। वह उसे कितना प्यार करती थी। तीन ही चार सप्ताह साथ बीते थे, लेकिन वह कितनी समीप हो गई थी? कुछ घडी भी अलग रहने पर उसे कल नही पडती थी। तरुण के साथ वर्दक का जहा घनिष्ट सबन्ध था, जिसे सारे डेरे वाले और वर्दक की बहिन भी जानती थी। वह कितने सपने देख रही थी—कम से कम अब तरुण हमारे डेरे का होकर रहेगा। लेकिन आज वह वर्दक को अपने कन्धो पर अन्तिम यात्रा के लिए ले जा रहा था।

यद्यपि औरो की भाति तरुण की आखो मे बहुत आसू की बूदे नही गिरी, लेकिन उसकी भीतरी व्यथा को वर्दक के सभी आत्मीय जानते थे। उसने आज तक किसी से बात नही की, बात करना उसके लिए सभव नही था। जान पडता था, स्वरयत्र, अश्रुयत्र और क्रन्दनयत्र तीनो ही उसके गले मे मिले हुए थे, उसे बाध टूट जाने का भय था।

शाम को वह अपने साथी के साथ नहर के ऊपर की ओर बहुत दूर चला गया। फिर नहर से हटकर दोनो एक एकान्त पहाडी टीले पर जा पहुचे। आधी रात तक चादनी थी, इसलिए उन्हे जल्दी नही थी। साथी ने तरुण से कहा—ऐसे समय मित्र! धैर्य देने की बात करना बिल्कुल अनुचित है। वर्दक के साथ तुम्हारा स्नेह यद्यपि वैसा नही था, जो पथ-विमुख होने का कारण बनता, किन्तु वह मूल्यवान् प्रेम था। और अब तो वह अनमोल हो गया।

—मेरे लिए जीवन की यह सबसे मधुर स्मृति रहेगी, जो कि वर्दक से मेरा परिचय हुआ, उससे समालाप हुआ, उसके साथ इतनी घनिष्टता हुई। मैं इन तीन सप्ताहो को जीवन के अन्त तक नही भूल पाऊगा। लेकिन क्या पहेली है? यह मनुष्य क्या चीज़ अपने भीतर पैदा कर लेता है? पृथिवी, जल, वायु और आग यही तो मनुष्य को बनाते हैं, लेकिन यही चीज़ें निर्जीव रूप मे एकत्रित या अलग-अलग मिलती हैं, और दूसरे जीवो मे भी मिलती हैं। मनुष्य मे इनका विलक्षण मिश्रण ज़रूर है, इसीलिए उनमे विलक्षण गुण भी दिखाई पडते हैं। दूसरे भी प्राणधारी प्रेम करते है, किन्तु मनुष्य का प्रेम बिल्कुल भिन्न है। उसका प्रेम एक व्यक्ति तक, एक हृदय और उसके एक क्षण तक सीमित नही रहता, वह उसके प्रभाव को अपने सारे वातावरण मे और अपने ही नही, बल्कि अपने विद्यमान साथियो और आनेवालो के लिए भी छोड जाता है।

—प्रेम मनुष्य के लिए मित्र! आवश्यक है और मैं तो कहता हू यही जीवन का सबसे मधुर रस है। किन्तु इसका अस्तित्व जहा आनन्द का कारण होता है, वहा इसका अभाव हृदय मे शूल चुभाने लगता है।

—हा, दार्शनिको ने प्रेम के बहुत से गुण-दोष दिखलाए हैं, विरागियो ने प्रेम से बचे रहने की बहुत शिक्षाए दी हैं। लेकिन, मुझे उनकी बातें एकागी मालूम होती हैं।—तरुण ने कहा।

—क्यो एकागी मालूम होती हैं? हो सकता है प्रेम मे गुण ही गुण देखनेवाले एकागिता कर रहे हो।

—किसी चीज को इसलिए दोषयुक्त और त्याज्य समझना कि वह सदा स्थाई नही रहती, यह कोई उचित तर्क नही मालूम होता। यदि कोई चीज़ सदा के लिए हमारे पास रह जाए, स्थायी हो जाए, तो मैं समझता हू, वह अत मे आनन्दजनक नही रह सकेगी। चेतना के उद्बोधन के लिए नवीनता की सबसे

अधिक आवश्यकता है। किसी रमणीय स्थान पर हम जाते हैं, तो वह कितना आकर्षक मालूम होता है। पक्षियो के मधुर कूजन ही नही, छोटे कीटो की झकार भी कौतूहल पैदा करती है। लेकिन वह कौतूहल दृश्य के पुराने होने पर अपने आप लुप्त हो जाता है। विश्व मे चीजें स्थाई नही हैं, इसीलिए तो विश्व के निरन्तर नवीन होने का रास्ता खुला है।

—और नवीनता आकर्षक और सौन्दर्य का हेतु बनती है, यही न कहना चाहते हो ?

—मैं इस समय सर्वथा तर्क-सगत बात करना भी चाहू, तो भी नही कर सकता, क्योकि चित्त का उद्वेग मुझे कही से कही खीचे लिए जा रहा है। निर नवीनता को मैं सौन्दर्य का कारण मानता हू, लेकिन चिरतन स्मृति को भी मैं कम मूल्यवान नही समझता, इसे परस्पर-विरोधी कहा जा सकता है। शायद मधुर-स्मृति प्रथम नियम का अपवाद है। चिर-नवीन आनन्द प्रेम मे पैदा होता है, चिरन्तन मधुर स्मृति आनन्द देती है और मन मे टीस भी पैदा करती है। [illegible] [illegible] उसका सर्वथा अभाव हो जाए किसी पुरुष मे मधुर-स्मृति नाम की वस्तु ही [illegible] रहे, तो मैं नही समझता, वह अपने या दूसरो के लिए भार छोडकर कुछ और हो सकता है।

—तो चिरस्मृति और चिर-नवीन का झगडा मनुष्य के जीवन के साथ लगा जान पडता है। स्मृति कोई साकार पदार्थ न होने पर भी क्या कभी-कभी आदमी के हृदय के लिए दुःसह हो जाती है ?

—दुःसह और सुसह सभी तरह की बातें जीवन मे मिलती है। मैं तो समझता हू, दुःसह घटनाओ या दुखो का अस्तित्व मनुष्य के जीवन मे साकार रूप मे न सही, निराकार रूप मे ही सदा थोडा बहुत रहना चाहिए। यदि दुख की घडियो से न गुजरे, तो सुख के मूल्य को आदमी नही समझ पाता। [illegible] जल के आए आदमी को ही शीतल छाया प्यारी लगती है, [illegible] छाया को कोई नहीं पूछता। हमारे दार्शनिक कहते है—[illegible] कोई भी भोग नही है, जिसमे लेशमात्र भी दुख की सभावना न हो, [illegible] सारे भोग उसी तरह त्याज्य हैं, जिस तरह [illegible]

—यह तो अवश्य भारी [illegible] है, यह वास्तविकता [illegible]

—मैं चिर-नवीनता का पक्षपाती हू। चिर-नवीनता हमे खडे होकर नही, चलते-चलते जीवन के सभी कार्यों को करने के लिए कहती है। दुनिया सारी चल रही है। चल नही दौड रही है, काल कितना तेज दौडता है, कभी इसकी कल्पना भी तुमने की है ?

—काल की दौड तो सचमुच ही अगम्य सी मालूम होती है। अपने ही जीवन के पच्चीस-छब्बीस सालो के ऊपर दृष्टि डालने से मालूम होता है, कि यह कैसी प्रवल वेगवाली दौड है। जैसे दौड मे स्थान पीछे छूटे जाते अस्पष्ट और धूमिल बनते मिल जाते हैं, उसी तरह हम अपने जीवन मे इस दौड का प्रभाव देखते हैं।

—लेकिन वस्तुत यह काल नही दौड रही है, दौड रही है दुनिया और उसकी हरेक वस्तु। वस्तुत दुनिया की दौड को हमने काल का नाम दे रखा है। दुनिया तेजी से दौड रही है। इस दौड मे व्यक्ति पीछे रहते हैं, दुर्वल होकर पीछे पड जाते हैं, लेकिन दूसरे आगे वढते हैं। वे भी पीछे पड जाते है, लेकिन आगे वढने वालो से दुनिया खाली नही होती। व्यक्तियो के लिए स्मृति ढारस देती, और कभी-कभी अधीर भी कर देती है, किन्तु, चिरन्तन-मधुर स्मृति को भी कभी चिर-नवीनता ने ही प्रदान किया था। फिर दौड मे अशक्त रहकर पड जाने वालो के लिए कव यह शोभा देता है, कि वह आगे वढने वालो को प्रोत्साहन न दें।

—मुझे तो यह कल्पना का दर्शन न वहुत समझ मे आता है, न आकर्षक ही मालूम होता है।

—जिसे तुम कल्पना का दर्शन कह रहे हो, उसे साकार दर्शन के रूप मे देखा जा सकता है। जिन गिनतियो को हम निराकार रूप मे जोडते है, उन्हे चाहे तो गोटियो या कौडियो के रूप मे रखकर गिन भी सकते हैं, इसलिए साकार के आधार पर जो दार्शनिक कल्पना होती है, उसे भी हमे दूसरी कोटि मे नही रखना चाहिए। आज वदक भी साकार रूप को छोडकर विश्व मे विलीन हो गई है, उसी तरह जैसे पहले भी करोडो विलीन हुए, और आगे भी वलीन होते रहेंगे, लेकिन विलीन हुई वदक भी मेरे लिए कुछ है, थी नही, अव भी है, और मेरे जीवन-भर रहेगी। यह ठीक है, स्मृतिया उसी व्यक्ति के जीवन तक रहती हैं, उसके वाद फिर वह विलीन हो जाती हैं, उनकी आवश्यकता भी उसी व्यक्ति को रहती है। लेकिन हम जिन वारीकियो को लेकर आज वदक के अभाव की

व्याख्या कर रहे हैं, क्या वह इतने महत्त्व की चीज है कि और बातो को पीछे डाल दिया जाए ?

—यही मैं भी कहना चाहता था। यह मेरे समझ के भीतर की बात है। वर्दक को क्यो बिना खिले ही मुर्झा जाना पडा ? यदि रगा के विस्पोह्ल और उसके विषमतापूर्ण समाज की जगह दिह-बगान मे वर्दक को रहना पडता तो क्या उस गुलाब की कली को चटकने के साथ धराशायी होना पडता।

—नही, तब ऐसा नही हो सकता था। आज सारे रगा के नर नारियो का सब कुछ विस्प्रोह्ल के हाथ मे है। उसके ऊपर जामास्प है, किन्तु उसने यहा का सारा अधिकार विस्पोह्ल पर छोड रखा है। सामाजिक-व्यवस्था ने उसके पास बिना परिश्रम के अपार सम्पत्ति जमा कर दी है, उसी के फलस्वरूप सबसे अधिक सख्यावाले लोग जीवन की मामूली आवश्यकताओ से भी वचित हो गए हैं। ये वचित अपने ही हाथ की कमाई को वहा जाकर भिक्षा के रूप मे दया के तौर पर पाना चाहते हैं जिसके लिए वह उसकी हरेक बात को मानने के लिए बाध्य हैं। इस बाध्यता का परिणाम इसी तरह के भीषण रूप मे प्रकट होता है, जिसे हमने यहा देखा।

—इसीलिए मित्र ! मैं तो समझता हू दार्शनिक भूल-भुलैया से अलग रहकर हमे अपनी समस्याओ को उनके साकार रूप और साकार परिस्थिति मे देखना चाहिए और ऐसा उपाय सोचना चाहिए, जिससे कि ऐसी घटनाए और उनके कारण होनेवाली ऐसी दु सह स्मृतिया न होने पाए।

—ओह ! अन्दर्जगर ! !

१८

मनुष्य और मनुष्यता

लोलियो का कारवा फिर पूरब की ओर रवाना हुआ था। रगा मे उन्हो ... मे से एक को खोया, जिसका अभी हृदय मे ताजा घाव था, [illegible] भर देगा। आज कारवा पर्वत के मेरुदण्ड को पार करने आया था। दो[illegible] वक्त वे मेर (जोत) के समीप थोडा विश्राम और [illegible]

ही देवदार का जगल था। यहां लकडी की कोई कमी नही थी। दोनो तरुण मित्र रोटी और कूजे मे पानी ले कुछ दूर हटकर वृक्षो के नीचे जा बैठे। उन्हे यह जगह बडी सुहावनी मालूम हो रही थी। अयरान मे बहुत कम ऐसे स्थान है, जो प्राकृतिक तौर से वृक्ष-वनस्पति से ढके हो। यही सोच के एक ने कहना आरम्भ किया—अयरान मे क्यो पर्वत इतने नगे हैं, यह भी तो अयरान का ही भाग है ?

—नही देख रहे हो—दूसरे ने कहा—रास्ते के पास विशेषकर पानी के झरनो के किनारे, जहा आने-जाने वाले लोग ठहरते है, भूमि वृक्षो से खाली हो गई है। यह कितने ही कटे थून बतलाते है, कि अभी हाल तक जगल की सीमा यहा तक थी।

दूसरे तरुण ने अपने साथी की ओर आश्चर्य और सम्मान से देखते हुए कहा—तो जगल की सीमा को सकुचित करने का दोष आदमी के ऊपर है ?

रोटी को दात से काटकर चबाते हुए दूसरे ने कहा—हा आदमी के ऊपर और उसके सहचर कडी खुरवाले पशुओ के ऊपर भी। आदमी वृक्षो को काटकर उच्छिन्न कर देते हैं और उनके घोडे, गदहे, बैल और भेड-बकरिया अपने खुरो से भूमि को इतना रौंदती रहती हैं, कि नये जमे अकुर वहा पनप नही सकते। मैंने तो यह भी सुना है कि वृक्षो के अधिक रहने पर पर्वत भी तर रहते हैं, उनके भीतर जगह-जगह झरने निकलते रहते है। ऐसे कितने ही सूखे झरनो को मैंने देखा है।

—आज भी देखा। सबेरे घडी भर चलने के बाद रास्ते मे एक पत्थर का बना कुड था। वहा पानी गिरने का गोमुख भी लगा था, किन्तु पानी का पता नही। सूखी जगहो मे तो किसी ने कुड और गोमुख बनवाया नही होगा ?

—हा, मनुष्य वृक्षो को काट के उच्छिन्न करते है, उनके पशु नये वृक्षो को जमने नही देते। फिर कुपित प्रकृति मनुष्य को लकडी से वचित कर देती है, और पानी से भी, यही नही, भूमि की उर्वरता से भी वचित कर देती है, क्योकि वृक्षो के पत्तो, झाडियो और घासो के न होने, न सडने से खाद नही बन पाती।

—था ! मनुष्य ने कितने दिनो से यह बाड जारी कर रखा है !!

—जब से मनुष्य का इतिहास है, मैं नही समझता, आदमी ने तभी से ऐसी अदूरदर्शिता करनी शुरू की।

—तो क्या तुम समझते हो, पहिले के मनुष्य आज से अधिक अच्छे थे ?

—इसके लिए हमारे पास प्रमाण क्या है, लेकिन बुद्ध की एक बात मुझे युक्तियुक्त मालूम होती है।

—भाई, तुम्हारा बुद्ध बड़ा अग्रसोची था, उसकी जो-जो भी बातें तुमसे मैंने सुनी, उससे पता लगता है, कि उसकी प्रतिभा अप्रतिम थी।

—केवल इतनी ही कसर थी, कि वह अपने समय मे बहुत पहले पैदा हुआ था और सूखा आदर्शवादी नही व्यवहार-बुद्धि रखने वाला पुरुष भी था। यही व्यावहारिकता कल्पना पर अकुश डाल देती थी। हा, तो बुद्ध ने कहा था, पहिले मनुष्यो की अलग सम्पत्ति नही थी, जगल मे अन्न और फल अपने आप उपजते थे, लोग मिलकर जमा कर लाते और मिलकर खाते थे। बहुत दिनो बाद किसी के सिर पर स्वार्थान्धता सवार हुई, उसने अन्न-फल बटोरकर खाने के लिए ढेर करना शुरू किया। फिर दूसरे ने जगल जाने के परिश्रम से बचने के लिए रात-बिरात उसी ढेर मे से कुछ निकाल लिया। मनुष्य की स्वार्थान्धता ने इस प्रकार चोरी को जन्म दिया। देखा-देखी दूसरे भी स्वार्थान्ध बनने और [illegible] करने लगे। चोरी और बढी, फिर उसके कारण लडाई और मारपीट शुरू हुई। तब न्याय करने के लिए पचो की आवश्यकता पडी। झगडो की सख्या अधिक होने पर पचो के लिए यह मुश्किल हो गया, कि न्याय करें या घर का भी काम करें। लोगो ने अपने मे से किसी सज्जन होशियार ईमानदार को स्थायी तौर से पच बना दिया। उसे धन कमाने के काम से मुक्त कर दिया और [illegible] के लिए अपनी कमाई मे से उसे देने लगे। यह था पहला राजा, जिसका प्रादुर्भाव उसी वैयक्तिक स्वार्थान्धता के कारण हुआ। बुद्ध की उस [illegible] कहानी में सत्य का कुछ अश अवश्य मालूम होता है।

—सत्य का अश नही, यह बिलकुल सत्य बात मालूम होती है। हमारे ईरान मे पहले आर्यो का कोई राजा नही था। मद (मिदिया) [illegible] को सबसे पहिले राजा बनाया। ईरानियो मे वही प्रथम राजा था। [illegible] राजधानी हग्मतन (हमदान) हम देख आये है। [illegible] किया, फिर उनमे पारस वश ने राज छीन लिया, जिसमे कुरु (कुरुष) [illegible] दारयव (दारयोश) जैसे बलशाली राजा हुए। [illegible] है कि पहिले राजा नही होते थे जन ने विशेष काम के लिए [illegible]

—और राजा के चुन लेने पर मनुष्य मे भेद और [illegible]

से फैलने लगा। देवक को हुए बारह-तेरह सौ वर्ष से अधिक नही हुए, इतने ही समय मे हम देख रहे है, कि मनुष्य कितना पतित हो गया। लेकिन पतन का दोष सारी जनता पर नही है। यद्यपि स्वार्थान्धता का दुष्परिणाम सभी को भोगना पडता है, लेकिन उससे लाभ थोडे ही आदमियो को होता है। यही थोडे आदमी है जो सारे देश को भाड मे झोकते हैं। अब भी दिह-बगान जैसे स्थानो को देखने से पता लगता है, कि सुख-शान्ति का रास्ता यह नही, वह है।

—अर्थात् मानव निजी स्वार्थ को भुलाकर सबके हित मे अपना हित समझे।

—हा, सामने ही देख लो यदि ऐसा समझा होता तो ये बहुत से पर्वत वृक्ष-वनस्पतिहीन नही हुए होते। यात्री समझता है, हम तो अब पार हो रहे हैं, यहा और किसको आना है, इसलिए रास्ते के जगल या भूमि का चाहे कुछ भी हो, हमे तो अपना तुरन्त का लाभ देखना है, पीछे आनेवाले जाए चूल्हे भाड मे।

—यात्रियो की बात क्यो कर रहे हो मित्र ? मनुष्य अपने सामने अपनी सन्तान तक के हित की परवाह नही करता। अपने अनिश्चित भविष्य के लिए धन सग्रह करना आवश्यक है, और मृत्यु-समय निश्चित न होने के कारण कुछ धन सम्भाल के रखना पडता है, इस तरह सन्तान को कुछ मिल जाता है, नही तो बहुत से बापो के लडके अकिंचन हो के रहते।

—अकिंचन हो के रहते, तो मैं समझता हू, दुनिया के लिए बुरा नही होता। बिना परिश्रम के धन पानेवाले ही दुनिया मे भारी दु ख का बीज बोते हैं।

—तो ये जगल इन पचासो नये कटे वृक्षों-खूथो के देखने से पता लगता है कि निम्न भागो मे जगल उजडता ही जा रहा है। यदि मनुष्य की अदूरदर्शिता और स्वार्थान्धता इसी तरह चलती रही, तो ये महान् पर्वत भी किसी समय वैसे ही नगे हो जाएगे, जैसे अयरान मे के दूसरे पहाड।

कारवा भोजन करने के बाद चलने के लिए तैयार हो गया। दोनों तरुण केवल बात ही मे नही लगे थे, उन्होने अगूर के साथ रोटिया खाके पानी पी लिया था। लोलियो के घोडे-गदहे और लडके-बच्चे आगे को चले, "गुल" और "दुलदुल" अब भी उनमे थे, दोनो तरुणो को इस वक्त उनकी देख-भाल करने का काम नही मिला था।

दूसरे तरुण ने छोडी बात को फिर छेडते हुए कहा—मनुष्य क्या सम्पत्ति का केवल सहार ही करता है, सम्पत्ति से मेरा मतलब है, प्रकृति द्वारा सचित

सम्पत्ति से।

—मनुष्य मे सिर्फ सहार की ही अद्भुत शक्ति नही है, वह निर्माण करने की भी बडी अद्भुत क्षमता रखता है। मनुष्य के मस्तिष्क और भूमि के गर्भ मे क्या-क्या छिपा है, इसका अनुमान करना भी मुश्किल है। देखा है न लोहे की खानो को, सीसे की खानो को ? मनुष्य उनकी खोज मे पहाड छेदकर पाताल पहुचा है। तुम्हे शायद यह पसन्द न लगे, लेकिन मुझे तो मनुष्य की शक्ति को देखकर विश्वास हो गया है कि जगत का यही बग है, बाकी अनेक बग अथवा एक बगानबग झूठी कल्पना हैं।

—क्या सचमुच ही मित्र ! तुमको बगानबग पर कभी विश्वास नही होता ?

—यदि तुम्हारा बगानबग न होता, तो मनुष्य का काम बहुत आसान होता। यदि तुम उसे मानने का ही आग्रह करते हो, तो यही कहना पडेगा, कि बगानबग (भगवान) ने दुनिया के कोने-कोने को अन्याय, अत्याचार, खूनी संघर्ष और [illegible] से भर रखा है, जिसे कम करने के लिए मनुष्य सरतोड़ कोशिश कर [illegible] है।

—इस बात मे मैं तुमसे सहमत नही हो सकता मित्र !

—मैं भी इसके लिए आग्रह नही करता।

यदि कोई शक्ति न होती, यदि कोई महान् बग [illegible] न होता, तो यह दुनिया बनती कैसे ?

—इसके बारे मे मैं इतना ही कह सकता हू कि यह [illegible] दुनिया है, जिसके अधिकाश प्राणधारी केवल [illegible] मरने के लिए पैदा किए गए हैं। ऐसी क्रूर दुनिया को बनाने [illegible] कोई क्रूर [illegible] सकता है। इस दुनिया मे तुम बगानबग का सिद्ध नही [illegible], [illegible] आसानी से मनवा सकते हो। लेकिन शैतान [illegible] मनुष्य [illegible] क्या ? फिर, हरेक चीज का [illegible] बनानेवाला होना चाहिए, [illegible] धारणा है।

—अर्थात किसी कारण के बिना ही वस्तु का [illegible] सच्ची धारणा है ?

—तुमने मुझे पूरा कहने नही दिया। [illegible] मैं [illegible]

दुनिया मे कोई छोटी से छोटी भी ऐसी वस्तु नही है, जो केवल एक कारण से पैदा हुई है। अनेको कारण मिलकर एक कार्य को पैदा करते हैं। अनेक कारणो को मान लेने पर एक कारण वगानवग का महत्व जाता रहता है।

—लेकिन वग का विश्वास आदमी को शान्ति देता है?

—निर्बल हृदयो को अवलम्ब देता है, इसे मैं मानता हू, इसीलिए निर्बल हृदयो से उनके वग को छुडाने का प्रयत्न वैसा ही क्रूर है, जैसा सच्चे हाथी मानकर खेलनेवाले बच्चे से उसका खिलौना छीन लेना।

दूसरे तरुण ने मुस्कराते हुए कहा—तो तुम हम सबको बच्चे ही मानते हो!

—कम से कम इस बात मे। वग का विचार बस मनुष्य का यही उपकार कर सकता है, कि उसे वृक्ष के सहारे खडी रहनेवाली लता की भाति सदा पराश्रित रखे। मनुष्य की एक भी समस्या को हम नही देखते, जिसे वग ने आकर हल की हो। मानव अधाधुध एक ओर बढता चला जाता है, और बिना समझे-बूझे या कुछ जानकर भी अपने और दूसरो के रास्ते मे काटा बोता चलता है। फिर एक समय उसे होश आता है, और वह बिखरे काटो को चुनने लगता है। पीढियो के बिखरे काटे एक पीढी भी नहीं चुन सकती है, एक या दो व्यक्तियो के चुनने की तो बात ही क्या?

—यह तो देखा जाता है कि जब मनुष्य दारुण विपद् से बचने के लिए किसी बात की आवश्यकता समझता है, तो अपने निजी स्वार्थों को दूर करके उसमे लग जाता है।

—शताब्दियो के बोए काटो को चुनने का काम आज अन्दर्जगर और उनके शिष्य कर रहे है। हम नही कह सकते, कि वह अवश्य ही सफल होगे। यदि सफल न भी हो तो भी उनका प्रयत्न अकारथ नही जाएगा। यह जलाई आग बुझनेवाली नही है, एक पीढी नही दूसरी या तीसरी, एक शताब्दी नही दूसरी या तीसरी बीतेगी, कभी ऐसा समय अवश्य आएगा, जब मनुष्य अपने निवास की गदगी को दूर करके दुनिया को मनुष्य के रहने लायक बनाएगा।

—तो तुम समझते हो कि हमे अपनी समस्या स्वर्गीय शक्ति के ऊपर नही छोडनी चाहिए?

—यदि समस्याओ को हल नही करना है, उन्हे और भारी से भारी

होने देना है, तो अवश्य आकाश की ओर मुह बाये बैठे रहना चाहिए। यदि तुम्हारे ये किसान आकाश की ओर मुह ताकते रहते, तो कभी इन गुलगुर मेवो के उद्यानो को नही खडा कर सकते थे। कितने परिश्रम से कितने दूर दूर से बूद-बूद पानी बटोरकर किसान बागो मे ले जाता है। थोडी-थोडी दूर पर कूए खोदकर उन्हे नीचे नाली से मिला के मीलो दूर से पानी की नहरें लाता है। यदि उन्हे भूमि के ऊपर लाता, तो प्यासी भूमि और सूरज की किरणें रास्ते मे जल को पी जाती, इसीलिए वह अपनी नहरो को धरती के भीतर-भीतर [illegible] आता है। यहा समस्या का हल उसने अपने आप निकाला है। और भी, तुमने देखा है, किस तरह घटीयन्त्र (रहट) से कूए के भीतर का पानी बाहर करके खेतो को किसान हरा-भरा करता है, कूए से एक घडा पानी निकालना बेकार [illegible] होता, मनुष्य ने घडो की माला बना एक चक्के पर रख दी और दूसरे [illegible] घुमाने के लिए बैल या ऊट जोत दिया। अब घटी की माला अपने आप घूमती [illegible], एक ओर घडे पानी मे डूब के ऊपर की ओर उठ जाते और दूसरी ओर [illegible] के बाहर पानी उडेल के भीतर पानी भरने के लिए उतरते जाते है। मै समझता हू मनुष्य के मस्तिष्क की शक्ति के उपयोग का अभी प्रारम्भ [illegible]
।

—लेकिन कितने है जो इन बातो को समझते है ?

—समझ तो बहुत पावें, यदि उन्हे समझाने दिया जाए। अज्ञान [illegible] है। हमारे यहा लोगो क्या समझते है ? बस यही कि एक जाडे [illegible] [illegible] मे रहे, तो दूसरे जाडे मे हूणो के राज्य म पहुचना चाहिए, इसी तरह [illegible], अपमान सहते दिन काट देना है, जैसे कि उनके बाप-दादा [illegible] है।

—लेकिन हमारे साथ मित्र ! [illegible] [illegible]

—अज्ञान और अपरिचय का यह अर्थ नहीं, कि [illegible]
वचित रह जाए। इन्होने हमारे साथ कितना आत्मीय [illegible] किया। कौन है इसका उन्हे पता नही। [illegible] [illegible]
उनके जैसी सबसे अधिक पद-दलित [illegible] [illegible]
कर रहे है, इसके लिए हर तरह का [illegible]
उनके चेले है, बस इतना [illegible] कुछ [illegible]
यह भी जानते है, कि [illegible] और उनके [illegible] भी मदद [illegible]

अपराध नही है।

—हम अब उस जगह पहुच रहे हैं मित्र! जहा इनका और हमारा रास्ता अलग होगा।

—शायद कल या परसो हम पीरोजकुह पहुच जाए, वही से इन्हे उत्तर की ओर और हमे पूरब की ओर जाना पडेगा।

साथी ने उदास होते कहा—फिर कौन जानता है, कि इनसे कभी भेंट हो सकेगी, इन्होंने हमारे साथ जो नेकी की है, उसका बदला देने की बात तो अलग।

—नेकी का बदला देना सभव नही है। आदमी, जैसा कि तुम कह रहे थे, बहते पवाह का एक अग है। सारे उपकृत और उपकारकर्त्ता नदी-नाव सयोग से मिलकर बिछुड जाते हैं। फिर ऋण का प्रतिशोध कैसे सभव है?

—मानवता का जिसने कुछ पाठ पढा है, वह ऋण-प्रतिशोध किए बिना नही रहता। वह उपकार को केवल एक व्यक्ति द्वारा किया नही समझता, बल्कि समझता है कि उपकार समाज की ओर से हुआ है, व्यक्ति तो निमित्त मात्र है। चाहे व्यक्ति से उऋण होने का अवसर न मिले, लेकिन समाज तो ऋण-प्रतिशोध के लिए मौजूद है।

—और कौन जाने जैसे चलते-फिरते अब भेंट हुई, इसी तरह फिर कभी हो जाए।

—विदा लेने का समय आ रहा है। मनुष्य बेद (बीरी) की हरी डाली है, बस थोडी-सी भूमि स्निग्ध होनी चाहिए, फिर गडने के साथ ही वह भूमि मे जड फेंकने लगती है। हमी जब इनमे आए थे, तो अपरिचित थे। इनसे अपरिचित थे और इनके रीति-रिवाज, चाल-व्यवहार से भी। लेकिन कितनी जल्दी हम इनके हो गए? महीने-भर बाद आज यह सोचना मुश्किल हो रहा है, कि विदाई के समय कैसे इनके आसुओ को रोका जाए।

—विशेषकर वर्दक की बहन और मौसी के आसू तो आसानी से नही रुक सकेंगे।

—बेचारी वर्दक! यदि वही वह भी साथ होती, तो विदाई लेनी कितनी कठिन हो जाती। इसीलिए कहना पडता है, मनुष्य सभी जगह जड फेंकने के लिए तैयार रहता है। कहते हैं का मनुष्य की सुध लेता है, लेकिन मैं कहता हू,

वग नही सुध लेता, मनुष्य की सुध मनुष्य लेता है। भाषा नही जानने पर भी सिर्फ मनुष्य का रूप देखकर अपरिचित देश मे भी लोग हस्तावलम्ब देने को तैयार हो जाते हैं। मै बहुत देशो मे घूमा हू और कितनी ही वार बिल्कुल खाली हाथो। अनमोल पण्यो और रत्नो से भरे पोतो के सार्थवाह पोतभग होने पर उसी रूप मे किसी अपरिचित द्वीप मे जा निकलते हैं, जिस वेष मे कि वह ससार मे आए थे। भाषा का एक शब्द भी न जानते लोग उनकी सहायता करने के लिए तैयार मिल जाते हैं। मनुष्य के प्रति मनुष्य की सहानुभूति स्वाभाविक है।

—हा, इस गुण से हमारे लोली खाली नही, बल्कि अधिक परिचित है।

—उन्हे भी तो बराबर नये देशो को देखने रहना पडता है।

दोपहर की चढाई के बाद शाम तक कारवा पहाड पर सिर्फ उतरता ही चला गया। पहाड बहुत तेजी से जगलहीन होने गए। फिर सूखी भूमि और पहाडो मे कच्ची मिट्टी के गोल-गोल ढेरो जैसे घराने गाव जहा तहा [illegible]ई पडने लगे। यहा वृक्ष मनुष्य ने अपनी तपस्या के बल पर लगा रखे थे।

१९

तीन राजकुमार

तौर पर थी। जिस समय सोग्दी व्यापारी वस्ती से वाहर हुए थे, उस समय दिन काफी चढ चुका था। उनके वाह्लीकी घोडे विशाल और सुन्दर थे। सर्दी अधिक थी, इसलिए उनकी पोशाक यद्यपि चमड़े की थी, किन्तु वह साधारण चमडा नही था। सौदागरो ने अपने माल के काफिले को आगे भेज दिया था, और अब निश्चिन्त हो पीछे से चल रहे थे।

दिह्मगान का इलाका भी ईरान के दूसरे प्रदेशो की तरह ही विल्कुल रूखा-सूखा है। प्राणियो और मनुष्यो के लिए न कही जल का पता न तृण का। इसीलिए गाव भी यहा दूर-दूर पर मिलते है। अवहरशहर और आगे का मार्ग व्यापार के कारण बहुत चलता रहता है इसलिए भी इतने गाव जहा-तहा मिलते है, नही तो इस स्वागतहीन भूमि मे इतनी वस्तिया क्यों वसती? दिहमगान (दमगान) और दूसरे रास्ते के गावो मे लोगो ने मेवो के वाग वगीचे लगा रक्खे है, किन्तु वह केवल मनुष्य की तपस्या के फल हैं। आजकल वृक्षो के पत्ते गिर चुके थे।

गाव दूर छूट चुका था। तीनो सवारो के आस-पास दूसरे आदमी नही थे। वे अपनी वातो मे मस्त थे। आयु मे सवसे ज्येष्ठ सवार कह रहा था—क्या आश्चर्य की घडी है, कैसा सयोग है, कि हम तीन राजपुत्र यहा सोग्दी व्यापारी के रूप मे एकत्रित हुए है। समय सदा एक-सा नही रहता। रथ का चक्का कभी ऊपर आता है, कभी नीचे। वह तो कोई वात नही, किन्तु सुनसान वयावान मे तीन राजकुमारो का मिलना विचित्र सयोग है।

उमर मे दूसरे नम्वर के सवार ने अपने ज्येष्ठ साथी की वात मे वात मिलाते कहा—इसमे क्या सन्देह है? हमारे साथी की आपवीती तो सुन ही चुके है और मेरी भी वातें आपको मालूम है, लेकिन हमारी वडी इच्छा है, कि आपकी वातें सुने। यह तो हम जानते है, कि आप कुशानवशी (कुषाण) राजकुमार है।

कुशान—कुशान अर्थात् कुशाना कुशो का, हा, व्यक्तियो की तरह राजवशो का भी उदय और अस्त होता है, और एक ही वार होता है। हमारे वश ने पाच सौ वरस के करीव राज्य किया। राज्य भी साधारण नही। हिन्द देश का अधिकाश हमारे जन के हाथ मे था। कपिशा (कावुल) वाह्लीक (वलख), सोग्द से लेकर पच्छिमी (कास्पियन) समुद्र तक कुशानो की ध्वजा फहरा रही

थी। कुशान राजलक्ष्मी से दुनिया को ईर्ष्या हो रही थी, लेकिन राजलक्ष्मी किसके पास सदा रही है। हमारे वंश ने बहुत उतार-चढाव देखे। कनिष्क और हुविष्क का विशाल राज्य सिकुडने लगा, तब भी पचास साल पहले तक [illegible] और पश्चिमोत्तर का भाग हमारे हाथो मे था।

तीसरा सवार—व्यक्ति की भाति राजवशो मे भी जवानी बुढापा और फिर मृत्यु आती है।

ज्येष्ठ—इसमे विचित्रता की कोई बात नही है। वश की स्थापना ऐसा ही व्यक्ति कर सकता है, जिसमे अच्छे योद्धा और योग्य शासक के गुण हो। [illegible] वह केवल पहिले के राजवश की दुर्बलता से ही लाभ नही उठाता, [illegible] अपनी वीरता के बल पर छत्र धारण करता है। उसके पुत्रो ने राज्य की स्थापना मे यदि कोई भाग नही लिया है, तो निश्चय ही उसमे उचित गुणो का अस्तित्व संदिग्ध होगा। योग्य शासक अपना उत्तराधिकार भी योग्य को ही देना चाहता है, लेकिन बहुत कम ऐसा देखने मे आता है, कि योग्य पिता का पुत्र योग्य [illegible] हो। इसी का परिणाम होता है, कि नये राजवश का वैभव [illegible] अधिक ऊपर की ओर नही उठता है। सिंहासन के उत्तराधिकारी [illegible] [illegible] ही सैनिक और शासक के गुणो से अधिकतर विमुख होते जाते है। फिर ऐसे राजवशो के उत्तराधिकारियो का सिंहासन पर बना रहना तभी हो सकता है, जब कि उनके शत्रुओ मे योग्यता की कमी हो।

तृतीय सवार—पार्थियो का उदाहरण इसकी पुष्टि करता है। [illegible] उन्होने कुशानो से थोडा ही कम समय तक शासन किया होगा [illegible] उन्हे हम शक्तिशाली कह सकते है।

ज्येष्ठ—पार्थिव कुशानो से पहले ही अपना राज्य स्थापित कर [illegible]। मै समझता हू, उन्होने कुशानो से कम समय तक राज्य नही किया और [illegible] समय तक तो दोनो प्रताप मे एक दूसरे के समकक्ष रहे। पार्थियो और [illegible] का कभी-कभी युद्ध भी होता था, किन्तु दोनो ही [illegible] भाई थे, इसलिए उनमे बहुत कम आपसी [illegible]।

किया।

ज्येष्ठ—बुरा किया। सासानियो के युद्ध से निर्बल होने के कारण ही कुशानो को केदारी हूणो ने धर दबाया। शायद सासानियो ने उस समय इसे नही समझा, लेकिन अब वह इसे अच्छी तरह सोच ही नही रहे हैं, बल्कि परिणाम भी भोग रहे हैं—एक शाहशाह उनके हाथो मारा जा चुका है। केदारियो की शक्ति सबल ही होती जा रही है, इसलिए क्या मालूम सासानियो पर क्या बीते ?

द्वितीय सवार ने अबकी मुह खोला—क्या बीतने की बात भविष्य के गर्भ मे है, किन्तु अभी तो हम केदारियो के पास बडी-बडी आशाए लेकर जा रहे हैं, और आशा है कि हम हताश होकर नही लौटेंगे।

ज्येष्ठ—हताश होने की बात क्या है, जब हम खाकान के निमत्रण पर वहा जा रहे है।

द्वितीय सवार—मैं एक बात पूछू ? मुझे यह नहीं समझ मे आता, कि आप कैसे केदारी खाकान के इतने अनुरक्त हो गए और कैसे उसने आप पर विश्वास किया।

ज्येष्ठ—अनुरक्त होने की बात तो नही है, लेकिन मैं हेपतालो का विरोधी नही हू। विरोध तो तब करता, जब मुझे आशा होती कि कुशान-राजलक्ष्मी को मै फिर मना लाऊगा। मुझे विश्वास है कि कुशान वश फिर अपने गौरव को लौटा नही सकता, वह केवल सामन्त बनकर ही कुछ समय और भोग भोग सकता है।

तृतीय सवार—जैसे पुराने पार्थिय सोरन पह्लव अभी सासानियो के बडे सम्मानित सामन्त के तौर पर भोग रहे है। उनका पद ऊचा है, उनका सासानी वश से बराबर साला-बहनोई का सम्बन्ध रहता है।

द्वितीय सवार—नया राजवश दूसरे राज्यवश के मुकुट और सिहासन को छीन लेता है, लेकिन उसके अवशेष को मिटाना नही चाहता।

ज्येष्ठ—अवशेष को मिटाने की आवश्यकता नही है। अधिक हुआ तो पिछले वश मे के अन्तिम गद्दीधर की सतानो मे से कुछ को नष्ट कर दिया। अधिक शताब्दियो तब राज्य करनेवाले वश का खानदान भी बढ जाता है, फिर सबको नष्ट भी कैसे किया जाए। आखिर ये पदच्युत राजवश के लोग कृपा-पात्र बनाए जाने पर सबसे अधिक विश्वासपात्र भी होते है।

थी। कुशान राजलक्ष्मी से दुनिया को ईर्ष्या हो रही थी, लेकिन राजलक्ष्मी किसके पास सदा रही है। हमारे वश ने बहुत उतार-चढाव देखे। कनिष्क और हुविष्क का विशाल राज्य सिकुडने लगा, तब भी पचास साल पहले तक कपिशा और पश्चिमोत्तर का भाग हमारे हाथो मे था।

तीसरा सवार—व्यक्ति की भाति राजवशो मे भी जवानी, बुढापा और फिर मृत्यु आती है।

ज्येष्ठ—इसमे विचित्रता की कोई बात नही है। वश की स्थापना ऐसा ही व्यक्ति कर सकता है, जिसमे अच्छे योद्धा और योग्य शासक के गुण हो। वस्तुत वह केवल पहिले के राजवश की दुर्बलता से ही लाभ नही उठाता, बल्कि स्वय अपनी वीरता के बल पर छत्र धारण करता है। उसके पुत्रो ने राज्य की स्थापना मे यदि कोई भाग नही लिया है, तो निश्चय ही उसमे उचित गुणो का अस्तित्व सदिग्ध होगा। योग्य शासक अपना उत्तराधिकार भी योग्य को ही देना चाहता है, लेकिन बहुत कम ऐसा देखने मे आता है, कि योग्य पिता का पुत्र योग्य ही द। हो। इसी का परिणाम होता है, कि नये राजवशो का वैभव दो-चार पीढी , अधिक ऊपर की ओर नही उठता है। सिहासन के उत्तराधिकारी अधिक विलासी हो सैनिक और शासक के गुणो से अधिकतर विमुख होते जाते हैं। फिर ऐसे राजवशो के उत्तराधिकारियो का सिहासन पर बना रहना तभी हो सकता है, जब कि उनके शत्रुओ मे योग्यता की कमी हो।

तृतीय सवार—पार्थियो का उदाहरण इसकी पुष्टि करता है। यद्यपि उन्होंने कुशानो से थोडा ही कम समय तक शासन किया होगा किन्तु तो भी उन्हे हम शक्तिशाली कह सकते है।

ज्येष्ठ—पार्थिय कुशानो से पहले ही अपना राज्य स्थापित कर चुके थे। मैं समझता हू, उन्होने कुशानो से कम समय तक राज्य नही किया और बहुत समय तक तो दोनो प्रताप मे एक दूसरे के समकक्ष रहे। पार्थियो और कुशानो का कभी-कभी युद्ध भी होता था, किन्तु दोनो ही विशाल शकवश के नाते भाई-भाई थे, इसलिए उनमे बहुत कम आपसी छेडखानी होती रही।

तृतीय सवार—पार्थियो को पश्चिम मे रोमको का भी तो डर था। इस लिए वह नही चाहते थे, कि कुशानो से युद्ध करके शक्ति को निर्बल करें। मैं समझता हू, उनके उत्तराधिकारी सासानियो ने कुशानो को हटाकर अपना [illegible]

किया ।

ज्येष्ठ—बुरा किया । सासानियो के युद्ध से निर्बल होने के कारण ही कुशानो को केदारी हूणो ने धर दबाया । शायद सासानियो ने उस समय इसे नही समझा, लेकिन अब वह इसे अच्छी तरह सोच ही नही रहे है, बल्कि परिणाम भी भोग रहे हैं—एक शाहशाह उनके हाथो मारा जा चुका है । केदारियो की शक्ति सबल ही होती जा रही है, इसलिए क्या मालूम सासानियो पर क्या बीते ?

द्वितीय सवार ने अबकी मुह खोला—क्या बीतने की बात भविष्य के गर्भ मे है, किन्तु अभी तो हम केदारियो के पास बडी-बडी आशाए लेकर जा रहे है, और आशा है कि हम हताश होकर नही लौटेंगे ।

ज्येष्ठ—हताश होने की बात क्या है, जब हम खाकान के निमत्रण पर वहा जा रहे है ।

द्वितीय सवार—मैं एक बात पूछू ? मुझे यह नही समझ मे आता, कि आप कैसे केदारी खाकान के इतने अनुरक्त हो गए और कैसे उसने आप पर विश्वास किया ।

ज्येष्ठ—अनुरक्त होने की बात तो नही है, लेकिन मैं हेपतालो का विरोधी नही हू । विरोध तो तब करता, जब मुझे आशा होती कि कुशान-राजलक्ष्मी को मैं फिर मना लाऊगा । मुझे विश्वास है कि कुशान वश फिर अपने गौरव को लौटा नही सकता, वह केवल सामन्त बनकर ही कुछ समय और भोग भोग सकता है ।

तृतीय सवार—जैसे पुरान पार्थिय सोरन पह्लव अभी सासानियो के बडे सम्मानित सामन्त के तौर पर भोग रहे है । उनका पद ऊचा है, उनका सासानी वश से बराबर साला-बहनोई का सम्बन्ध रहता है ।

द्वितीय सवार—नया राजवश दूसरे राज्यवश के मुकुट और सिहासन को छीन लेता है, लेकिन उसके अवशेप को मिटाना नही चाहता ।

ज्येष्ठ—अवशेप को मिटाने की आवश्यकता नही है । अधिक हुआ तो पिछले वश मे के अन्तिम गद्दीधर की सतानो मे से कुछ को नष्ट कर दिया । अधिक शताब्दियो तक राज्य करनेवाले वश का खानदान भी दढ जाता है, फिर सबको नष्ट भी कैसे किया जाए । आखिर ये पदच्युत राजवश के लोग कृपा-पात्र बनाए जाने पर सबसे अधिक विश्वासपात्र भी होते हैं ।

द्वितीय सवार—वास्तविकता यही मालूम होती है, देश के धन और ऐश्वर्य को कुछ सीमित वशो ने आपस मे बाट लिया है। वह कभी-कभी अपने स्वार्थ के लिए आपस मे लडते है, किन्तु जब सबके स्वार्थ पर आक्रमण होता है, तो सब एक हो जाते हैं, इसलिए विजेता पुराने वशो को उजाडते नही, उन्हे सम्मान देते है। जो वश एक बार राज्य कर चुका है, उसका फिर से राज्यारोहण कहा देखा जाता है ?

ज्येष्ठ—आप जानते हैं कि केदारी राजा मुझसे कोई भय नही रख सकता। मेरा वह भगिनीपति है, लेकिन राजाओ मे भगिनीपति या दामाद होने के कारण झगडे बन्द नहीं हुआ करते, किन्तु हम तो बुझे हुए कुशान वश की राख है।

द्वितीय सवार—सामन्ती के स्थान पर आपको व्यापार क्यो पसन्द आया।

ज्येष्ठ—अर्थात् कुशान कुमार के लिए यह शोभा नही देता ? ठीक है, मैं एक सामन्त की तरह अपनी भूमि मे रह सकता हूँ, लेकिन मुझे घूमने का चस्का लगा है। आपको मालूम है, कि हमारा वश सदा बौद्धधर्मी रहा। राजकुमारो मे से कितने ही भिक्षु बनते रहे। उन्होने प्रचार के लिए दूर-दूर तक यात्राए की। मैं भी भिक्षु था। मेरे जन्म के समय कुशान वश का सितारा डूब चुका था। अगर न डूबा होता तो भी शाहनशाह का पुत्र होने पर भी मेरा नम्बर कइयो के बाद आता। मैंने पूरब मे चीन तक की यात्रा की है। आजकल चीन की दुनिया पर धाक नही है, जो पहले किसी समय थी, क्योंकि वह बहुत से राज्यो मे विभक्त हो गया है। तो भी चीन समृद्ध देश है, उसके रेशम को कौन नही जानता ? वहा की कारीगरी भी अद्वितीय है।

तृतीय सवार—क्या चीन का रास्ता इसी तरह का है ?

ज्येष्ठ—हा, ऐसी ही भूमि है। कभी-कभी तो बिल्कुल बालू की भूमि आ जाती है, लेकिन कही-कही जगल वाले पहाड भी मिलते हैं। आदमियो की कई जातिया भी देखने लायक होती हैं।

द्वितीय—आपको कौन सी जाति सबसे ज्यादा अच्छी लगी ?

ज्येष्ठ—अच्छी लगने का अर्थ यह नही समझें, कि मैं दूसरी जातियो को बुरा समझता हू। सभी जातियो मे गुण भी होते हैं, दोष भी, लेकिन मुझे तुखार (तुषार) सबसे अच्छे लगे।

तृतीय—तुखार क्या वक्षुतट की भूमि ?

ज्येष्ठ—नही, यह नाम तो हम कुशानो के यहा आने के कारण पडा। तुखार जाति पुरानी जाति है, हम कुशान भी मूलत तुखार थे।

तृतीय सवार—मूलत तुखार !

ज्येष्ठ—हा, तुखारो की एक नगरी का नाम आज भी कुशान (कुचान) है।

तृतीय सवार—तो कुशान उसी कुचान से आए थे ?

ज्येष्ठ—यह कहना इतना आसान नही है। हमारे पूर्वज कुचान से और भी एक महीने के रास्ते पर रहते थे, कुचानो की भी वही आदिभूमि थी। आज भी उस इलाके मे हमारे वशवाले कुछ मिलते हैं, यद्यपि उनमे कोई प्रभुता नही है और केवल भेड-बकरी के चरवाहो की तरह रहते हैं। किसी समय वही हम कुशो का हणो से युद्ध हुआ।

द्वितीय सवार—यह कितने समय की बात होगी ?

ज्येष्ठ—बहुत समय हो गया। शायद छ सात सौ बरस बीते होंगे। लेकिन वह हूण केदारी हूण नही थे। केदारी हूणो को हूण या श्वेत हूण जबर्दस्ती लोगो ने बना रखा है, वह यह नाम पसन्द नही करते। वस्तुत वे हूणो द्वारा शासित देश मे आए थे, इसीलिए लोगो ने उन्हे हूण कहना शुरू किया, नही तो वह हमारे समीपी के हैं।

तृतीय सवार—और तुखार ?

ज्येष्ठ—तुखार तुम्हारे दूर के सम्बन्धी हैं। हमारी पुरानी भाषा अब भी कुचान मे बोली जाती है। हम कुशानो ने इधर आके अपनी भाषा छोड के सोग्दी या हिन्दी भाषा अपना ली।

द्वितीय सवार—तो तुखारी भाषा मे बहुत अन्तर हो गया होगा ?

ज्येष्ठ—बहुत अन्तर है, लेकिन इसका यह अर्थ नही है कि उसका कोई शब्द नही मिलता। हिन्दी और अयरानी भाषा मे क्षीर (दुग्ध) कहते हैं, लेकिन तुखारी मे 'मरक" या "मलकवेर"। इसी तरह हिन्दी हाथी को ईरानी फील कहते है, लेकिन तुखारी मे "वलोन'।

द्वितीय सवार—जान पडता है, तुखारो के देश मे आप बहुत दिनो रहे है।

ज्येष्ठ—हा, और मुझे वह देश बहुत पसन्द आया। यह मालूम होने पर कि कुशानो के ही वह अपने वश के हैं और कुशानो की भाषा अब भी वहा सुरक्षित है, मेरा उनसे क्यो नही अधिक स्नेह होता ? किन्तु मैं यह अपनो के पक्षपात के कारण उनकी प्रशसा नही कर रहा हू। तुखारो का स्वभाव बडा मधुर है। जैसा ही उनको सुन्दर रूप मिला है, वैसा ही सुन्दर हृदय भी।

तृतीय सवार—तुखार बहुत सुन्दर होते हैं ? क्या मादो से भी अधिक ?

ज्येष्ठ—मैं कह सकता हू कि तुखारो की भूमि सौन्दर्य की खान है। इतने अधिक सुन्दर नर-नारी कही देखने मे नही मिलेंगे, लेकिन जो हमे सुन्दर मालूम होते हैं, जरूरी नही कि वह सारी दुनिया के लिए सुन्दर हो।

द्वितीय सवार—भला यह भी कोई बात है, जो सुन्दर है वह सारी दुनिया के लिए सुन्दर है।

ज्येष्ठ—नही, सौन्दर्य के लिए जातियो के अलग-अलग माप दण्ड होते हैं। कुचान के लोगो और मादो को देखकर उनके सौन्दर्य की हम प्रशसा करते नही थकते, लेकिन चीनियो को मैंने तुखारो के बारे मे कहते सुना है, लम्बे तगडे तो होते हैं, लेकिन उनके लाल-लाल केश और नीली-नीली आखे बिल्कुल बन्दर जैसी हैं, यह लम्बी नाक तो उनके सारे रूप को चौपट कर देती है।

द्वितीय सवार—तो हमे अपने सौन्दर्य की कसौटी को बदलना पडेगा ? लेकिन चीनियो के सौन्दर्य के ही सम्बन्ध मे। शायद आपके सुन्दर तुखारो के बारे मे हमारा मतभेद नही होगा। लेकिन आप तो उनको ऐसा बतला रहे हैं, मानो वह पृथ्वी पर स्वर्ग के देवता हो।

ज्येष्ठ—मैं कई वर्षो उनके भीतर रहा हू। पहले भिक्षु के तौर पर और फिर गृही बन के। मैं उनका अपना हो गया था। वस्तुत अब भी जब मैं उनके स्नेह को स्मरण करता हू, तो ख्याल आता है, मैं क्यो वहा से चला आया। उनमे आगन्तुक के प्रति बडा स्नेह होता है। उत्तर के हूणो और पूरब के चीनियो की टक्कर मे पिसते उनमे तुखारो का सम्बन्ध अच्छा नही है, अपनी स्वतन्त्रता के लिए तुखारो को उनसे कई बार लडना पडा है।

द्वितीय सवार—उनके पास क्या उतना जन-बल है, कि चीन की शक्ति से लड सकें, हूणो का मुकाबला कर सके ?

ज्येष्ठ—तुखारो के दैनिक जीवन को देखकर भी यह ख्याल नही होता।

आएगा, कि वे युद्ध क्षेत्र मे इतने वीर होते होगे। उनकी सख्या दरअसल अधिक नही है, और इसलिए सामर्थ्य से अधिक सेना आने पर वह कितनी ही बार अधीनता स्वीकार कर लेते हैं, लेकिन जैसे ही शत्रुओ की शक्ति निर्बल होते देखते हैं, वह फिर स्वतन्त्र हो जाते हैं।

द्वितीय—उनके दैनिक जीवन की बात कैसी है?

ज्येष्ठ—दैनिक जीवन मे तुखार बडे सुखजीवी है, वह कल की परवाह नही करते। खाना और खिलाना उनका व्यसन-सा है। दिन का तीसरा याम आया नही कि नृत्य और सगीत की तैयारी होने लगी। लाल, द्राक्षी मदिरा के कुतुप खुलने लगे। उनकी स्त्रिया बहुत स्वतत्र हैं, कह सकते हैं, कि वह अपने को पुरुष से कम नही समझती। सगीत और नृत्य मे तुखारो का लोहा चीन वाले भी मानते हैं। सचमुच आज यहा से सोचने पर मुझे जान पडता है, कि तुखारो के रूप मे आदमी नही बस और वसिनिया रहती हैं।

द्वितीय सवार—वह धर्म कौन सा मानते हैं?

ज्येष्ठ—केवल बौद्ध धर्म को। उनके देश मे कितने ही सुन्दर सघाराम बने हुए हैं, जिनमे मूर्तिया और चित्र इतने सुन्दर अकित हैं, कि देखकर आदमी चकित हो जाता है। शोभायात्रा के समय तो पूरा सप्ताह सब काम छोडकर नर-नारी तथागत की रथयात्रा मनाते, नृत्य तथा नाटक मे बिता देते हैं। विद्या मे भी वह आगे बढे है। उनमे बहुत से विद्वान् हुए हैं। वस्तुत चीन मे जो बुद्ध की वाणी का इतना प्रचार हुआ है, उसमे तुखारो का बहुत हाथ है।

—लेकिन तुखारो का जो रूप आप बतला रहे हैं, उसके कारण तो भिक्षु को चीवर-रक्षा करना असम्भव हो जाता होगा—कहते दूसरे सवार ने हस दिया।

ज्येष्ठ—तुम्हारा कहना ठीक है, और मैं इसका प्रमाण हू। लेकिन तब भी वहा काफी भिक्षु है। कैसे वह इन अप्सराओ से बचते रहे हैं, यह समझना मुश्किल है, लेकिन तुखारो के बारे मे हम कह सकते है, कि एक तरफ वह जीवन के साथ प्रेम करने, इस लोक के एक-एक क्षण का मूल्य चुका लेना चाहते है, किन्तु साथ ही तथागत के जैसे परलोकवादी धर्म पर भी उनकी अपार आस्था है। यह उनके उत्सवो को देखने से मालूम हो जाएगा। लेकिन मैं कहा से कहा चला गया।

द्वितीय सवार—मर्त्यलोक की बात छोड़कर देवलोक की तरफ चले गए। लेकिन, देवलोक कोई बुरी वस्तु नहीं है।

ज्येष्ठ—बुरी वस्तु क्यों है। मेरे लिए तो वह एक बहुत मधुर वस्तु है। मैंने अपने बन्धु-बान्धवों को देखने के लिए कूचा से वाह्लीक की ओर प्रयाण किया और फिर भगिनी तथा भगिनीपति के स्नेह के कारण रह जाना पड़ा। इस व्यापारिक जीवन को इसीलिए स्वीकार किया, कि मुझे कभी-कभी फिर कुचान जाने का मौका मिले।

तृतीय सवार—तो कुचान की कोई अप्सरा आपके घर में तो आयी होगी ?

ज्येष्ठ—यही तो कठिन है। कुचान की कन्याएं बाहर जाना नहीं चाहतीं। उनको अपने देश से बहुत प्रेम है और अभिमान भी है, इसीलिए दूसरे देशों को अवहेलना की दृष्टि से देखती हैं।

द्वितीय—क्या तथागत के देश भारत को भी ?

ज्येष्ठ—यह कहना मुश्किल है। आखिर तथागत में उनकी अपार भक्ति है, फिर देश के प्रति अवज्ञा कैसे दिखला सकती हैं। लेकिन मैं समझता हूं, वह भारत में भी जाके रहना पसन्द नहीं करेंगी।

तीनों सवार एक दूसरे की बात में तन्मय घोड़ों को अपनी चाल में चलने के लिए छोड़े हुए थे। इसी समय उत्तर की ओर से हवा तेज हुई, और उसकी सरसराहट और ककड़ियों के उड़ने से घोड़ों के कान खड़े हो गए। सवारों को अभी छुट्टी मिलनी सम्भव नहीं थी, इसीलिए बात को वहीं छोड़कर उन्होंने घोड़ों का जल्दी-जल्दी हांकना शुरू किया।

२०

आतिथ्य

सोग्दी सौदागर आज अबर्नशहर (खुरासान) के प्रमुख नगर नेशापोर में दाखिल हुए। नेशापोर शापोर प्रथम (२० मार्च २८२–७२ ई०) द्वारा निर्मित नगर था। यह चार प्रधान द्वारों का चौकोर नगर ऊंचे प्राकार से घिरा था।

उनकी सारी सडके सीधी एक छोर से दूसरे छोर तक एक दूसरे को समकोण पर काटती चली जाती थी। शाहशाह शापोर ने एक सुन्दर नगर का स्वप्न देखा था, जो यहा साकार रूप मे उतारा गया था। चीन और भारत के व्यापार-पथ पर होने से जहा यह नगर अपना खास महत्त्व रखता था, वहा कला कौशल मे भी उसका खास स्थान था। लेकिन इसे हेफ्तालो के आक्रमण का सदा भय बना रहता था।

नगर के भीतर प्रवेश करने मे कोई कठिनाई नही हुई। प्रधान व्यापारी पहिले ही से काफी परिचय रखता था, और व्यापार के सिलसिले मे आते-जाते रहने के कारण अपनी भेटो और बख्शीशो के द्वारा नेशापोर के अधिकारियो और साधारण कर्मचारियो मे उसका मान था। नेशापोर के व्यापारी जब हेफ्तालो की भूमि मे जाते, तो वह उनका उसी तरह से प्रति-सम्मान करता। सोलह चौरस्तो के इस विशाल नगर के निर्माण मे शापोर प्रथम ने सेलूकस के तस्पोन् निर्माण करने की तरह ही शाखर्ची दिखलाई थी। आज भी उसकी बनवाई नगरी की बाहरी भीतरी सजावट की चीज़ें वहा मौजूद थी। तस्पोन् बिखरा नगर था—वह तिग्रा के दोनो तटपर सात-सात जगहो मे बटा हुआ था, लेकिन नेशा-पोर एक मैदान के ऊपर कालीन की तरह बिछा हुआ था। यद्यपि अबहरशहर का कनारंग पास के तूस नगर-दुर्ग मे रहता था, लेकिन उससे नेशापोर की समृद्धि मे कोई क्षति नही हुई थी। सोग्दी व्यापारी भी कनारंग गज्नस्पदात से दो योजन दूर रहने पर सतुष्ट थे।

काफिला पीछे छूट गया था। तीनो सवार सीधे नगर के एक सामत के महल की ओर गए। सामत ने अपने चिर-परिचित सोग्दी व्यापारी और उसके साथियो का खुले दिल से स्वागत किया, तथा अपने प्रासाद के सबसे अच्छे प्रकोष्ठ मे उन्हे रहने को जगह दी। ज्येष्ठ व्यापारी ने अपने दोनो साथियो का परिचय मार्द के राजवणिक के तौर पर कराया, विशेषकर द्वितीय तरुण को मार्द के प्राचीन सामती वश का ज्येष्ठ कुमार बतलाया और यह भी कि वह व्यापार के लिए नही बल्कि सैर के लिए आए है। उनके थोडे विश्राम करने के बाद काफिला भी आया और सामत के घर के विशाल आगन मे सैकडो भारवाही पशु अपने भारो को गिराने लगे। नेशापोर बडा नगर है, आदमियो और जानवरो के खाने-पीने का वहा अच्छा प्रबन्ध था, इसलिए सरदार ने एक

सप्ताह यही रहने का निश्चय करके दो चाकरो को आगे खबर देने के लिए भेज दिया।

द्वितीय सवार या ज्येष्ठ सौदागर के कथनानुसार प्रतिष्ठित राजकुमार को सामत का घर बहुत पसन्द आया। सामत को बाहर जाना था, इसलिए उसने अपनी तरुणी कन्या नवानदुख्त को राजकुमार के आतिथ्य का प्रबन्ध करने के लिए नियुक्त कर दिया। राजकुमार और नवानदुख्त दोनो ही तरुण और सुन्दर थे, इसलिए तरुणी का आतिथ्य-सत्कार मे ध्यान केवल पिता की आज्ञा के कारण ही नही लग रहा था। राजकुमार शीतकाल के आरम्भिक सर्दी मे नवानदुख्त के आरक्त कपालो मे प्रतिफलित अपने मुख को देखकर अधिक समय उसके चुम्बन से अपने को वचित नही रख सका। प्रथम चुम्बन मे ही नवानदुख्त की लजीली आखो के नीची हो जाने और चेहरे की रक्तिमा के बढ जाने पर भी उसने देख लिया, कि कुमारी ने बुरा नही माना। नवानदुख्त सिर्फ नौकर नौकरानियो को भेजकर ही कुमार की सेवा का प्रबन्ध करने पर सतुष्ट नही थी, बल्कि वह स्वय भी उसके पास पहुच जाती थी। पहले दिन यद्यपि उसका आना जाना दो ही तीन बार हुआ था, किन्तु दूसरे दिन से किसी न किसी बहाने घडी घडी पर वह पहुचती रहती थी।

नवानदुख्त नगर के एक बडे सामत की चतुर कन्या थी। पिता के प्रशसा-भरे शब्दो से समझ गई थी, कि जिसको हृदय देने का उसका मन कर रहा है, वह उसका सर्वथा पात्र है। कुमार केवल रूप-यौवन-सम्पन्न ही नही थे, बल्कि वह एक वैभवशाली कुल के उत्तराधिकारी थे। दूसरे दिन जब कुमार ने नवान-दुख्त के हाथो को अपने हाथ मे ले लिया, तो उसने सिर और आखो को नीचा कर लिया। सध्या समय तक दोनो प्रणय-सूत्र मे बध चुके थे, जिसकी पुष्टि सायकाल मे दोनो ने एक चषक से उदुम्बरी मदिरा पान करके किया। तीसरे दिन तो नवानदुख्त को घर वालो से भी छिपकर आने-जाने की चिन्ता नही थी। माता बहुत कुछ जान चुकी थी और कोई आपत्ति न देख नवानदुख्त और भी नि शक कुमार के प्रकोष्ठ मे जाती और अपनी दासियो के आने-जाने की [illegible] आसन पर बैठी रहती थी। कुमार तरुणियो से अपरिचित नही था, किन्तु [illegible] पोर की यह भोली-सी लगनेवाली कन्या उसे बहुत पसन्द आई। अब वह [illegible] दोनो साथियो से भी न मिल अधिकतर अपने प्रकोष्ठ मे रहता था। उसकी [illegible]

थी तो यही, कि क्यो ज्येष्ठ सौदागर ने यहा एक मास की टिकान नही की।

कुमार का रहस्य वैसे ज्येष्ठ साथी से भी छिपा नही था, और तृतीय साथी तो उसका अभिन्न-हृदय था ही। उससे और अधिक समय नेशापोर मे रहने की व्यवस्था करने के लिए कहा, लेकिन ज्येष्ठ ने इसकी सलाह नही दी। शायद सीमात पर, जो यहा से दूर नही था, कितने ही लोग स्वागत करने के लिए आए हुए हो, शायद कनारग का खामखा पडोसी राज्य के सौदागरो के प्रति सदेह का भाव भी टिकान को और बढाने मे बाधक हुआ।

लेकिन इसमे सदेह नही, कि जिस तरह दिन नेशापोर मे बीत रहे थे, उससे वे सात दिन नही मालूम होते। सोने के वक्त कुमार दिन की सारी घटनाओ पर दृष्टि डालता, तो मालूम होता, कि वह सब एक दिन मे नही हो सकती। कुमार ने नवानदुख्त के साथ वार्तालाप मे कुछ ही घटे नही बिताए, उसके मधुर हास-विलासो का तन्मय हो जो आनन्द लिया, उसकी इतनी कम घडिया नही हो सकती। रात्रि को वह यही मनाता था, कि आगे के दिन भी लम्बे होते जाए।

नवानदुख्त अपने को कुमार पर न्योछावर कर चुकी थी, वह बिना किसी शर्त के सेविका बन चुकी थी, लेकिन वह नारी थी, नारी का बल और अधिकार ही कितना ? जिस वक्त उसने कुमार को अपना हृदय दिया था, उस समय नही सोचा था। कुमार के रूप और स्वभाव पर वह मुग्ध थी, और कुछ सोचने सम-झने की आवश्यकता क्या थी ? किन्तु जब चौथा दिन बीत चुका, तो उसे ख्याल आया, कुमार अब तीन ही दिन का मेहमान है। बीते चार दिन, इसमे सदेह नही, नवानदुख्त के जीवन के सबसे मधुर दिन थे। इन दिनो की एक एक घडी नही, एक-एक क्षण को उसने केवल आनन्द मे निमग्न होके बिताया था। इतना आनन्द-निमग्न कि नवानदुख्त को और किसी बात का पता नही रहा। लेकिन तीसरे दिन के बीतने के समय उसके हृदय मे पहिले-पहिल टीस लगी, जिससे उसका हृदय विचलित हो उठा। तो भी उसका मुह नही खुल रहा था, केवल उसके प्रसन्न वदन पर कोई मलीन छाया-सी पडी दीख पडती थी। कुमार ने उसकी मलीन-सी आखो और मुरझाए से चेहरे को देखकर भाप लिया। उसने नवानदुख्त को पास खीचकर उसके कधे पर बाए हाथ और दाहिने हाथ से अव-नत मुख को ऊपर करके एक गाढ चुम्बन लेते कहा—प्रिये ! आज तुम मुरझाई-सी मालूम होती हो।

नवानदुस्त की पलके और गिर गई, चेहरे पर छाया की दूसरी तह पड़ गई, किंतु उसने कोई उत्तर नही दिया। कुमार ने और धैर्य न रखकर प्रेयसी को अपने बाहुपाशो मे बाधकर कहा—प्रिये! तुमको ख्याल होता होगा, कि हमारे मिलन के समय के आधे से अधिक दिन बीत चुके हैं, दो दिन बाद हम एक-दूसरे से अलग हो जाएगे।

नवानदुस्त की आखो से आसुओ की धारा बह निकली, जिसकी कुछ बूदें कुमार के हाथ पर पडी। कुमार ने उद्विग्न मन होके कहा—प्रेयसी तुम रो रही हो! रोने का कारण नही है। मैं चार दिन के आगन्तुक की तरह तुमसे प्रेम नही कर रहा हू। मैंने तुम्हे अपना हृदय हल्के दिल से नही दिया। जीवित रहने पर मैं तुम्हारे बिना नही रह सकूगा। रोने का नही मुझे समझने का प्रयत्न करो।

नवानदुस्त कुमार से नि सकोच बात करती रहती थी, लेकिन आज जैसे उसका मुह खुलना नही चाहता था। शायद हृदय के भीतर भाव इतने अधिक थे, और एक ही साथ बाहर निकलना चाहते थे, जिसके लिए वाणी अपने को असमर्थ पाती थी। तो भी कुमार के उत्साहित करने पर नवानदुस्त ने कहा—रदेशी की प्रीति! हरेक नारी ने न जाने कितने गीत ऐसी प्रीति स गाथान हने के बारे मे सुने और गाए होगे।

कुमार—मेरी प्रीति का मूल्य इतना ही कर रही हो प्यारी! मैं परदेशी सी प्रीति तुमसे नही करना चाहता। यदि मेरी बात पर विश्वास कर सकती हो, तो यह समझो कि मैंने तुम्हे सदा के लिए प्यार किया है।

—लेकिन तीसरे दिन तो तुम चले जाओगे। फिर न जाने कौन तुम्हे मोह ले।

कुमार ने नवानदुस्त को गले से लगा उसके कपोलो को अपने [illegible] स्पर्श करते उसमे धैर्य और विश्वास भरते हुए—मैं कैसे अपने हृदय को [illegible] कर तुम्हारे सामने रखू—यह कहते कुमार का हसता चेहरा [illegible] उतर गया। उन्होने नवानदुस्त के नेत्रो को ऊपर की ओर उठाकर उसकी तरफ देखा।

नवानदुस्त को कुमार की स्वर्णिम पुतलियो और पास की [illegible] कुछ ऐसा सकेत अकित मिला, कि उसके अविश्वास का बाध टूटने लगा। वह सोचने लगी, कि मैंने अविश्वास प्रकट करके प्रियतम के प्रति अन्याय किया है। [illegible] क्षणिक प्रीति को नही प्रकट कर रहे है। उसने पहली बार अपने [illegible]

के सिर और कपोल पर फेरते हुए कहा—नही प्रियतम! मैं तुम पर अविश्वास नही करती। शायद अविश्वास और वियोग के भेद को मैं समझ नही पाई। आखिर मैं किशोरी हू, मेरी बुद्धि ही कितनी? लेकिन उस दिन का ख्याल करके न जाने क्यो हृदय को रोकना कठिन हो जाता है—कहते नवानदुख्त का गला रुद्ध हो गया।

कुमार ने फिर अपनी प्रेयसी को हृदय से लगाते हुए उसे अपने अतस्तल के समीप लाने की कोशिश की और अपने हाथ की अगूठी निकाल कर देते हुए कहा—यह लो प्यारी! किन्तु इसे मेरी बाहरी अगुली की मुद्रिका न समझना। इसके पद्मराग को मेरे हृदय का टुकडा समझना। मैं इसके द्वारा तुम्हे विश्वास दिलाना चाहता हू, यदि उसकी आवश्यकता है, कि जीवन रहते मैं तुम्हारे बिना नही रह सकूगा। तुम मेरे लिए प्राणो से प्यारी रहोगी।

नवानदुख्त के दिल मे अकस्मात् न जाने कौन भाव उत्पन्न हुआ कि उसके मुख से चिन्ता की छाया हटकर उसपर उसी तरह हर्षोल्लास छा गया, जिस तरह बादलो मे ढके सूर्य की किरणें जरासा छिद्र पाते ही प्रखर प्रकाश फैलाने लगती है। कुमार ने एकाएक इस परिवर्तन को देखकर प्रसन्न हो नवानदुख्त को फिर हृदय से लगाते हुए कहा—तो मेरी प्रियतमा ने मुझ पर विश्वास किया, और शायद कुछ समझकर ही उसका चेहरा एकाएक इस प्रकार खिल उठा। प्यारी! क्या उस रहस्य को जानने का मुझे भी अधिकारी समझती हो?

नवानदुख्त की आखो पर फिर लज्जा लौटने लगी, किन्तु कुमार के कई स्पर्शो ने उसे अपसारित करने मे सफलता पा ली। नवानदुख्त ने कहा—किशोरियो, अल्पवयस्काओ की मूर्खता कहिए।

—मूर्खता ही सही, किंतु मेरे लिए किशोरी की मूर्खता बडे आनन्द का कारण होगी। अपने रहस्य मे मुझे भी सम्मिलित करो, यदि मुझे उसका अधिकारी समझती हो।

नवानदुख्त को अब और अपने रहस्य को रहस्य रखने की हिम्मत नही हुई उसने कुमार के हाथ को अपने हाथो मे लेकर दबाते शक्ति प्राप्त करने की कोशिश करते हुए—बेवूझ की बात थी। सोच रही थी, यदि मज्दा ने हमारे इस प्रणय का कोई फल दिया—यह कहते-कहते रुक गई।

कुमार ने उसके ललाट और कपोलो पर कई चुम्बन देते कहा—फल!

मज्दा हमारे प्रणय के फल को प्रदान करे। कितनी आनन्द की बात होगी, यदि तुम्हारी बात सच्ची निकले। प्यारी! यदि वह पुत्र हुआ, तो मेरा सब कुछ उसका होगा, यदि पुत्री हुई तो वह मुझे सबसे प्रिय होगी।

नवानदुख्त ने कुमार के मुख से निकले शब्दों को जिस भावपूर्ण रूप मे सुना, उससे उसका अन्तस्तल एक अद्भुत आनन्द मे परिव्याप्त हो गया। वह कुमार की अपार अनुकम्पा और विश्वास के लिए कृतज्ञता प्रगट करने के लिए शब्द पाने की कोशिश कर रही थी, किन्तु उसे सफलता नही हो रही थी। अत मे हताश होकर उसने कुमार के वक्ष पर अपने सिर को रख दिया। कुमार देर तक उसके सुवर्ण-तन्तुओ से जालित तथा सुगन्धित सिर पर हाथ फेरते उसके कपोलो को हृदय मे लगाए नीरव बैठा रहा। दोनो के लिए वाणी की उपयोगिता समाप्त हो चुकी थी, वह अनुभव कर रहे थे कि प्रेम की सीमा वाणी की सीमा से बहुत परे तक है।

× × × ×

आठवे दिन अधेरा रहते ही सोग्दी व्यापारियो का काफिला रवाना हो चुका था, किन्तु तीनो व्यापारी अपने कुछ परिचारको के साथ दिन चढने के बाद रवाना होने वाले थे। सामन्त अपने अतिथियो के आतिथ्य का भार अपनी प्रवीणा कन्या के कन्धो पर रख किसी आवश्यक कार्य के लिए बाहर चला गया था। उसने अतिथियो को अपने व्यवहार से इतना सतुष्ट कर दिया था, कि प्रस्थान के दिन गृहपति के न रहने के कारण कोई भ्रम नही हुआ। नवानदुख्त के लिए आज का दिन सबसे दु सह दुर्भर दिन था। वह कुमार के प्रकोष्ठ मे सारी रात उनीदी उपधान को आसुओ से सीचती पडी रही। यद्यपि कुमार ने देखा कि वह नही चाहती है, कि कल की यात्रा मे कुमार बिना अच्छी तरह निद्रा लिए जाए। सवेरे कुमार के उठने से पहले ही परिचारिकाओ को प्रातराश की तैयारी और परिचारको को भेट सौगात बाधने मे लगा दिया। उसने कुमार के सामने बडा धैर्य रखने की कोशिश की, जिसमे बहुत हद तक सफल भी रही, किन्तु अत मे उसके पास इतनी शक्ति नही रह गई कि कुमार को विदा करने के लिए प्रासाद-द्वार पर आती। कुमार ने नवानदुख्त की मजबूरी को समझ लिया, और प्रयाण के चुम्बन और आलिगन का बार-बार देकर उसने बाहर प्रतीक्षा करते साथियो के पास पहुचने की जल्दी की।

सोग्दी अतिथि बाहर चले गए थे। शायद वह अबहरशहर नगरी से योजन-डेढ-योजन पर पहुच चुके थे, किन्तु नवानदुख्त अब भी अपने प्रेमी के प्रकोष्ठ मे उसी शय्या पर पडी उपधान मे मुह छिपाए रो रही थी। दोपहर हुआ किन्तु अब भी उसका रोना बन्द नही हो रहा था। सखिया और दासिया सब उपाय करके थक गई। सायकाल को मा बेटी के पास पहुची। उसके मुख को तकिये से उठाकर उसने अपने कपोलो से लगाया। मा के सान्त्वनापूर्ण वचनो ने नवानदुख्त को जितना ढारस दिया, उससे कही अधिक उसके हृदय की उन भावनाओ ने सहायता की, जिनको वह किसी के सामने रखना चाहती थी। मा ने बडे कोमल स्वर मे कहा—दुख्त ! तुमने अस्थान मे प्रीति नही की। अवश्य तुमने उस तरुण मे कोई विशेषता देखी होगी।

नवानदुख्त ने आसू पोछ के कुछ कहने के लिए आखो को खोला, वह अधिक चमक रही थी—हा मा ! तुम ठीक कह रही हो। मेरा प्रियतम मुझे दिल से प्यार करता है, वह मुझे भुला नही सकता—यह कहते नवानदुख्त ने कुमार की दी हुई अभिज्ञान-मुद्रिका को दिखला दिया।

मा के पूछने पर और बातें बतलाते हुए नवानदुख्त ने कहा, कि उसका प्रेमी पर के भीतर जिस पाजामे को पहने था, वह लाल जरबफ्त (सुवर्णपट) का था, मा ने यह सूचना घर आने पर पिता को दी, तो दोनो को निश्चय हो गया कि कुमार अवश्य कोई शाही राजकुमार है।

२१

सीमात

घोडो और खच्चरो के काफिले के साथ तीन सोग्दी सवार एक पहाडी दर्रे के भीतर से जा रहे थे। यहा भी वही नगे पहाड थे, किंतु वह कुछ अधिक नज़दीक थे। दोपहर के समय वह पहाड के ऊपर की ओर चढ रहे थे। तीनो सवार बिल्कुल मौन थे, शायद उन्हे मुह न खोले युगो बीत गए। अभी पहाड की घाटी और आगे थी। रास्ते मे मिट्टी के कच्चे घर दिखलाई पडे, जो एक ऊची प्राकार के भीतर थे। पास पहुचने से पहले ही एक नौकर सवार ने आकर कहा—

"सीमापाल मौजूद हैं, आज भीड नही है, इसलिए बहुत देर नही लगेगी।"
जैसे-जैसे तीनो सवार सीमापाल के स्कन्धावार के नजदीक पहुच रहे थे, उनके हृदय की धडकन बढती जा रही थी, जिसका प्रभाव उनके चेहरे पर भी मालूम हो रहा था। अन्त मे सारा काफिला स्कन्धावार के सामने पहुचा, सीमापाल ज्येष्ठ सोग्दी व्यापारी का सुपरिचित था। सोग्दी व्यापारी के आदमी से सूचना पा उसने दस्तरखान बिछवा उस पर कुछ फल, मदिरा की सुराही और चषक रख दिए थे। ज्येष्ठ व्यापारी से वह बडे सम्मान के साथ मिला। सोग्दी व्यापारी ने परिचय कराने के बाद उसने उसके दोनो साथियो का भी स्वागत किया। सोग्दी व्यापारी ने पूछने पर बतलाया कि हम जाते समय बाख्त्रिय और हिरात के रास्ते गए।

यद्यपि दस्तरखान पर बैठे चषक पर चषक भरते ज्येष्ठ व्यापारी बात करने मे इतना सलग्न था, कि मालूम होता था, आज वह वहा से चलने वाला नही है किन्तु उसके साथियो के लिए एक-एक क्षण एक-एक वर्ष जैसा बीत रहा था। सीमांतपाल के आदमी काफिले के पण्य पुटो को साधारण तौर से खोल देख रहे थे। स्वामी के इतने सम्माननीय परिचित व्यापारी की पण्य वस्तुओं को बारी-बारी से देखने की आवश्यकता क्या थी ? ऊपर से व्यापारी ने उनके लिए पारितोषिक पहिले ही प्रदान कर दिए थे।

आदमी ने आकर सूचना दी, कि सीमांत के निरीक्षण-परीक्षण का काम समाप्त हो गया। यद्यपि सीमांतपाल इतनी जल्दी छोडना नही चाहता था, किन्तु अपने आज के अतिथि के अत्यन्त आग्रह को टाल भी नही सकता था। [illegible] कुछ आगे चले जाने के बाद तीनो सवार टेढे-मेढे रास्ते से पहाड की ऊपर [illegible] चढे। चढाई अधिक नही थी। थोडी दर मे वह पहाड की पीठ पर पहुच गए। [illegible] की तरफ पहाडियो से भरा ईरान था, और उत्तर तरफ [illegible] अनन्त दूर तक फैली बालू की राशि दिखलाई पड रही थी, [illegible] जड से काफी दूर थी।

पीठ से उतरते ही हेफ्ताल सीमापाल ने आकर दोनो [illegible] भूमि के पास तक झुककर सबसे व्यापारी का अभिवादन किया और [illegible] को लिए वह नीचे की ओर चला। [illegible] पडा। वहा एक चश्मे के किनारे बहुत [illegible] लगे हुए थे। [illegible]

पहुचते ही हेफ़्ताल (वेदारी) सैनिक एक राजसी वेष-भूषा वाले तरुण सवार के नेतृत्व मे आगे बढे। नज़दीक पहुचते ही औरो के उतरने से पहिले राजकुमार घोडे से उतर गया। उधर मझला सवार भी घोडे से कूदा। दोनो एक दूसरे से मिलने के लिए उतावले से हो दौड पडे और कितनी देर तक वह परस्पर आलिगन करते रहे। मझले सवार ने पहले कहा—ओहो, युवराज मिहिरकुल, तुम कितने बडे हो गए।

मिहिरकुल ने अब भी अपने मित्र के हाथ को दृढतापूर्वक पकडे हुए कहा—आह, शाहशाह कवात्, आपसे इतने दिनो बाद मिल के कितनी प्रसन्नता हुई?

—शाहशाह नही हम दोनो वही बाल मित्र कवात् और मिहिर हैं। आज तुमसे मिलके सारी चिताए और मार्ग के सारे कष्ट दूर हो गए।

इस तरह निभृत वार्तालाप मे सलग्न दोनो तरुण एक लाल रग के मखमली शिविर के पास पहुचे। भटो ने झुक-झुकके कितनी ही जगह अभिवादन किया, किन्तु उनकी तरफ दोनो तरुणो का ध्यान नही था। शिविर के पास पहुचते ही कवात् ने मिहिरकुल से अपने साथी पल्लव-कुमार का परिचय करवाया। ज्येष्ठ सोग्दी व्यापारी तो पहिले ही अपने युवराज का बडे सम्मान के साथ अभिवादन कर चुका था। शिविर के द्वार पर एक असाधारण सुन्दरी षोडशी कुछ लज्जित और कुछ उत्सुक सी कभी दृष्टि को आगे डालती और कभी नीचे करती खडी थी। मिहिरकुल ने आगे बढकर उसके हाथ को पकड लिया और सकोच करते हुए भी उसे कवात् के पास ले आके कहा—"मित्र, यह है राजमहिषि फीरोज-दुख्त की कन्या," और फिर कुमारी की तरफ मुह करके कहा—"अपने मामा कवात् के साथ इतना सकोच क्यो?"

षोडशी के किसी निश्चय पर पहुचने के पहिले ही कवात् ने उसे अक मे ले उसके ललाट, भ्रू और केशो पर अनेक चुम्बन दे दिए। उसकी आखे कुछ गीली हो आई थी, जब कि राजकन्या ने उसकी तरफ अपनी आखें खोली। मिहिरकुल ने मित्र-वर्मा को पास के शिविर मे रखने का सकेत किया, फिर राजकन्या के साथ दोनो मित्र लाल तम्बू मे गए।

शिविर के भीतर आज के माननीय अतिथि के स्वागत का प्रबन्ध पहिले ही से हो चुका था। मिहिरकुल ने बताया कि परले पार पता न लग जाय, इसलिए केवल सौ सवारो के साथ हम चुपचाप यहा स्वागत के लिए आए। स्वागत का

पूरा प्रबन्ध सर्व मे किया गया है ।

कवात् इस सीधे-सादे किन्तु अत्यन्त स्नेह-पूर्ण स्वागत से बहुत संतुष्ट था। इतने समय तक उसे जिन कठिनाइयो का सामना करना पडा, भागने पर जिस तरह की मृत्यु की छाया मे लुका-छिपी करते उसे रहना पडा, अब यहा आते ही मालूम हुआ, जैसे हृदय से एक पर्वत-समान भार उतर गया। अपना बाल मित्र भारत, कपिशा, बाह्लिक, सुग्ध और खारेज्म के महाराजाधिराज तोरमान व युवराज मिहिरकुल से बहुत दिनो बाद भेंट हुई। उसके साथ उसकी अपनी सहोदरा की कन्या थी, जिसका अभी नाम भर तक उसने सुना था। दोनो मित्र दस साल के थे, जब एक दूसरे से अलग हुए थे, और आज सत्रह वर्ष बाद वह फिर मिल रहे थे। आयु मे बहुत अन्तर था, शायद पहिले से पता न होने पर वह एक दूसरे को पहिचान न पाते। अब उनके पास सत्रह वर्ष की बाते कहने को थी। वह भला क्या एक दो दिन मे समाप्त होने वाली थी ? चीन के रेशम और सोने से बुने कालीन पर बैठते उनके सामने चौकी पर रेशमी दुकूल बिछ गया और ईरान, भारत और सोग्द के बहुत से स्वादिष्ट फल चुन दिए गए। कई प्रकार के पकवान तथा मांस रख दिए गए। राजकन्या का संकोच बडी जल्दी-जल्दी दूर हो गया और उसने अपने मामा के सामने शाहदूखा ने स्वादिष्ट सुगन्धित भोजन को रख बहुमूल्य चषक मे लाल मदिरा डाली। कवात् दोनो के बीच मे बैठा सचमुच ही सब कुछ भूल गया। पिछले साल की घटनाए उसे दुःस्वप्न सी जान पडी, जिनका कि वह स्मरण भी नही करना चाहता था। जिस वक्त कवात् अपनी बहिन के बारे मे भाजी से पूछ रहा था, उसी समय उसे [illegible] और सियावख्श याद आए, चित्त कुछ उत्सुक हो उठा, किन्तु तुरन्त बात मे लगा के उसे भुलाना चाहा—दुख्त, कहो मेरी बहन कैसी है, मुझे याद करती है ?

शाहदुख्त ने और समीप पहुच के अपने हृदय के भावो को प्रगट करते हुए कहा—मा बहुत याद करती है। जिस दिन उसे खबर मिली कि भाई अनुशबर्द मे डाल दिया गया, कई दिनो तक उसने भोजन नही किया। पिता महाराज ने बहुत समझाया, किन्तु आसू बहाना छोड उसने कुछ नही माना। जब अनुश-बर्द से भागने की सूचना मिली, तब से उसे ढारस हुआ और वही उत्सुकता से अपने भाई के आने की प्रतीक्षा कर रही है। उसकी चले तो वह रोज [illegible] पता लगाने के लिए भेजे, लेकिन पिता महाराज ने उसे [illegible] था। [illegible]

नही कर दिया।

शाहदुरत (राजकन्या) के रक्त अधरो से यह मधुर शब्द जिस वक्त धीरे-धीरे निकल रहे थे, कवात् अपने चषक को एक हाथ मे लिए उसे भूल गया और बायें हाथ से अपनी भाजी के सुनहले बालो के ऊपर हाथ फेरता, कभी उसके कन्धे पर रखकर उसकी विशाल स्वर्णिम पुतलियो की ओर गम्भीरता से देखता। शाहदुरत के रक्त-अधरो की छाप उसके कपोलो पर पड रही थी, किन्तु अब उसे बिल्कुल सकोच नही रह गया था। मिहिरकुल को सबसे अधिक ध्यान इस बात का था, कि उसके अतिथि का चषक खाली न रहने पाए। यद्यपि वहा हाथ बाधे परिचारिकाए खडी थी, किन्तु वह स्वय ही सुराही से मदिरा ढालने मे तत्पर था। लाल तम्बू के बाहर जान पडता था, तीनो के लिए अब कोई दुनिया नही रह गई है। बल्कि कह सकते हैं तम्बू, उसमे बिछा कालीन उसके भीतर की दूसरी सुन्दर बहुमूल्य वस्तुए भी उनके लिए कोई अस्तित्व नही रखती थी। स्वादिष्ट भोजन वह कब तक करते रहे, चषक कितने चले, यह भी उन्हे याद न रहा। वह केवल अपने अतीत और परोक्ष की वस्तुओ के ही अनुस्मरण और वर्णन मे लगे हुए थे। कवात् के हाल के अनुस्मरण खेदजनक थे, इसलिए उनसे उनके बारे मे कोई जिज्ञासा नही की जा सकती थी। शाहदुरत ने अपनी मा अपने पिता और राजधानी की कितनी ही बातें बतलाई। मिहिरकुल ने अपनी यात्राओ को बडा रोचक वर्णन किया। यद्यपि वह एक दिन मे खतम होने वाली नही थी। रास्ते के बारे मे पूछने पर उसने कहा—यहा से हमारी राजधानी तक जैसा कठिन रास्ता है, वैसा हिन्द का रास्ता नही है। पहाडी रास्ते हैं और रास्ते मे ऐसे पहाड आते हैं, जिनके सामने यहा के पहाड बच्चे मालूम होते है। जब दूसरी जगह हिम का नाम नही रहता तब भी वहा हिम दिखलाई पडता है। किन्तु वह भयकर रेगिस्तान वहा नही है। वक्षु नदी, वाह्लीक देश, फिर गन्धमादन (हिन्दूकुश) की विशाल पर्वत श्रेणी पार करके कपिशा की द्राक्षावलय-भूमि आती है, फिर सिधुनद तक पहुचने मे कितनी ही छोटी-मोटी पर्वत श्रेणिया है।

कवात्—हिन्दु (सिधु) महानद वक्षु से भी बडा है क्या ?

मिहिरकुल—वक्षु उसके सामने क्या है ? उसकी गम्भीर अतल चलायमान जलराशि को पार करके तक्षशिला नगरी आती है, जहा हमारा क्षत्रप

रहता है। कुषाण-राजा ने यहा पर बहुत डटकर हेपताल सेनाग्रो का मुकाबला किया था। हमारे लोग बडी सख्या मे मारे गए थे, इसलिए दादा महाराज की ग्राज्ञा से सारे नगर को जलाकर भस्म कर दिया गया। पास मे नवीन नगरी बसी है, लेकिन वह पहिले जैसी सुन्दर ग्रौर समृद्ध कहा हो सकती है? निवासी बहुत कम हैं। फिर पाच नदियो को पार करके मध्य-देश ग्रौर यमना के तट पर पहुचते हैं। इसी के तट पर शको की एक राजधानी मथुरा बसी हुई है। हमारे युद्ध मे इस नगरी को भी बहुत क्षति पहुची।

कवात्—जान पडता है, हेपताल विजेताग्रो ने सैनिक कार्य के महत्त्व की ओर ही अधिक ध्यान दिया ग्रौर जनरजन की ग्रोर कोई ध्यान नही किया।

मिहिरकुल—हा, यह बात ठीक है, इसीलिए हमारे वश से लोग केवल भय खाते हैं प्रेम नही करते। मैं समझता हू, विजय ग्रौर प्रजारजन दोनो की क्षमता होनी चाहिए। पिता महाराज का ध्यान इधर अवश्य हुग्रा है, लेकिन पडने लगे दाग का मिटाना ग्रासान नही है। फिर हिन्दु-देश म योद्धाग्रो की कमी नही है। ग्राश्चर्य यह है, कि इतनी विद्या, रणकौशल ग्रौर वीरता के रहते भी क्यो उस देश पर कुषाण चार सदियो तक शासन करते रहे? क्या हम लोग सोग्द ग्रौर वक्षु के तट से जाकर वहा अपना राजध्वज गाडने म सफल हुए?

कवात्—तो क्या ऐसा हुग्रा?

मिहिरकुल—वीर होने पर भी ग्रापसी वैमनस्य हिन्दुग्रो मे बहुत है। वह ग्रापसी शत्रुता म विदेशियो को अपना मित्र बना लेते है, लेकिन फिर उनका भाग जाता है, तब किसी विदेशी का वहा ठहरना मुश्किल हो जाता है। कुषाण अप-वाद थे। उनमे एक गुण था, वह अपनी प्रजा के भावो का बहुत ख्याल रखते थे। हिन्दु-देश मे जाकर वह हिन्दी बन गए। मैं अपने राज्य की सीमा से बाहर गुप्तो के नगरों मे भी गया हू। जब सन्धि हो जाती है, तो [illegible] शत्रु राजकुमारो का भी स्वागत होने लगता है। गुप्तो ने अपने नगरो ग्रौर प्रासादो [illegible] रूप मे बसाने तथा अपने विशाल देवालयो [illegible] अद्भुत [illegible] परिणत करने मे अद्वितीय सफलता पाई है। लेकिन इस बात म कुषाण [illegible] नही थे। मैंने उनकी राजधानी मथुरा को देखा है [illegible] पुरुषपुर (पेशा-वर) के सघारामो मे भी मैं गया। गुप्तो न [illegible] ब्राह्मण ग्रौर बौद्ध भिक्षु दोनो ही कुषाणो की प्रशसा [illegible]

[illegible]

पितामह महाराज केवल सैनिक थे, उन्होने इन बातो की ओर ध्यान नही दिया, जिससे तेदारी वंश की बडी क्षति हुई। युद्ध के समय तो पिता महाराज ने भी हिन्दू शत्रुओ के साथ कोई दया नही दिखलाई, किन्तु अब वह कुषाणो की दूरदर्शिता समझते है। हमारे वंश ने हजारो बौद्ध संघारामो को बडी क्रूरता के साथ नष्ट किया, इसके कारण बौद्ध हमसे बहुत घृणा करते हैं। उनको हम कभी अपनी तरफ कर सकेंगे, इसमे सदेह है, किन्तु ब्राह्मणो को हमने अपनी ओर मिलाने मे बहुत सफलता पाई है। मिथ् (मिहिर, सूर्य्य) हमारी जाति और ईरानियो के भी प्रतापी देवता है। हिन्दू भी सूर्य्य की पूजा करते हैं। पिता श्री ने गोपगिरि (ग्वालियर) पर्वत पर सूर्य्य का एक बहुत ही सुन्दर मन्दिर बनवाया है, जिसमे गुप्तो और कुषाणो की भाति पाषाण-शिल्प और सुन्दर वास्तु-शिल्प तथा सुन्दर मूर्ति-कला का प्रयोग हुआ है। पिता श्री मानते हैं कि राजा को प्रजारजन का सदा ख्याल रखना चाहिए।

यद्यपि कवात् अब अयरान की सीमा से बाहर था और हेफ्तालो की धाक इतनी अधिक थी, कि कनारग गज्नस्पदात पता लगने पर भी उनकी सीमा के भीतर घुसने की हिम्मत न करता, किन्तु तो भी यही अच्छा समझा गया, कि जितनी जल्दी हो उतनी सीमान्त से दूर निकल जाए। चश्मा आगे एक छोटी-सी नदी बन गया था। सन्ध्या होने से पहिले युवराज मिहिरकुल और कवात् अपने साथियो के साथ उसी के किनारे-किनारे चलते रहे। उस दिन वह मरुभूमि के किनारे पहुचने से पहिले ही ठहर गए। दूसरे दिन सारा दिन वही बिताकर उन्होने शाम के समय मरुभूमि मे पैर रखा। चारो ओर बालुका ही बालुका थी, जिसमे कही कही छोटे-छोटे टीलो जैसे बालू के ढेर थे। यहा रास्ता पहिचानना आसान काम नही था, लेकिन मरुभूमि के पथप्रदर्शक वहा के रास्तो को अपनी हाथ की रेखा की तरह जानते थे। चादनी रात थी। इस मरुभूमि पर वर्षा के बादल कभी ही कभी दिखाई पडते हैं, इसलिए तारो को देखते पथप्रदर्शक आगे ले चला। मरुभूमि मे कही-कही दूर से ईंटो को लाकर मीनार खडे किए गए थे। मीनार के साथ घर बने हुए थे, जिनमे सैनिक रहते थे। यह मीनार एक ओर मार्ग का निर्देश करते थे, दूसरी ओर सीमान्त की सूचना को शीघ्र राजधानी मे पहुचाने का काम करते थे।

रात सारी यात्रा मे बीत गई। कवात् के लिए वैसे होता, तो यह आराम

की बात नही थी, किन्तु हाल के जीवन ने उसे सभी तरह की कठिनाइयो का अभ्यस्त बना दिया था। अगले दिन वह रेगिस्तान पार न हो सके। तीसरे दिन मुर्गाब (नदी) मिली। इस जीवन-शून्य भूमि मे यह सरिता क्यो अपने अनमोल जल-बिन्दुओ को नष्ट कर रही है? इसका उत्तर उन्हे तुरन्त मिल गया, जब उन्होने इसकी कुल्याओ के किनारे सुन्दर और विशाल उद्यान तथा दूर तक फैले खेत देखे। आजकल खेत खाली थे और उद्यानो के वृक्षो के पत्ते सभी पीले पड़कर गिर चुके थे, तो भी उनको देखने से मालूम होता था, कि मरुभूमि के बीच मे यह हरित भूमि इसी पुण्यसरिता की कृपा का फल है।

सध्या को मर्व नगरी मे पहुचे। एक बालुका-भूमि को वह पार कर आए थे, आगे उससे भी बडी बालुका-राशि उनके रास्ते मे आनेवाली थी, दोनो को देखने से यह अनुमान नही होता था, कि मरुस्थल के भीतर इतनी विशाल नगरी हो सकती है। यह विशाल नगरी हेफ्ताल-राज्य की प्रथम नगरी थी, जिसमे ईरानी शाहशाह के स्वागत का विशाल आयोजन किया गया था। युवराज और शाहशाह के नगरी के सामने पहुचते ही एक विशाल हेफ्ताल-सेना उनके स्वागत के लिए आई, जिसमे आगे-आगे रथ, फिर पर्वताकार हाथी और तब सवार तथा अनगिनत पैदल भट थे। सारा नगर शाहशाह के दर्शन के लिए प्राकार से बाहर चला आया था। उनके चेहरे-मोहरे जैसे थे, उनको देखकर कौन कह सकता था, कि पचास वर्ष बाद ही उनमे ऐसा परिवर्तन होने लगेगा, कि आगे चलकर यह जानना भी मुश्किल हो जाएगा, कि यहा भूरे केश-दाढी, नुकीली नाक [illegible] रहा करते थे, जिनकी भाषा सोग्दी थी। तरह-तरह के वाद्यो के साथ [illegible] नगरी ने ईरानी शाह का स्वागत किया। सब की सडकें [illegible] की गई थी, जिसमे धूल न उडे। नगर के भीतर से होते शाह और युवराज [illegible] (दुर्ग) मे गए। यहा वहिन रानी की भेजी भारतीय और [illegible] तथा राजा तोरमान के भेजे कितने ही दास और [illegible] आए हुए थे। [illegible] फाटक के भीतर विशाल आगन पार हो वह आस्थानशाला [illegible] में गए।

अब सारा मर्व जानता था, कि ईरान का शाहशाह [illegible] नगरी मे पहुचा है। दस दिन बाद सारा अपरान्त भी [illegible] जाएगा, [illegible] अपरान्त के बडे भयकर शत्रु के पास पहुच गया है। [illegible]

रग तथा तस्पोन् के शासको की नीद को हराम कर देगी।

२२

दो राजाओ का मिलन

मर्व महानगर था। जनसख्या मे हूण राजधानी से कही बडा था। यहा का राज-प्रासाद राजधानी के राज-प्रासाद से कम विशाल और सज्जित नही था। एक सप्ताह वहा रहने के बाद कवात् का चेहरा खिल उठा। दो बरसो तक उसका मानसिक तनाव जो एक मारक व्याधि की भाति पीछे लगा हुआ था, अब वह हट चुका था।

सातवें दिन वह मर्व के पूर्वी द्वार से निकले। दोपहर तक जाने के बाद उन्हे फिर विशाल मरुभूमि से वास्ता पडा, यह जाडे का आरम्भ था, नही तो इस मरुभूमि मे रात छोडकर दूसरे समय चलना दुष्कर था। गर्मियो मे आधी और तेज हवा बराबर उठा करती, उस वक्त दिन मे प्राय चलना नही हो सकता था। बालुका-समुद्र मे तीन दिन बिताकर वह वक्षु के तट पर पहुचे। मरुभूमि मे भी जगह-जगह राजकीय विश्रामागार बने थे, जिनके कारण उन्हे बहुत कम कष्ट हुआ।

कवात् गुमनाम सोग्दी व्यापारी या तीर्थ-यात्री के रूप मे नही जा रहा था। सभी जानते थे, कि वह ईरान का शाह है। षडयन्त्र द्वारा उसे तख्त से उतार दिया गया है, किन्तु फिर भी वह तख्त पर बैठ सकता है, विशेषकर जब कि बेदारी राजा तोरमान उसका भगिनीपति तथा सहायक है। रास्ते मे हर तरह से उसके आराम के लिए वैसा ही ध्यान रखा गया था, जैसा राजा तोरमान के लिए रखा जाता था। कवात् के चढने के लिए वाह्लिक का सुन्दर सफेद घोडा खास तौर से भेजा गया था। कवात् ने अधिक तडक-भडक वाली पोशाक से इनकार कर दिया था, यद्यपि हूणराज का उसके लिए आग्रह था।

मित्रवर्मा ने एक ही दो दिन तक मर्व नगर के बारे मे अपनी गवेषणा जारी रखी। मर्व किसी समय पार्थियो—पह्लवो—की द्वितीय राजधानी रह चुका था। मित्रवर्मा के पूर्वज पह्लव से पल्लव बने थे, इसलिए वह मर्व के बारे मे विशेष जानकारी पाने की कोशिश कर रहा था। दो तीन-दिन तक कवात्

की बात नही थी, किन्तु हाल के जीवन ने उसे सभी तरह की कठिनाइयो का अभ्यस्त बना दिया था। अगले दिन वह रेगिस्तान पार न हो सके। तीसरे दिन मुर्गाब (नदी) मिली। इस जीवन-शून्य भूमि मे यह सरिता क्यो अपने अनमोल जल-बिन्दुओ को नष्ट कर रही है? इसका उत्तर उन्हे तुरन्त मिल गया, जब उन्होने इसकी कुल्याओ के किनारे सुन्दर और विशाल उद्यान तथा दूर तक फैले खेत देखे। आजकल खेत खाली थे और उद्यानो के वृक्षो के पत्ते सभी पीले पडकर गिर चुके थे, तो भी उनको देखने से मालूम होता था, कि मरुभूमि के बीच मे यह हरित भूमि इसी पुण्यसरिता की कृपा का फल है।

सध्या को मर्व नगरी मे पहुचे। एक बालुका-भूमि को वह पार कर आए थे, आगे उससे भी बडी बालुका-राशि उनके रास्ते मे आनेवाली थी, दोनो को देखने से यह अनुमान नही होता था, कि मरुस्थल के भीतर इतनी विशाल नगरी हो सकती है। यह विशाल नगरी हेफ्ताल-राज्य की प्रथम नगरी थी, जिसमे ईरानी शाहशाह के स्वागत का विशाल आयोजन किया गया था। युवराज और शाहशाह के नगरी के सामने पहुचते ही एक विशाल हेफ्ताल-सेना उनके स्वागत के लिए आई, जिसमे आगे-आगे रथ, फिर पर्वताकार हाथी और तब सवार तथा अनगिनत पैदल भट थे। सारा नगर शाहशाह के दर्शन के लिए प्राकार से बाहर चला आया था। उनके चेहरे-मोहरे जैसे थे, उनको देखकर कौन कह सकता था, कि पचास वर्ष बाद ही उनमे ऐसा परिवर्तन होने लगेगा, कि आगे चलकर यह जानना भी मुश्किल हो जाएगा, कि यहा भूरे केश-दाढी, नुकीली नाक के नर-नारी रहा करते थे, जिनकी भाषा सोग्दी थी। तरह-तरह के वाद्यो के साथ सारी मर्व नगरी ने ईरानी शाह का स्वागत किया। मर्व की सडकें सुगधित जल से सिंचित की गई थी, जिससे धूल न उडे। नगर के भीतर से होते शाह और युवराज आरग (दुर्ग) मे गए। यहा वहिन रानी की भेजी भारतीय और हूण दो परिचारिकाए तथा राजा तोरमान के भेजे कितने ही दास और कमकर आए हुए थे। आरग के फाटक के भीतर विशाल आगन पार हो वह आस्थानशाला होते विश्राम-कक्ष मे गए।

अब सारा मर्व जानता था, कि ईरान का शाहशाह कवात् भागकर मर्व नगरी मे पहुचा है। दस दिन बाद सारा अयरान भी इसे जान जाएगा, कि कवात अयरान के बडे भयकर शत्रु के पास पहुच गया है। यह खबर निश्चय ही मना-

रग तथा तस्पोन् के शासको की नीद को हराम कर देगी ।

२२

दो राजाओ का मिलन

मर्व महानगर था । जनसंख्या मे हूण राजधानी से कही बडा था। यहा का राज-प्रासाद राजधानी के राज-प्रासाद से कम विशाल और सज्जित नही था । एक सप्ताह वहा रहने के बाद कवात् का चेहरा खिल उठा । दो बरसो तक उसका मानसिक तनाव जो एक मारक व्याधि की भाति पीछे लगा हुआ था, अब वह हट चुका था ।

सातवें दिन वह मर्व के पूर्वी द्वार से निकले । दोपहर तक जाने के बाद उन्हे फिर विशाल मरुभूमि से वास्ता पडा, यह जाडे का आरम्भ था, नही तो इस मरुभूमि मे रात छोडकर दूसरे समय चलना दुष्कर था। गर्मियो मे आधी और तेज हवा बराबर उठा करती, उस वक्त दिन मे प्राय चलना नही हो सकता था । वालुका-समुद्र मे तीन दिन बिताकर वह वक्षु के तट पर पहुचे । मरुभूमि मे भी जगह-जगह राजकीय विश्रामागार बने थे, जिनके कारण उन्हें बहुत कम कष्ट हुआ ।

कवात् गुमनाम सोग्दी व्यापारी या तीर्थ-यात्री के रूप मे नही जा रहा था। सभी जानते थे, कि वह ईरान का शाह है। षडयन्त्र द्वारा उसे तख्त से उतार दिया गया है, किन्तु फिर भी वह तख्त पर बैठ सकता है, विशेषकर जब कि केदारी राजा तोरमान उसका भगिनीपति तथा सहायक है । रास्ते मे हर तरह से उसके आराम के लिए वैसा ही ध्यान रखा गया था, जैसा राजा तोरमान के लिए रखा जाता था । कवात् के चढने के लिए वाह्लिक का सुन्दर सफेद घोडा खास तौर से भेजा गया था । कवात् ने अधिक तडक-भडक वाली पोशाक से इनकार कर दिया था, यद्यपि हूणराज का उसके लिए आग्रह था ।

मित्रवर्मा ने एक ही दो दिन तक मर्व नगर के बारे मे अपनी गवेषणा जारी रखी । मर्व किसी समय पार्थियो—पह्लवो—की द्वितीय राजधानी रह चुका था । मित्रवर्मा के पूर्वज पह्लव से पल्लव बने थे, इसलिए वह मर्व के बारे मे विशेष जानकारी पाने की कोशिश कर रहा था। दो तीन-दिन तक कवात्

की बात नही थी, किन्तु हाल के जीवन ने उसे सभी तरह की कठिनाइयों का अभ्यस्त बना दिया था। अगले दिन वह रेगिस्तान पार न हो सके। तीसरे दिन मुर्गाब (नदी) मिली। इस जीवन-शून्य भूमि मे यह सरिता क्यो अपने अनमोल जल-बिन्दुओ को नष्ट कर रही है? इसका उत्तर उन्हे तुरन्त मिल गया, जब उन्होने इसकी कुल्याओ के किनारे सुन्दर और विशाल उद्यान तथा दूर तक फैले खेत देखे। आजकल खेत खाली थे और उद्यानो के वृक्षो के पत्ते सभी पीले पडकर गिर चुके थे, तो भी उनको देखने से मालूम होता था, कि मरुभूमि के बीच मे यह हरित भूमि इसी पुण्यसरिता की कृपा का फल है।

सध्या को मर्व नगरी मे पहुचे। एक बालुका-भूमि को वह पार कर आए थे, आगे उससे भी बडी बालुका-राशि उनके रास्ते मे आनेवाली थी, दोनो को देखने से यह अनुमान नही होता था, कि मरुस्थल के भीतर इतनी विशाल नगरी हो सकती है। यह विशाल नगरी हेफ्ताल-राज्य की प्रथम नगरी थी, जिसमे ईरानी शाहशाह के स्वागत का विशाल आयोजन किया गया था। युवराज और शाहशाह के नगरी के सामने पहुचते ही एक विशाल हेफ्ताल-सेना उनके स्वागत के लिए आई, जिसमे आगे-आगे रथ, फिर पर्वताकार हाथी और तब सवार तथा अनगिनत पैदल भट थे। सारा नगर शाहशाह के दर्शन के लिए प्राकार से बाहर चला आया था। उनके चेहरे-मोहरे जैसे थे, उनको देखकर कौन कह सकता था, कि पचास वर्ष बाद ही उनमे ऐसा परिवर्तन होने लगेगा, कि आगे चलकर यह जानना भी मुश्किल हो जाएगा, कि यहा भूरे केश-दाढो, नुकीली नाक के नर-नारी रहा करते थे, जिनकी भाषा सोग्दी थी। तरह-तरह के वाद्यो के साथ सारी मर्व नगरी ने ईरानी शाह का स्वागत किया। मर्व की सडकें सुगधित जल से सिंचित की गई थी, जिससे धूल न उडे। नगर के भीतर से होते शाह और युवराज आरग (दुर्ग) मे गए। यहा बहिन रानी की भेजी भारतीय और हूण दो परिचारिकाए तथा राजा तोरमान के भेजे कितने ही दास और कमकर आए हुए थे। आरग के फाटक के भीतर विशाल आगन पार हो वह आस्थानशाला होते विश्राम-कक्ष मे गए।

अब सारा मर्व जानता था, कि ईरान का शाहशाह कवात् भागकर मर्व नगरी मे पहुचा है। दस दिन बाद सारा अयरान भी इसे जान जाएगा, कि कवात अयरान के बडे भयकर शत्रु के पास पहुच गया है। यह खबर निश्चय ही सना-

रंग तथा तम्पोन् के शासकों की नींद [illegible] हराम [illegible] ।

२२

दो राजाओं का मिलन

मर्व महानगर था। जनसंख्या में हूण राजधानी [illegible] था। [illegible] प्रासाद राजधानी के राज-प्रासाद से कम [illegible] था। [illegible] सप्ताह वहां रहने के बाद कवात् का चेहरा खिल उठा। [illegible] मानसिक तनाव जो एक मारक व्याधि की भांति पीछे लगा हुआ था, [illegible] हट चुका था।

सातवें दिन वह मर्व के पूर्वी द्वार से निकले। दोपहर तक [illegible] उन्हें फिर विशाल मरुभूमि में वास्ता पड़ा, यह जाड़े का प्रारम्भ था, [illegible] मरुभूमि में रात छोड़कर दूसरे समय चलना दुष्कर था। गर्मियों में आंधी और तेज हवा बराबर उठा करती, उस वक्त दिन में प्रायः चलना नहीं हो सकता था। वालुका-समुद्र में तीन दिन बिताकर वह वक्षु के तट पर पहुंचे। मरुभूमि में भी जगह-जगह राजकीय विश्रामागार बने थे, जिनके कारण उन्हें बहुत कम कष्ट हुआ।

कवात् गुमनाम सोग्दी व्यापारी या तीर्थ-यात्री के रूप में नहीं जा रहा था। सभी जानते थे, कि वह ईरान का शाह है। षडयन्त्र द्वारा उसे तख्त से उतार दिया गया है, किन्तु फिर भी वह तख्त पर बैठ सकता है, विशेषकर जब कि बेदारी राजा तोरमान उसका भगिनीपति तथा सहायक है। रास्ते में हर तरह से उसके आराम के लिए वैसा ही ध्यान रखा गया था, जैसा राजा तोरमान के लिए रखा जाता था। कवात् के चढ़ने के लिए वाह्लिक का सुन्दर सफेद घोड़ा खास तौर से भेजा गया था। कवात् ने अधिक तड़क-भड़क वाली पोशाक से इनकार कर दिया था, यद्यपि हूणराज का उसके लिए आग्रह था।

मित्रवर्मा ने एक ही दो दिन तक मर्व नगर के बारे में अपनी गवेषणा जारी रखी। मर्व किसी समय पार्थियों—पह्लवों—की द्वितीय राजधानी रह चुका था। मित्रवर्मा के पूर्वज पह्लव से पल्लव बने थे, इसलिए वह मर्व के बारे में विशेष जानकारी पाने की कोशिश कर रहा था। दो तीन-दिन तक कवात्

का अधिकतर उठना-बैठना युवराज मिहिरकुल के साथ था, और उससे भी अधिक समय वह हूणराज-प्रेषित सुन्दरियो के साथ बिताता था, लेकिन दो ही तीन दिन बाद उसे फिर मित्रवर्मा का अधिक वियोग अखरने लगा। यात्रा मे कवात् की अगल-बगल मे मिहिरकुल और मित्रवर्मा रहते और कभी हूणराज-दुहिता अपने घोडे पर चढी उनके साथ होती।

उनके पास बात करने के लिए बहुत-सी चीजे थी, यात्रा मे न गरमी की परेशानी थी न आधी का डर। सुनसान मरुभूमि मे जहा तहा टीलो पर उगी घासे या फरास के बौने वृक्ष हरियाली के लिए तरसती आखो को तृप्त कर रहे थे। कवात् ने मरुभूमि की ओर देखते मित्रवर्मा मे कहा—मित्र, तुम्हारे देश मे भी ऐसी मरुभूमि है ?

मित्रवर्मा—हमारे यहा सभी तरह की जलवायु वाले स्थान तथा सभी तरह की भूमि है। भारत के उत्तरी मीमात पर दूर तक हिमालय चला गया है, जिसके सौन्दर्य के सामने कोहकाफ और दमावत तुच्छ है। ऐसे भी स्थान है, जहा चार-चार हाथ बर्फ पड जाती है, तथा जहा साल मे कभी गर्मी नही होती। दूसरी तरफ मेरी जन्म-नगरी काञ्ची और उसके आस-पास का प्रदेश है, जहा के लोग जानते नही, कि जाडा किसको कहते है।

कवात्—बहुत दक्षिण होगा वह स्थान, हमने भी सुना है, कि दक्षिण जाने पर सर्दी खतम हो जाती है।

मित्र—हा, वह हिन्दु-देश के सबमे दक्षिण वाले भाग मे अवस्थित है।

मिहिरकुल ने बात मे सम्मिलित होते हुए कहा—मैं अवन्तिपुरी (उज्जैन) से और दक्षिण नही गया। गया भी तो जाडो मे, लेकिन सुना था, कि आगे गर्मियो मे भयकर गर्मी होती है।

मित्र—हमारे यहा गर्मी होती है, लेकिन वर्षा के कारण वह उतना उग्र रूप धारण नही करने पाती, जितना कि गुप्तो के राज्य मे।

मिहिरकुल—हमारे भारतीय राज्य मे भी यही बात बताई जाती है। पिता श्री और पितामह एव मैं भी कभी गर्मियो मे वहा नही रहे। मुझे मालूम है, हमारे कितने ही मत्री और उच्च-अधिकारी गर्मियो मे वहा रहने के कारण मृत्यु को प्राप्त हुए।

कवात—मैं मरुभूमि के बारे मे पूछ रहा था।

मित्र—हा, हिन्द के पश्चिमी भाग मे मरुस्थान नाम का एक विशाल प्रदेश है। मैं तो उसके छोर तक ही पहुचा, बहुत भीतर नही गया, लेकिन वहा की भूमि भी इसी तरह की है।

कवान्—तो वहा भी चर्म-भस्त्र (मशक) मे जल भरकर ले जाना पड़ता होगा।

मित्र—हा, पानी वहा के लिए सबसे दुर्लभ चीज है। मरुस्थान बहुत भयानक समझा जाता है। लोगो मे इसके बारे मे बहुत-सी कहानिया प्रचलित है। कहते है, वहा बडे-बडे राक्षस रहते है, जो काफिले के काफिले को ऊट पशुओ सहित खा जाते है, जिनकी सफेद हड्डिया जहा-तहा बिखरी दिखाई पड़ती है।

मिहिरकुल—हड्डिया तो यहा भी बहुत बिखरी मिलती है। इस रेगिस्तान पर चूने की तरह सफेद मनुष्यो और पशुओ की हड्डिया मिलती है। लेकिन इनकी अधिकता राक्षसो की जमात के कारण नही है। जो पशु रास्ते मे असमर्थ होते है उन्हे वही छोड दिया जाता है। पानी और चारे के बिना मरने के सिवा उनके लिए चारा क्या है! कभी-कभी ऐसा भी होता है, कि मरुभूमि के बीच मे पहुचकर आदमी रास्ता भूल जाता है—यह मरुभूमि तो उत्तर-दक्षिण बहुत दूर तक, शायद महीने के रास्ते तक फैली है। रास्ता छोड बैठने पर काफिले के काफिले को मरना पडता है। फिर डाकुओ के आक्रमण भी होते रहते है। दूर-दूर पर जैसे यहा कुये खोदे हुए है, जिनके लिए पाताल तक खोदना पडता है, मैं समझता हू, तुम्हारी मरुभूमि मे भी यही होता होगा।

मित्र—हा, हमारी मरुभूमि मे भी बहुत गहरे खोदने पर भी कभी-कभी पानी नही निकलता। कुओ मे से पानी निकालने के लिए चरसा इस्तेमाल किया जाता है जिसे ऊट खीचता है।

वक्षु नदी के तट पर पहुचकर मित्रवर्मा का हृदय इतना भावपूर्ण हो विह्वल हो उठा कि वह अपने हर्ष को छिपा नही सकता था। मिहिरकुल ने कहा—मित्र तुम्हे हमारी वक्षु मे अपनी गगा याद आती होगी? यद्यपि वह गुप्तो के राज्य मे है, किन्तु मैं उसके किनारे गया हू।

मित्रवर्मा—हा कुमार, गगा या कावेरी, आपका अनुमान ठीक है। जब से मैंने भारत छोडा, तिग्रा और फ्रात छोड विशाल नदी मैंने नही देखी। लेकिन हमारी गगा वर्षा मे ही इतनी मटमैली रहती है, नही तो उसका जल नीला हो

जाता है तो भी यह विशाल धारा मुझे अपनी नदियो का स्मरण दिलाती है—

"गगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती,
नर्मदे, सिन्धु, कावेरि जलेस्मिन् सन्निधि कुरु।"

कवात्—यह तुमने क्या बात कही और किस भाषा मे ?

मित्र—यह सस्कृत का पद्य है, जिसमे हमारी बहुत-सी नदियो का नाम गिनाया गया है। गगा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती, नर्मदा, सिन्धु, कावेरी—ये हमारी विशाल और पवित्र नदिया हैं, वर्षा की अधिकता के कारण उनकी धाराए बहुत विशाल हैं। हमारी नदियो मे नौका के यातायात की बहुत अच्छी सुविधा है। वह हमारे देश के लिए विस्तृत व्यापार-मार्ग का काम देती हैं।

मिहिरकुल—हमारी भी यह वक्षु और उत्तर की श्यामा (सिर) नदी बहुत दूर तक नौका चलाने मे काम देती है।

वक्षु के दोनो तटो से जरा ऊपर दो बडे-बडे निगम बसे हुए थे। उन्हे कोई जल्दी नही थी। राजधानी मे जाना था। रास्ते मे आराम की सभी चीजे मौजूद थी। दोनो ही ओर के नगरो मे विशाल उद्यानो सहित सुन्दर राजप्रासाद थे। मर्व से शाह कवात् के अनुगमन के लिए एक हजार भट और अधिकारी चल रहे थे।

वक्षु पार करने पर कवात् को पता लगा, कि उसकी बहिन राज-प्रासाद से आके ठहरी है। १७ वर्ष बाद वह अपने भाई से मिल रही थी, इसलिए उता[illegible] होकर यदि वह राजधानी से ६ दिन चलकर भाई से मिलने यहा आई हो, कोई आश्चर्य नही। कवात् अपनी सहोदरा से मिला। वह प्रयत्न करने पर अपनी अश्रुधारा को न रोक सकी। उसे यह सुनकर प्रसन्नता हुई, कि कवात् हूण राज्य के भीतर आने के बाद कोई कष्ट नही हुआ और उसकी दुहिता मामा के आराम का पूरा ध्यान रखा।

यहा से अब वह वक्षु के दाहिने तट के नीचे की तरफ बढे। यद्यपि कुछ और हटने पर यहा भी जहा-तहा मरुभूमि थी, किन्तु वह अधिकतर वक्षु की धार के पास से चल रहे थे, जहा गाव बसे हुए थे।

हूण राज्य मे आए दो सप्ताह हो चुके थे। भगिनीपति के सुन्दर आतिथ्य के कारण कवात् को मालूम होता था, जैसे वह अब भी तस्पोन की गद्दी पर है और राजकीय काम के लिए राजसी ठाट से घूम रहा है। कवात् की बहिन को

देखकर सम्विग याद आने लगी । उसने अपनी बहन से न जाने कितनी बार सम्विग की प्रशसा की । आज उसे बडी इच्छा हो रही थी, कि यहाँ वह साथ होती ।

मित्रवर्मा के लिए यह नई भूमि मालूम होती थी, यद्यपि अभी बर्फ नही पड रही थी, किन्तु सर्दी बहुत थी । चलते समय रास्ते मे जब हवा तेज हो जाती तो सर्दी बढ जाती थी, लेकिन इन राजकीय सवारो और महिलाओ के शरीर पर उत्तरी देशो से आने वाले महार्घ चमकचुक पडे थे, जिनके लोम मक्खन की तरह कोमल और रेशम की तरह चमकीले थे । श्वेत रग के चमरचुक सवार की बहन और उसकी लडकी ने पहन रखे थे । वह ऐसे भी अनिन्द्य सुन्दरियां थी, किन्तु उस पोशाक मे तो वह देविकाओ सी मालूम होती थी ।

मित्रवर्मा को वक्षु के इस पार आने पर कुछ और आत्मीयता मालूम होने लगी । यद्यपि जलवायु मे उतनी समानता नही थी, किन्तु अब बडे-बडे निगमो मे ही नही, कही-कही तो गावो मे भी भिक्षु-सघाराम दिखाई पडते थे । भिक्षु-सघारामो मे मित्रवर्मा को बहुत रहने का मौका मिला था । भारत के सघारामो मे भी उसने विदेशी भिक्षुओ को देखा था । विद्या और कला के पीठ स्थान होने के साथ चारो दिशाओ से आए साहसी और विद्वान भिक्षुओ का समागम उनकी विशेषता थी । मित्रवर्मा अयरानी भाषा अच्छी तरह समझता और बोल लेता था । यद्यपि इधर की भाषा (सोग्दी) मे कुछ अतर था, किन्तु उसे वह थोडे-से परिश्रम से समझने लगा था । वक्षु-पार पहले ही दिन भिक्षु-सघाराम का नाम सुनते वह वहा पहुचा । उसे बडी प्रसन्नता हुई, जब देखा कि वहा एक भारतीय भिक्षु ठहरे हुए है । दूर देश मे जाके मातृभूमि की महिमा और स्नेह का आदमी को पता लगता है । मित्रवर्मा ने बडी देर तक उनसे बात-चीत की, लेकिन उन्हे भारत छोडे मित्रवर्मा से भी अधिक वर्ष हो गए थे, अत विशेष कुछ नही बतला सकते थे ।

आगे वक्षु से कुछ हटकर वावकद का विशाल नगर आया । यहा उन महाधनी सार्थवाहो का निवास था, जिनके व्यापार का सम्बन्ध चीन, भारत, रोम तथा उत्तरी सप्तसिन्धु तक था । इनके वैभव के सामने कितने ही अयरानी या भारतीय सामत भी कुछ नही थे । नगर मे कई बौद्ध विहार थे ।

राजधानी मे पहुचने से पहले दिन वह एक ऐसे नगर मे पहुचे, जिसके केन्द्र

मे एक विशाल बौद्ध विहार था और उसी के नाम पर नगर को भी 'विहार' (बुखारा) कहा जाता था। विहार मे मित्रवर्मा को बहुत दूर-दूर के भिक्षु मिले और वीथियो मे दूर देशो के आदमी भी। पहिले उसने सुन रखा था कि 'हूणो' का राजा तोरमान बौद्ध धर्म का भारी शत्रु है, लेकिन यहा उसने अपनी आखो देखा, कि हेफ्ताल राज्य मे ही नही बल्कि राजधानी तक मे विशाल सघाराम बने है। तोरमान और मिहिरकुल के कृपापात्रो मे भी बहुत-से बौद्ध थे। पूछने पर मिहिरकुल ने कहा—व्यक्तिगत तौर से राजा किसी धर्म को मान सकता है, किन्तु प्रजारजन के ख्याल से उसे अपनी सहानुभूति और सम्मान का पात्र देश के सभी धर्मों को बनाना पडता है।

मित्रवर्मा—एक बात पूछू युवराज, आप लोगो को हूण क्यो कहते है? हूणो को मैंने तरपोन् मे देखा, यहा भी बडे नगरो मे जब तब कोई मिल जाता है, लेकिन उनका चेहरा और रग बिलकुल दूसरा होता है। उनके मुह पर मूछ-दाढ़ी नाम मात्र की होती है, भौहे और आखे ऊपर की ओर उठी होती हैं, गाल की हड्डिया भी ज्यादा चौडी और उठी तथा नाक चिपटी दोनो कपोलो मे धसी होती है, जैसी कि चीनी लोगो की।

मिहिरकुल—हम लोग हूण नही हैं। देख ही रहे है, कि अयरानियो मे भी हम अधिक श्वेताग, अधिक पिगल केशर होते है, हमारी नाक, आख, मुह अयरानियो से मिलते हैं। हमारा वही वश है, जो कि पार्थियो और शको का। उत्तर के देशो पर, जहा हमारे पूर्वज पशु पाल कर जीवन व्यतीत करते थे, कालान्तर हूणो का आक्रमण हुआ। अन्ती, शक और पार्थीय जैसे कबीले ज्यादा सबल तथा बडा प्रतिरोध करने वाले थे। हार जाने पर उन्हे अपनी पशुचारणा भूमि छोडकर दक्खिन को भागना पडा। हमारी तरह के छोटे कबीलो ने हूणो के शासन को स्वीकार किया और वही घुमन्तू जीवन व्यतीत करते रहे। पीछे हूणो के वशजो अवारो के प्रहार से हम भी अपनी चर-भूमि छोड भागने के लिए मजबूर हुए। अभी आधी शताब्दी नही हुई, जब कि हम इस ओर आए। कुषाण राजवश बूढा जर्जर हो गया था। उसमे न सैनिक योग्यता थी न शासन की ही। राजा केवल विलासी थे। हमारे कबीले का उनके साथ सघर्ष हुआ और पराजित हो कुषाण राजा को भारत की ओर भागना पडा, हमारे लोगो को वहा तक उनका पीछा करना पडा। उन्होने हूणो के देश से आया होने के कारण तथा

बदनाम करने के लिए भी हमें हूण कहना शुरू किया, [illegible] हमारा नाम [illegible] पड़ा।

मित्रवर्मा—कुषाणों का राज्य भारत में भी था। [illegible] ही यह नाम भारत में पहुँचाया।

मिहिरकुल—युद्ध में सभी घुमन्तू जातियाँ [illegible] बहुत निपुण हैं किन्तु हूणों जैसी [illegible] नहीं है। [illegible] कारण हमारे भीतर हूणों के कुछ शब्द [illegible]। [illegible] ही नाम [illegible] (ज्युल) हूण भाषा का शब्द है।

मित्रवर्मा—"कुल" तो हमारी भाषा में "वंश" के लिए प्रयुक्त होता [illegible]।

मिहिरकुल—किन्तु कुल का अर्थ हूण भाषा में कुमार होता है।

मित्र—अर्थात् युवराज का नाम मित्रकुमार है।

मिहिरकुल—हाँ, जहाँ जातियाँ इकट्ठा रह जाती हैं, तो उनमें [illegible] ही बातों का लेना-देना आरम्भ हो जाता है, फिर हूण तो ४०० वर्षों से [illegible] भूमि में शासन करते थे।

कवात् ने अपनी भाजी के साथ के वार्तालाप की [illegible] मित्रवर्मा से पूछा—मित्र, यहाँ तुम्हें कौन-सी बात विशेष मालूम होती है?

मित्र—मुझे तो यह सोग्द देश दुनिया की नाना जातियों का मिलन-स्थान मालूम होता है। यहाँ समृद्ध नागरिक भी हैं, शिविर-निवासी घुमन्तू नागत भी। संभवतः युगों से यहाँ यही होता आया है और आगे भी होता रहेगा। युवराज, आपका वंश उत्तर के देशों से चला आया, अब तो वहाँ ही हूण रह गए होंगे?

मिहिरकुल—हाँ, हूण ही रह गये हैं। किंतु अब वह विस्मृत होता जा रहा है। जान पड़ता है हूण शब्द इतना बदनाम हो गया है, कि उनके वंशज भी इस नाम को स्वीकार करना नहीं पसंद करते। हूण वंश पश्चिम में दूर तक चला गया है—खजार (कास्पियन) समुद्र से एक और विशाल समुद्र (कालासागर) फिर उसमें गिरनेवाली महानदी दुनाइ (डेन्यूब) के ऊपर तक चला गया है। हूण जतियाँ अब खजार, अवार, बुलगार जैसे कई नामों से विख्यात हैं। अवारों का लोहा चीन ने भी माना है, और हमारे तो पड़ोसी होने से हर वक्त उनसे भय लगा रहता है।

मित्र—तो अवार बडे लडाके हैं, वह तो हूणो ही जैसे होगे ?

मिहिरकुल—हूणो का ही वह कबीला है।

मित्र—कौन जाने हेफ्तालो के बाद उनकी बारी आए। यह भूमि तो जातियो की मिलन भूमि है ही।

मिहिरकुल—किंतु यह जितनी जातिया हमारे नगरो मे देखी जाती हैं, उनकी शकल-सूरत मे कम अतर मालूम होता है। अयरानियो का और हमारी जाति वालो का चेहरा घनी मूछ और दाढी से भरा रहता है।

मित्र—चाहे आकार-प्रकार कैसा ही रहा हो, एक जगह रहने पर ऐसा मिश्रण होता ही रहता है। मैंने जो दूसरी विशेषता देखी, वह यहा के लोगो का धार्मिक पक्षपात से मुक्त होना है। अयरान मे आज देरेस्तदीन का नाम भी लेना खतरे की बात है और पहले भी उसकी ओर घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। यहा धार्मिक सकीर्णता का बिलकुल अभाव मालूम होता है। लोग धर्म मे निरत नही हैं, लेकिन धार्मिक दुराग्रह के लिए उनके हृदय मे जगह नही है।

विहार वाले नगर (बुखारा) मे पहुचने से पहले ही सोग्द नदी की नहरे मिली। मिहिरकुल के बतलाने की आवश्यकता नही थी, कि इसी नदी के कारण इस देश का नाम सोग्द पडा। यद्यपि फलो से उद्यान के वृक्ष खाली हो गए थे, किन्तु घरो मे बहुत प्रकार के फल मिलते थे। मिहिरकुल ने सोग्द नदी के जल को फलो की अत्यन्त मधुरता का कारण बतलाया। मित्रवर्मा ने हरित रोद (हिरात) और मुर्गाप नदियो की नहरो मे भी वह गुण सुना था। यह नदिया बहुत-सी नहरो मे विभक्त हो कृषि-उपयोगी भूमि की प्यास बुझाती अत मे बालुका राशि मे लुप्त हो जाती हैं। सोग्द नदी भी आमू की तरह नहरो मे बटकर हो अत मे बचे-खुचे पानी को लिए बालू मे विनष्ट हो जाती है।

अत मे एक दिन मडली 'हूण' राजधानी से एक योजन पर अवस्थित राजोद्यान मे पहुची। तोरमान अपने साले अयरान शाह की अगवानी के लिए वहा पहुचा हुआ था। उसकी घनी श्वेत दाढी, उन्नत ललाट और स्निग्ध नीली आखो मे उस क्रूरता का पता नही था, जिसे कि उसके साथ कथाओ मे जोडा जाता था।

२३
तोरमान-राजधानी

कवान् के लिए एक विशाल प्रासाद दे दिया गया था, जिसमे नौकर-चाकरो की दास-दासियो की पल्टन हर वक्त आज्ञा पूरी करने के लिए तैयार रहती थी। प्रासाद राजा के अन्त पुर से दूर नही था। इस समय राजा तोरमान का निवास स्कधावार राजधानी से वाहर के विशाल मैदान मे था। यह मैदान वस्तुत रेगिस्तान का ही एक भाग था। यह स्कधावार मिहिरवर्मा को कुछ विचित्र-सा मालूम होता था। नगर और उसके पास दूर तक फैले उद्यानो मे स्वच्छ जल की नहरें वह रही थी। आजकल पत्ते न होने पर भी उद्यान-भूमि कितनी हरी-भरी रहती होगी, इसका अनुमान आसानी से किया जा सकता था। उद्यानो और खेतो से वाहर निकलते ही वालुका-राशि सामने आती थी। इसी वालू पर तम्वुओ का एक नगर वसा हुआ था, जिसने राजधानी से कम भूमि नही घेर रखी थी। कितने तम्वू रग-विरगे घोडो के वालो के थे, कितने ही नम्दो के और कितने ही सूती कपडे के भी थे। राजा और उसके सामतो के तो तम्वू नही, कपडे से वने महल खडे थे। हा, वह सभी एकतल्ले थे। आस्थान-शाला (दर्वार) हजार खम्भो का वहुत-से टुकडो से जुडा एक विशाल पटमडप था, जिसमे पाच सहस्र आदमी वैठ सकते थे और उसके सजाने मे तरूपोन् की आस्थान-शाला से कम कौशल नही दिखलाया गया था। आस्थान-शाला को चित्रित करने मे भारतीय, चीनी, अयरानी और सोग्दी कलाकारो ने अपने कौशल दिखलाए थे। छत मे तोरमान और उसके पिता की वीर-गाथाए चित्रो मे अकित थी। किनारे के खम्भो को जहा सुवर्णपट और रग-विरगे रेशम से अलकृत किया गया था, वहा उनपर भी कही-कही हेफ्ताल-वीरो के चित्र लटक रहे थे। सारी आस्थान-शाला पटभित्ति मे घिरी हुई थी, जिसके वाहर जगह-जगह भट खडे थे और आदमी द्वार के भीतर मे, सो भी आज्ञा लेने के वाद ही जा सकता था। अपने दर्वार को सजाने मे तोरमान ने वहुत-सी वातें कुषाणो से ही नही वल्कि अयरानियो और भारतीयो से भी ली थी। तोरमान ने अपने विजयो मे दूसरे देशो की सम्पत्ति ही नही लूट के अपनी राजधानी मे भेजी थी वल्कि वहा के शिल्पियो, विद्वानो और रूप राशि को भी एकत्रित करके वहा पहुचाया

मित्र—तो अवार बडे लडाके हैं, वह तो हूणो ही जैसे होगे ?

मिहिरकुल—हूणो का ही वह कबीला है।

मित्र—कौन जाने हेफ्तालो के बाद उनकी बारी आए। यह भूमि तो जातियो की मिलन भूमि है ही।

मिहिरकुल—किंतु यह जितनी जातिया हमारे नगरो मे देखी जाती हैं, उनकी शकल-सूरत मे कम अतर मालूम होता है। अयरानियो का और हमारी जाति वालो का चेहरा घनी मूछ और दाढी से भरा रहता है।

मित्र—चाहे आकार-प्रकार कैसा ही रहा हो, एक जगह रहने पर ऐसा मिश्रण होता ही रहता है। मैंने जो दूसरी विशेषता देखी, वह यहा के लोगो का धार्मिक पक्षपात से मुक्त होना है। अयरान मे आज देरेस्तदीन का नाम भी लेना खतरे की बात है और पहले भी उसकी ओर घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। यहा धार्मिक सकीर्णता का बिलकुल अभाव मालूम होता है। लोग धर्म से विरत नही हैं, लेकिन धार्मिक दुराग्रह के लिए उनके हृदय मे जगह नही है।

विहार वाले नगर (बुखारा) मे पहुचने से पहले ही सोग्द नदी की नहरे मिली। मिहिरकुल के बतलाने की आवश्यकता नही थी, कि इसी नदी के कारण इस देश का नाम सोग्द पडा। यद्यपि फलो से उद्यान के वृक्ष खाली हो गए थे, किन्तु घरो मे बहुत प्रकार के फल मिलते थे। मिहिरकुल ने सोग्द नदी के जल को फलो की अत्यन्त मधुरता का कारण बतलाया। मित्रवर्मा ने हरित राद (हिरात) और मुर्गाब नदियो की नहरो मे भी वह गुण सुना था। यह नदिया बहुत-सी नहरो मे विभक्त हो कृषि-उपयोगी भूमि की प्यास बुझाती अत मे बालुका राशि मे लुप्त हो जाती है। सोग्द नदी भी झाडू की तरह नहरो मे विभक्त हो अत मे बचे-खुचे पानी को लिए बालू मे विनष्ट हो जाती है।

अत मे एक दिन मडली 'हूण' राजधानी मे एक योजन पर अवस्थित राजोद्यान मे पहुची। तोरमान अपने साले अयरान शाह की अगवानी के लिए वहा पहुचा हुआ था। उसकी घनी श्वेत दाढी, उन्नत ललाट और स्निग्ध नीलिम आखो मे उस क्रूरता का पता नहीं था, जिसे कि उसके साथ कथाओ मे जोडा जाता था।

२३
तोरमान-राजधानी

कवात् के लिए एक विशाल प्रासाद दे दिया गया था, जिसमे नौकर -चाकरो और दास-दासियो की पल्टन हर वक्त आज्ञा पूरी करने के लिए तैयार रहती थी। प्रासाद राजा के अन्त पुर से दूर नही था। इस समय राजा तोरमान का निवास स्कधावार राजधानी से बाहर के विशाल मैदान मे था। यह मैदान वस्तुत रेगिस्तान का ही एक भाग था। यह स्कधावार मित्रवर्मा को कुछ विचित्र-सा मालूम होता था। नगर और उसके पास दूर तक फैले उद्यानो मे स्वच्छ जल की नहरें वह रही थी। आजकल पत्ते न होने पर भी उद्यान-भूमि कितनी हरी-भरी रहती होगी, इसका अनुमान आसानी से किया जा सकता था। उद्यानो और खेतो से वाहर निकलते ही वालुका-राशि सामने आती थी। इसी बालू पर तम्बुओ का एक नगर वसा हुआ था, जिसने राजधानी से कम भूमि नही घेर रखी थी। कितने तम्बू रग-विरगे घोडो के बालो के थे, कितने ही नम्दो के और कितने ही सूती कपडे के भी थे। राजा और उसके सामतो के तो तम्बू नही, कपडे से वने महल खडे थे। हा, वह सभी एकतल्ले थे। आस्थान-शाला (दर्बार) हज़ार खम्भो का बहुत-से टुकडो से जुडा एक विशाल पटमडप था, जिसमे पाच सहस्र आदमी बैठ सकते थे और उसके सजाने मे तस्पोन् की आस्थान-शाला से कम कौशल नही दिखलाया गया था। आस्थान-शाला को चित्रित करने मे भारतीय, चीनी, अयरानी और सोग्दी कलाकारो ने अपने कौशल दिखलाए थे। छत मे तोरमान और उसके पिता की वीर-गाथाए चित्रो मे अकित थी। किनारे के खम्भो को जहा सुवर्णपट और रग-विरगे रेशम से अलकृत किया गया था, वहा उनपर भी कही-कही हेफ्ताल-वीरो के चित्र लटक रहे थे। सारी आस्थान-शाला पटभित्ति से घिरी हुई थी, जिसके बाहर जगह-जगह भट खडे थे और आदमी द्वार के भीतर से, सो भी आज्ञा लेने के बाद ही जा सकता था। अपने दर्बार को सजाने मे तोरमान ने बहुत-सी बातें कुपाणो से ही नही बल्कि अयरानियो और भारतीयो से भी ली थी। तोरमान ने अपने विजयो मे दूसरे देशो की सम्पत्ति ही नही लूट के अपनी राजधानी मे भेजी थी बल्कि वहा के शिल्पियो, विद्वानो और रूप राशि को भी एकत्रित करके वहा पहुचाया

था। यद्यपि हेफ्ताल संस्कृति में हूणों से बहुत आगे बढ़े हुए थे, किन्तु जब वह दक्षिण की ओर भाग्य-परीक्षा के लिए भागे, तो अभी घुमन्तू जीवन को छोड़ हुए नहीं थे। वे उत्तर के घुमन्तू जीवन का गर्व करते थे, और नगर या ग्राम के निवासियों को कायर, दब्बू, बनिया-बक्काल कहकर घृणा की दृष्टि से देखते थे। यद्यपि अब तोरमान की राजधानी में उसके बनाए महल सासानी या गुप्त महलों से वैभव में कम नहीं थे और बहुत समय वह, उसका परिवार या स्व-जातीय सामंत इन महलों में रहा भी करते थे, तो भी उन्हें कहीं कायर-दब्बू न समझा जाने लगे, इसलिए वह तम्बू के जीवन को अब भी बहुत पसंद करते थे।

तम्बुओं के नगर में चुनी हुई बीस हज़ार पल्टन, राज्य के कर्मचारी सामंत और दर्बारी रहते थे, फिर वह अव्यवस्थित रीति से नहीं बसाया जा सकता था। आने-जाने के लिए रास्तों का भी ख्याल रखना पड़ता था और स्वास्थ्य तथा सफाई का भी। नगरी में चौड़ी सीधी सड़कें चली गई थीं जिनके किनारे ये तम्बू लगे हुए थे। जगह-जगह चौरास्ते थे, जहां नगर के छोटे छोटे दूकानदारों ने दूकानें खोल रखी थीं, कहीं फलवालों ने सेब, नाशपाती, अंगूर, सर्दा, खूबानी, आड़ू को सजा के रखा था, कहीं आटा, चावल, मक्खन, मधु जैसी चीज़ें बिक रही थीं। इन दूकानों के अतिरिक्त कुछ सड़कें बाकायदा पण्य वीथी बन गई थीं, जिनमें कोई वीथी जौहरियों की थी, तो कोई वस्त्र वणिकों की। किसी किसी जगह चीन, भारत, रोम के व्यापारियों ने भी अपने देश के माल को सजा रखा था। इनके अतिरिक्त ऐसी भी वीथियां थीं, जिनमें दास दासी बिकते थे। किन्तु यह इसी राजधानी की ही विशेषता नहीं थी। उस समय के भारतीय अयरानी या चीनी किसी भी राजधानी में ऐसी वीथियां देखी जा सकती थीं। हेफ्ताल लड़ाई में हूणों को अपना आदर्श मानते थे और युद्ध के बिना जीवन को व्यर्थ समझते थे। आधी शताब्दी राज्य करते हो गया, लेकिन अब भी साधारण तथा हेफ्ताल नर-नारी घरों में नहीं तम्बुओं में रहते थे, खेती या शिल्प नहीं बल्कि पशुचारण या युद्ध को अपनी जीविका का साधन मानते थे। साधारण यदि नगर के महल में ही बराबर रहने लगता, तो निश्चय ही हेफ्तालों की की दृष्टि में गिर जाता। यह [illegible] भारत, आज [illegible] और गांधार कपिशा (काबुल) का राजा होते भी पहिले हेफ्ताल [illegible] उसके योद्धाओं में सबसे वीर [illegible] (ई [illegible]) [illegible]

थे। यह कैसे हो सकता था, कि वह उनकी दृष्टि मे अपने को गिरा लेता। यह भी एक कारण था, जो यहा यह तम्बुओ की नगरी बसी हुई थी।

तम्बूओ की नगरी का पूरा वर्णन करने पर वह भी एक नगर के वणन से अधिक होगा, क्योकि नगर से इस नगरी मे कितनी ही विचित्रताए थी। यह नगरी घुमन्तू जीवन का प्रमाण-पत्र थी, इसलिए घुमन्तू खान-पान, आमोद-प्रमोद का भी यहा प्रबन्ध होना आवश्यक था। नगरी के उपात मे कितनी ही जगह घुमन्तुओ का सुस्वाद अश्व-मास तैयार हो रहा था। यह कहने की आवश्यकता नही कि, हफ्ताल अन्न बहुत कम और मास अधिक खाते थे। उनका सबसे प्रिय मास वह था, जिसे वह बड़े यत्न मे बनाते थे, भूमि मे एक गड्ढा खोद के उसमे बहुत-से उपले जला दिए जाते थे, खूब तप जाने पर आग निकालकर पूरे घोडे को उसमे रख दिया जाता, फिर ऊपर से मिट्टी डाल के बहुत-सी आग रख दी जाती थी। पूरे दिन-भर उसे इस तरह रखकर पकाया जाता। फिर कभी-कभी तो इसीके किनारे अपने-अपने छुरे और सीग के मद्य-चषक को लेकर हेफ्ताल वीर बैठ जाते, और उनका भोज और मनोविनोद घटो चलता रहता। सभी उत्तरी घुमन्तू जातियो की भाति हेफ्ताल कल्पना नही कर पाते थे, कि मनुष्य घोडे के बिना भी जी सकता है। घोडा उनके लिए सब-कुछ था। यात्रा मे सवारी का काम देता था। घोडी के दूध को वह दूध और दही की तरह ही इस्तेमाल नही करते थे, बल्कि सडाकर एक तरह की मदिरा (कूमिस) बनाते थे, जिसके बिना उनका आतिथ्य-सत्कार पूरा नही हो सकता था। तोरमान सभ्य देशो के स्वादिष्ट भोजनो का अभ्यस्त था, किन्तु वह भी कूमिस और अश्व-मास बिना अतृप्त रहता था। अश्व-मास के अतिरिक्त भेड, बकरी, सूअर का मास भी नगरी मे बहुत इस्तेमाल होता था, यद्यपि पवित्र समझे जाने पर भी गाय का मास बहुत कम इस्तेमाल किया जाता था। कुषाणो ने ही इसके उपयोग को कम कर दिया था। श्वेत हूणो का राज्य भारत मे भी फैला रहने से वह भी गाय के प्रति दूसरी भावना बनाने जा रहे थे, इसलिए सूर्य की बलि के अतिरिक्त बहुत कम गोमास व्यवहार मे आता था।

कवात् अब चाहे पदच्युत भी हो, किन्तु सासानी बादशाह था, इसलिए वह पहिले की तरह खुलकर घूम नहीं सकता था। अभी भी तस्पोन् के सिंहासन पर बैठने का भय था, इसलिए जामास्प के आदमी इस कटक को दूर करने की

कोशिश कर सकते थे। मित्रवर्मा को स्वच्छन्द विचरने का खुला मौका था। उसे एक भारतीय राजकुमार मिल गया, जो कि तोरमान का प्रतिष्ठित दरबारी था। उस दिन मित्रवर्मा अपने भारतीय साथी के साथ तबुओ की नगरी मे घूम रहा था। हो सकता है, तोरमान की राजधानी मे वह सभी चीजें मिलती हो, लेकिन वहा ऊची अट्टालिकाओ और लम्बी दीवारो के कारण सभी चीज ढकी-सी मालूम होती थी, किन्तु यहा वह सभी आखो के सामने थी। दास दासियो के हाट मे जाते ही दलाल उनके पीछे पड गए। किसीने कहा—भारत की बडी सुन्दरी दासिया मौजूद हैं और बहुत सस्ते दाम मे। दूसरे ने तुखार दासी के वय और सौन्दर्य की प्रशसा करके खीचना चाहा। तीसरे ने चीनी दासी के बारे मे कहा। चौथे ने बर्बरो की छोटी आखो, लम्बे केशो और गठीले शरीर की प्रशसा की। दोनो मित्रो को दास-दासी खरीदने नहीं थे। तोरमान की कृपा से दासियो की कमी नहीं थी। वह दास-वीथी को देखना चाहते थे। मित्रवर्मा और उसके साथी ने दास-वीथी की बहुत सी पण्य-शालाए देखी, जहा दूसरे निर्जीव पण्यो की तरह मानव-पण्यो को बहुत सजा के रखा गया था। उनके शरीर पर नये, साफ और सुन्दर कपडे थे। उनके बालो और मुह को सवारा गया था। वय को कम दिखाने के लिए किसी-किसीके बालो पर मेहदी का रग लगाया गया था। यहां तक कि ग्राहक के आने पर इशारे पर अपनी शोभा वृद्धि के लिए विक्रेय स्त्रियां मुस्कुरा भी देती थी। दोनो मित्र देखते थे, वह मुस्कुराहट बिलकुल ऊपर की चीज थी, भीतर से वह दुख और चिन्ता मे जल रही थी। मित्रवर्मा को सारी दास-पण्यशालाओ को देखने की हिम्मत नही थी। उनका हृदय खिन्न हो गया। वह अपने मित्र को लेके वीथी मे निकल गया, और दिल के भार को हलका करने के लिए कहने लगा—यह भी हमारे जैसे मानव हैं। इनके भी प्रिय देश, प्रिय नगर, प्रिय जाति और प्रिय बन्धु-बान्धव होगे। यह अपनी खुशी से तोरमान की नगरी मे बिकने नहीं आए। इन्हे बलात् घर से निकाल के यहा लाया गया है। आज यह पशु से भिन्न नहीं रखे, उन्हींकी तरह इनका क्रय-विक्रय हो रहा है, उन्हींकी तरह मार खा कर इन्हे स्वामी का काम करना होगा, उसकी इच्छा पूरी करनी होगी।

मध्याह्न भोजन तोरमान के शिविर मे करना था, इसीलिए दोनो मित्र पहुचे। बलात् तो अपनी नगरी मे अलग नहीं रह सकता था, यह [illegible]

मौजूद थी। तोरमान आस्थान-शाला मे नही अपनी भोजन-शाला मे बैठा था, पास मे उसके कितने ही मेहमान बैठे थे। यद्यपि विधिपूर्वक आग मे पकाया बछडे का मास और अश्विनी-क्षीर की मदिरा का अभाव यहा नही था, किन्तु प्रधानता भिन्न-भिन्न देशो के नागरिक भोजनो और फलो की थी। मित्रवर्मा को तोरमान से बहुत दूर नही बैठना पडा था। उसने देखा कि जहा भारतीय तथा दूसरे राजकुमार और सामन्त तोरमान के सामने उसका सम्मान करते हुए अपने को अकिचन-सा प्रदर्शित करते वहा हेफ्ताल तोरमान के साथ आत्मीय जैसा वर्ताव करते। वह भी अपने सामने की चौकी पर पडे मास-खड को कभी स्वच्छ वेश वाले किसी हेफ्ताल को देता और कभी उनमे से कोई अपनी खाद्य वस्तु उसके सामने रखता—आज के भोज मे हेफ्तालो की सख्या अधिक थी। भोजन को देखने से मालूम होता था, कि राजा तोरमान का सम्बन्ध अपने हेफ्तालो से दूसरा है और दूसरो के साथ दूसरा। बात करने मे भी हेफ्ताल उतना सम्मान नही प्रकट करते थे, जितना कि दूसरे। पान भोज का अभिन्न अग था। तोरमान स्वय भी पानशूर नही था, किन्तु अपने सरदारो को बहुत आग्रहपूर्वक पिलाना था। यहा सुन्दर महार्घ चपक भी थे, लेकिन हेफ्ताल-सरदार उनकी जगह सीग के चपक को अधिक पसद करते थे। तोरमान ने यह भोज विशेषकर अपने साले ईरान के शाह के अभिनन्दन मे किया था। कवात् को बचते-बचते भी इतना पान करना पडा, कि वह भोजन-समाप्ति के बाद मुश्किल से अपने पैरो पर खडा हो सकता था।

मित्रवर्मा और उसका भारतीय साथी तोरमान के सम्मुख नही थे, इस लिए उन्होने मात्रा से मदिरा पी थी। सायकाल दोनो भोज से विदा हो नगर की ओर चले। अभी कुछ दिन था। हरे वृक्षो की पत्तियो के बीच हरे जल की एक नहर वह रह थी। दोनो उसीके किनारे टहलने को चल पडे। मित्रवर्मा ने अपने साथी से कहा—कितना परस्पर-विरोध है। हमने दास-वीथी देखी और वहा के भाग्यहीन मानव की नई भडकीली पोशाक के भीतर सुलगती निर्धूम आग को भी देखा, फिर तोरमान के भोज मे उसके सैनिको, सामन्तो को भी। इन्ही सामन्तो के भुजबल पर यह देश के मानव दास-दासी के रूप मे यहा आए हुए है। दास-वीथी मे मानव और मानव का अतर कितना भारी मालूम होता था। यदि हम दास से सीधे बात करते, तो उसपर दया दिखलाते थे।

—इधर तोरमान अपने हेफ्ताल-सामन्तो के साथ सेवक की तरह नही बल्कि भाई की तरह बर्ताव करता था।

मित्र—बिलकुल बराबर का बर्ताव, किन्तु वह हमारे साथ ऐसा नही करता था। हम उसके लिए दास से ऊपर थे, किन्तु उसके सिहासन से बहुत नीचे।

—राजा के राज्य मे इतना अतर तो रहता ही है।

मित्र—राज्य तो राजा ही का होता है और वहा छोटे-बडे होने से भी बहुत-से दर्जे हैं।

—लेकिन तोरमान का राज्य अपने हेफ्तालो पर राजा का राज्य नही है। तोरमान उनके लिए कुल-ज्येष्ठ है। यद्यपि बहुत दिन नही बीता, किन्तु अभी ही कुछ अतर पड गया है। सम्भव है मिहिरकुल के शासन मे हमारे यहा जैसी सामन्ती ठाठ चल जाए। अभी तोरमान और हेफ्तालो का सम्बन्ध वस्तुत गणराज्य जैसा है।

मित्र—गणराज्य के बारे मे पढा था केवल पुस्तको मे। लिच्छवियो के गण की महिमा सुनी थी।

—यौधेयो के गण के बारे मे नही सुना?

मित्र—कभी किसीने कहा तो था।

—और अभी सौ वर्ष भी नही बीते, जब कि प्रतापी यौधेय गण की ध्वजा शतद्रु और यमुना के बीच फहरा रही थी। उन्होने कितने ही देशी विदेशी राजाओ के छक्के छुडाए। शको ने यौधेयो का लोहा माना था। गुप्त सम्राट् समुद्रगुप्त ने उनका मान किया था, लेकिन आज यौधेय गण का नाम आप जैसे बहुश्रुत भी नही सुन पाते।

मित्र—मेरा जन्म दक्षिण मे पल्लव-राष्ट्र मे हुआ। भारत मे प्राय सभी जगह घूमा हू, तो भी यमुना के पश्चिम नाम मात्र ही पहुच पाया। शायद यौधेयो के बारे मे आपको अधिक मालूम होगा। मैं किसी वक्त सुनना चाहूगा। आप तो गुप्तवश के राजकुमार है न?

आज गुप्त वश का वही प्रताप नही है, किन्तु तो भी उसका पुराना यश अभी तक चला जा रहा है। इसी कारण कह सकते हैं, कि मुझे यौधेय की जगह गुप्त कहने मे तोरमान के दरबार को प्रसन्नता होती है।

मित्र—तो आप तोरमान के दरबार मे कैसे पहुचे ?

वीर—गुप्त-राज्य के कुछ भाग को तोरमान ने ले लिया और आक्रमण तो उसने मगध तक किया, नगरो को लूटा, बस्तियो को उजाडा। मेरा निवास उत्तर पचाल (रुहेलखण्ड) मे था। यौधेयो के उजडने पर वही मेरे परदादा को जागीर मिली थी। मुझे तोरमान के पास आने की आवश्यकता नही थी, लेकिन इसे मोह कह लीजिए, यौधेय भूमि का प्रेम मुझे तोरमान के पास ले आया। आप जानते हैं, यौधेय भूमि सारी आज तोरमान के हाथ मे है।

मित्र—तो तुम—आप समझते हैं, तोरमान यौधेय भूमि को फिर यौधेयो के हाथ मे सौंप देगा ?

वीर—मित्र, 'तुम' ही कहो, 'आप' से वह अधिक प्रिय लगता है। हम दोनो की आयु मे कोई अधिक अन्तर भी नही है।

मित्र—वीर, तुमने कोई स्वप्न देखा होगा ?

वीर—हा, स्वप्न ही कह लो।

मित्र—स्वप्न बुरे अर्थो मे मैं नही कह रहा हू। कोई महान कार्य की मानसिक पूर्व कल्पना को मैं यहा स्वप्न का नाम दे रहा हू। मैं भी अभी एक स्वप्न-द्रष्टा को देख के आ रहा हू—महान् स्वप्न-द्रष्टा, जिसका स्वप्न यदि सत्य हुआ, तो स्वर्ग इसी भूमि पर उतर आएगा, लेकिन वह कभी दूसरे समय।

वीर—हा, मैंने भी एक स्वप्न ही देखा, उसीको सत्य करने के लिए तोरमान का पल्ला पकडा, बल्कि पल्ला पकडना भी नही कह सकता।

मित्र—हा, तोरमान यौधेय भूमि को मुक्त थोडे ही कर सकता है। वह ऐसी दरिद्र भूमि तो नहीं है।

वीर—दरिद्र नही, वसुन्धरा है। वहा की गाए घडे-घडे दूध देती हैं, वहा की भैंसो से रोज़ मानी-मानी मक्खन निकलता है। शस्य-श्यामला भूमि के कारण ही उसका नाम हरितावली (हरियाना) पड गया।

मित्र—हा, मैं समझता हू, तुम तोरमान से ऐसी सुनहली भूमि को दान के रूप मे पाने की आशा नही रख सकते। तुम्हारे खयाल मे होगा, कि देखे हूणो

के पास विजय का कौन-सा मत्र है। उससे भी अधिक यह, कि जिस वक्त हूण सिंहासन लडखडाने लगे, उस वक्त यौधेय की मुक्ति का ध्वजा खडा किया जाए। मैं नही चाहता, कि तुम्हारे रहस्य को तुम्हारे ही मुह से खुलवाऊ, किंतु इतना अवश्य कहना चाहता हू, यदि मैं उस समय कही आसपास होऊ, तो मेरी सेवाए तुम्हारे साथ होगी।

वीर—मैंने यौधेयो से भी ऐसे उत्साह के शब्द नही सुने। मेरा हृदय कितना आनन्द अनुभव कर रहा है, इसका अनुमान खुद कर सकते हो। अभी तो यह स्वप्न है, अभी तो तोरमान के शासन मे कही निर्बलता देखने मे नही आती। वह भोग के जीवन को पसन्द करता है, किन्तु उसी सीमा तक जिसमे कि वह उसके शासक और सैनिक के कर्तव्य मे बाधा नही हो। उसके मिहिरकुल मे भी अभी वे व्यसन दिखलाई नही पड रहे हैं, जो पतनोन्मुख राजवश के कुमारो मे देखे जाते हैं। थोडा-सा स्वभाव उसका क्रोधी अवश्य है, किन्तु इतने से हूण-वश का ह्रास नही होगा।

मित्र—राजवश अपनी निर्बलता से भी नष्ट होते है और शत्रुओ की [illegible] सबलता से भी। हमे अभी इसके बारे मे भविष्यवाणी करने का अधिकार [illegible] अधिक नही है, कि सभी समय एक-सा नही जाता। अभी तो यौधेयो का प्रश्न सामने नही आया है। न जाने कब तुम्हारे स्वप्न को सामने आ[illegible] अवसर मिलेगा। तब तक मैं एक-दूसरे ही मधुर स्वप्न-द्रष्टा की आग मे पैर रखे हुए हू।

वीर—मधुर स्वप्न-द्रष्टा वह कौन-सा अन्य व्यक्ति है? क्या वह भी किसी ध्वस्त गणराज्य का उद्धार करना चाहता है?

मित्र—गणराज्य से भी बढकर उसका मधुर स्वप्न है। वह मानव मात्र की समानता स्थापित करना चाहता है, और केवल वाचिक क्षेत्र मे ही नही [illegible] आर्थिक व्यवहार-क्षेत्र मे भी।

वीर—आपका अभिप्राय मज्दक वामदात-पुत्र से है, [illegible] के लिए ही तो लोग उसका नाम लेते है। तुम तो मित्र [illegible] जानते हो।

मित्र—बहुत नजदीक से जानता हू और [illegible] दार समझता हू। वह गाली का पात्र नही है, वह ऐसा महापुरुष है, [illegible] मे बहुत कम पैदा होते है।

सूर्यास्त होने को आया था। इसलिए दोनो मित्रो ने अपने वार्तालाप को समाप्त करके लौटना पसन्द किया। अब वह एक-दूसरे के बहुत नजदीक थे।

२४

श्वेता

हेमन्त ऋतु अपने यौवन पर थी। नहरो का पानी क्षीण हो गया था, और कभी-कभी कई दिनो भूमि पर श्वेत हिम की चादर बिछी रहती थी। मित्रवर्मा अब कवात् के प्रासाद मे नही रहता था, यद्यपि उसे हर दूसरे-तीसरे अपने मित्र के पास जाना पडता था। कवात् भी अकेला नही था, क्योकि सियावख्श अब आ चुका था, और वह उसीके प्रासाद मे रहता था। मित्रवर्मा ने नगर से बाहर एक उद्यान-भवन को अपने लिए पसन्द किया था। यद्यपि हिम ऋतु के कारण इस वक्त उद्यान सूखी लकडियो का जगल-सा मालूम होता था। वीर यौधेय के परामर्श से ही यह उद्यान लिया गया था, उसका भी निवास पास मे था। अब दोनो मित्र दिन मे कई घण्टे इकट्ठा रहते थे। मित्रवर्मा कभी मज्दक के मधुर स्वप्न की बातें करता, कभी बुद्ध के उपदेश और दर्शन की चर्चा छेडता, कभी उन सारी घटनाओ का वर्णन करता, जिनके भीतर से उसे गुजरना पडा। वह स्वप्नदर्शी था, वीर यौधेय भी उसी तरह का एक स्वप्नदर्शी था। मित्रवर्मा ने यद्यपि वेकार समझ के तोरमान से अधिक घनिष्टता नही की, किन्तु वह कवात् के मुख से इस भारतीय तरुण की प्रशसा सुन चुका था, और यह भी जानता था, कि वह उसी पल्लव-कुल का है, जो शकवश की एक शाखा थी जिसके साथ उसके अपने वश का भी सबध है। अधिक न मिलने-जुलने पर भी वह मित्रवर्मा की खबर लिया करता था। अपना विशेष स्नेह प्रकट करने के लिए तोरमान ने एक विदेशी दासी भी मित्रवर्मा की सेवा मे भेज दी थी।

वह किस देश से आई है, इसे समझना कितने ही समय तक मित्रवर्मा के लिए मुश्किल था। सकला (श्वेताव) नाम का यद्यपि शक शब्द से सबध मालूम हो रहा था, किन्तु वह उन शको से सबध नही रखती थी, जिनका कि उसे ज्ञान था। पहले ही दिन उस तरुणी को देखने से वह प्रभावित हुआ था। वह स्वस्थ,

के पास विजय का कौन-सा मत्र है। उससे भी अधिक यह, कि जिस वक्त हूण-सिंहासन लडखडाने लगे, उस वक्त यौधेय की मुक्ति का ध्वजा खडा किया जाए। मैं नही चाहता, कि तुम्हारे रहस्य को तुम्हारे ही मुह से खुलवाऊ, किन्तु इतना अवश्य कहना चाहता हू, यदि मैं उस समय कही आसपास होऊ, तो मेरी सेवाए तुम्हारे साथ होगी।

वीर—मैंने यौधेयो से भी ऐसे उत्साह के शब्द नही सुने। मेरा हृदय कितना आनन्द अनुभव कर रहा है, इसका अनुमान खुद कर सकते हो। अभी तो यह स्वप्न है, अभी तो तोरमान के शासन मे कही निर्बलता देखने मे नही आती। वह भोग के जीवन को पसन्द करता है, किन्तु उसी सीमा तक जिसमे कि वह उसके शासक और सैनिक के कर्तव्य मे बाधा नही हो। उसके मिहिरकुल मे भी अभी वे व्यसन दिखलाई नही पड रहे हैं, जो पतनोन्मुख राजवश के कुमारो मे देखे जाते हैं। थोडा-सा स्वभाव उसका क्रोधी अवश्य है, किन्तु इतने से हूण-वश का ह्रास नही होगा।

मित्र—राजवश अपनी निर्बलता से भी नष्ट होते हैं और शत्रुओ की अधिक सबलता से भी। हमे अभी इसके बारे मे भविष्यवाणी करने का अधिकार इससे अधिक नही है, कि सभी समय एक-सा नही जाता। अभी तो यौधेयो का प्रश्न सामने नही आया है। न जाने कब तुम्हारे स्वप्न को सामने आने का अवसर मिलेगा। तब तक मैं एक-दूसरे ही मधुर स्वप्न-द्रष्टा की आग मे पैर रखे हुए हू।

वीर—मधुर स्वप्न-द्रष्टा वह कौन-सा धन्य व्यक्ति है? क्या वह भी किसी ध्वस्त गणराज्य का उद्धार करना चाहता है?

मित्र—गणराज्य से भी बढकर उसका मधुर स्वप्न है। वह मानव मात्र की समानता स्थापित करना चाहता है, और केवल वाचिक क्षेत्र मे ही नही बल्कि [का]यिक व्यवहार-क्षेत्र मे भी।

वीर—आपका अभिप्राय मज्दक वामदात-पुत्र से है, लेकिन गालिया देने के लिए ही तो लोग उसका नाम लेते हैं। तुम तो मित्र, उसे बहुत नजदीक से जानते हो।

मित्र—बहुत नजदीक से जानता हू और अपने को उसके स्वप्न का साझीदार समझता हू। वह गाली का पात्र नही है, वह ऐसा महान् पुरुष है, जैसे दुनिया मे बहुत कम पैदा होते है।

सूर्यास्त होने को आया था। इसलिए दोनो मित्रो ने अपने वार्तालाप को समाप्त करके लौटना पसन्द किया। अब वह एक दूसरे के बहुत नज़दीक थे।

२४

श्वेता

हेमन्त ऋतु अपने यौवन पर थी। नहरो का पानी क्षीण हो गया था, और कभी-कभी कई दिनो भूमि पर श्वेत हिम की चादर बिछी रहती थी। मित्रवर्मा अब कवात् के प्रासाद मे नही रहता था, यद्यपि उसे हर दूसरे-तीसरे अपने मित्र के पास जाना पडता था। कवात् भी अकेला नहीं था, क्योकि सियावख्श अब आ चुका था, और वह उसीके प्रासाद मे रहता था। मित्रवर्मा ने नगर से बाहर एक उद्यान-भवन को अपने लिए पसन्द किया था। यद्यपि हिम ऋतु के कारण इस वक्त उद्यान सूखी लकडियो का जगल-सा मालूम होता था। वीर यौधेय के परामर्श से ही यह उद्यान लिया गया था, उसका भी निवास पास मे था। अब दोनो मित्र दिन मे कई घण्टे इकट्ठा रहते थे। मित्रवर्मा कभी मज्दक के मधुर स्वप्न की बाते करता, कभी बुद्ध के उपदेश और दर्शन की चर्चा छेडता, कभी उन सारी घटनाओ का वर्णन करता, जिनके भीतर से उसे गुजरना पडा। वह स्वप्नदर्शी था, वीर यौधेय भी उसी तरह का एक स्वप्नदर्शी था। मित्रवर्मा ने यद्यपि बेकार समझ के तोरमान से अधिक घनिष्टता नही की, किन्तु वह कवात् के मुख से इस भारतीय तरुण की प्रशसा सुन चुका था, और यह भी जानता था, कि वह उसी पल्लव-वश का है, जो शकवश की एक शाखा थी जिसके साथ उसके अपने वश का भी सबध है। अधिक न मिलने-जुलने पर भी वह मित्रवर्मा की खबर लिया करता था। अपना विशेष स्नेह प्रकट करने के लिए तोरमान ने एक विदेशी दासी को मित्रवर्मा की सेवा मे भेज दी थी।

वह किस देश से आई है, इसे समझना कितने ही समय तक मित्रवर्मा के लिए मुश्किल था। सकला (स्वाव) नाम का यद्यपि शक शब्द से सबद्ध मालूम हो रहा था, किन्तु वह उन शको से सबध नही रखती थी, जिनका कि उसे ज्ञान था। पहले ही दिन उस तरुणी को देखने से वह प्रभावित हुआ था। वह स्वस्थ,

अस्थूल, लम्बी तरुणी थी। पहिले-पहल जब मित्रवर्मा ने उसके बालो को पीछे से देखा, तो समझा कि वह श्वेतकेशा वृद्धा है, उसके केश ऐसे ही श्वेत थे, यद्यपि वह वृद्धो के केशो से अधिक चमकीले और रग मे अतर रखते थे। उसकी आखें नील सरोज-सी और वर्ण आरक्त शख समान था। तरुणी पहले अत्यत सकोचशीला थी और अत्यावश्यक होने पर ही बोलती थी। स्वामी की दृष्टि पडने पर वह प्रसन्न वदन होने की कोशिश करती थी, किंतु भीतर के भावो को भापकर मित्रवर्मा को आश्चर्य नही होता था। वह जानता था, कि वह भी युद्ध और दासता की सतायी मानवी है। मित्रवर्मा ने समझा था कि शायद वह दूसरे देश से इस देश मे अचिर आई होने से यहा की भाषा से अपरिचित है। भाषा से बहुपरिचित तो वह नही थी, किंतु उसे अल्पपरिचित भी नही कहा जा सकता था। मित्रवर्मा अपने सभी परिचारको की भाति उस तरुणी के साथ भी बहुत सहृदयता का बर्ताव करता था। वस्तुत मित्रवर्मा को दास-प्रथा से चिढ होने के कारण वह अपने दासो और परिचारको के साथ अधिकतर समानता मे बर्तने की कोशिश करता था। दूसरे दास और परिचारक उतने दूर के न थे। शुभ्र केशा तरुणी के साथ उसका व्यवहार और भी सहानुभूतिपूर्ण था।

अधिक दिन नही बीते कि श्वेता की शका-सकोच दूर हो गई। यद्यपि वह हर एक प्रश्न का उत्तर देती थी, किंतु पहले कितने ही महीनो तक वह स्वय कुछ करने या जानने की कोशिश नही करती थी। जाडो मे मित्रवर्मा के पास खाली समय बहुत रहता था। जब बर्फ पडने लगती, तो बाहर जाने की इच्छा नही होती थी, और बर्फ के पिघलने पर उछलती कीचड मे चलने को किसकी हिम्मत होती? नगर और आसपास के स्थानो को वह देख चुका था। तोरमान ने एक नई आस्थानशाला बनवाई थी, जिसे देखने वह वीर यौधेय के साथ एक बार गया था। तोरमान को अपने राजप्रासाद के प्रकोष्ठो को चित्रित करने तथा दूसरी कला की चीजो से सजाने का बडा शौक था और आस्थान-मडप की दीवारो को तो उसने चित्रशाला का रूप दे दिया था। यहा तस्पोन् के अपादान से भी सुन्दर चित्र थे, जिनमे अधिकतर भारतीय चित्रकारो के बनाए हुए थे। तोरमान का भारतीय चित्रकला के प्रति विशेष पक्षपात था। हेफ्ताल अपने को कुषाणो का उत्तराधिकारी ही नही रक्त-सम्बन्धी भी समझते थे। कुषाणो का भारतीय कला के प्रति बहुत प्रेम था। जान पडता है, उसीसे हेफ्ताल-राजा भी प्रभावित हुआ

था। अब मित्रवर्मा के लिए वैसी दर्शनीय चीजे नही रह गई थी।

वाहर वर्फ पड रही थी और उसके फाहे अपेक्षाकृत वडे आकार मे हवा मे तैरते हुए गिर रहे थे। श्वेतकेशा एक स्तम्भ के सहारे खडी, उस दृश्य को वडे ध्यान से देख रही थी। अब उमे उतना सकोच नही था। मित्रवर्मा भी उसके पास पहुच के हिम के फाहो को देखने लगा। तरुणी की आखो मे चमक अधिक देखकर उसने पूछा—श्वेता, तुम्हे यह हिमपात वहुत अच्छा लगता है?

—हा, और विशेषकर ये वडे-वडे फाहे आकाश से नीचे गिरते बहुत सुन्दर मालूम होते हैं। हमारे देश मे वर्फ वहुत पडती है, फिर तरुण-तरुणिया लकडी के विशाल पादत्राणो को पैरो मे डाल डडो के सहारे वर्फ पर खूब फिसलते हैं, उनके सिर और कपडो को यह सद्य-पतित हिम पड के बिलकुल श्वेत वना देती है, हम इसे वहुत आनन्द की वात समझते हैं।

मित्रवर्मा ने तरुणी के विकसित वदन पर दृष्टि डालते हुए कहा—तुम भी उसी तरह हिमतल पर खेलती रही होगी, तुम्हारे केशो को भी उसी तरह यह हिम के फाहे ढाक देते होगे, आज वही स्मरण आ रहा है?

—हा, मुझे वही स्मरण आ रहा है।

—और हसरत भी आ रही है। तुम्हारे जन्म-ग्राम या जन्म-नगर मे तुम्हारी समवयस्काए इस हिमपात के समय पादत्राणों पर फिसल रही होगी, और तुम यहा अपरिचित देश मे अपरिचित-सी दासता की इस एकान्तता के दु ख को भोग रही हो!

श्वेता की आखो मे आसू भर आए, जिन्हे उसने छिपाने के लिए दृष्टि नीचे कर ली, किन्तु दो मुक्ताफल जैसे अश्रुविन्दु कपोलो पर ढुलक ही पडे।

मित्रवर्मा ने खिन्न स्वर मे कहा—क्षमा करना श्वेता, मैं तुम्हारे किसी मर्म पर चोट करने का कारण हुआ, किन्तु यह प्रकरण ही हमे उधर ले गया।

—क्षमा की कोई वात नही है स्वामी, वैसे भी मैं अकेली आसू वहाती, लेकिन यहा आपकी समवेदना मुझे उस खेद को हल्का करने मे सहायक हो रही है। अपनी मातृभूमि तथा अपने स्वजन घर पर रहते भी प्रिय लगते हैं, और अति दूर जाने पर वे कितने प्रिय मालूम होते हैं, इसे वतलाना मुश्किल है।

मित्रवर्मा ने और भी सहानुभूति दिखलाने की आवश्यकता समझ के कहा—तुम्हारा देश वहुत दूर होगा। वह कितना दूर है, कौन-सी दिशा मे?

—दिशा, यहा से पश्चिम मे हमारा देश है, कितनी दूर है यह नहीं कह सकती। मैं अपनी जन्मभूमि से सीधे यहा नही पहुची।

—कैसे यहा आई ?

—बहुत क्रूर कथा है—यह कहते हुए तरुणी का कठ रुद्ध हो गया। मित्रवर्मा ने उसके पीठ पर लटकते चीनाशुक जैसे मसृण केशो पर हाथ फेरते कहा —तुम्हे कष्ट हो रहा है। इतने दूर देश मे अपनी इच्छा से नही आई होगी, बलात्, अपहरण करके तुम्हें यहा लाए होगे।

श्वेता ने सिर पर बधे वस्त्र-खड की कोर मे आखो को पोछते कहा—मुझे अवार पकड ले आए, यह छ साल की बात है। अवारो का राज्य बहुत विशाल है, वह चीन के सीमात से लेकर हमारे देश की सीमात तक फैला हुआ है। अवारो ने हमारे देश पर आक्रमण किया। मेरा पिता अपने जनो का सरदार था, उसके नेतृत्व मे पुरुषो ने ही नही, स्त्रियो ने भी शत्रु का मुकाबला किया, लेकिन अवार टिड्डी-दल की तरह टूट पडे। हमारे दुर्ग का पतन हुआ। बहुत-से पुरुष वीरगति को प्राप्त हुए, कितनी ही स्त्रियो ने रण में प्राण त्यागा और कितनो ने आग मे जल के। अवारो ने हमारे नगर को लूटा और अल्पवयस्क सुन्दर और स्वस्थ तरुणिया जो मिल सकी उन्हे बन्दी बना के ले आए। मैं भी उन्ही अभागिनो मे थी। अवार-खाकान के पास मुझे भेंट के तौर पर पेश किया गया। वहा चार बरस अवार-रानी की परिचारिका रही। दासी थी, और मेरे साथ वैसा वर्ताव होना ही चाहिए था। फिर मुझे यहा हेपताल-राजा के पास .८ के तौर पर भेज दिया गया। दो बरस से यहा हू। अब मेरा सौभाग्य .ि ् कि राजा ने आपके चरणो मे मुझे डाल दिया है। मैं आपके स्वभाव ` परख गई हू, दूसरे परिचारको के साथ भी आपका वर्ताव अकृत्रिम रूपेण हानु ूतिपूर्ण होता है। मैं तो अपने को और भी अनुगृहीत पाती हू।

मित्रवर्मा—तो तुम्हारे घर मे कोई नही रह गए होंगे ?

—पिता वीरगति को प्राप्त हुए, मा आत्मसम्मान के ख्याल से आग मे जल मरी, मैं उस वक्त १२-१३ साल की थी, मुझे उतना ज्ञान नही था अथवा प्राण अधिक प्रिय थे, जो मैंने आत्महत्या नही की। की होती तो पिछले छ वर्षो के दु सह दिन देखने को न मिलते। मेरे जन्म-नगर मे अब कौन रह गया, इसका मुझे पता नही। क्या जाने प्राण बचा के भागे लोग कहा गए ? अब कहा उनमें

भेंट होने की सम्भावना है ? किसीसे मिलने की सम्भावना नही है, मुझे जब वह स्मृतिया आती हैं, तो हृदय फटने लगता है। निर्जीव एक-एक वस्तु आखो के सामने घूमने लगती थी, इसी वक्त हिम के इन फाहो ने सुप्त स्मृति को उत्तेजित कर दिया।

मित्रवर्मा—अवारो का राज बहुत विशाल है ?

—बहुत विशाल। आरपार होने मे ५-६ महीने लगते हैं। कहते हैं, चीन दुनिया के एक छोर पर है।

मित्र—पृथ्वी विशाल है। तुम्हारे देश से पश्चिम और भी न जाने कहा तक चली गई है। अवारो मे तुम्हे बहुत कष्ट हुआ होगा ? वैसे जिस परिस्थिति मे तुम हो, उनमे कष्ट न होना ही आश्चर्य की बात होगी।

—विशेष तौर से कष्ट देने की किसीने कोशिश नही की। जिस वक्त जलते जन्म-नगर मे मुझे पकड़ा था, उस वक्त अधिक रोते रहने के कारण भटो ने कुछ चपत लगाए थे। रोना बन्द हो गया, किन्तु मेरी हिचकी बध गई। उसके बाद जो भी दुख हुआ, उसे अधिकतर मानसिक कहना चाहिए। आप जानते ही हैं, दास अपने शरीर का भी स्वामी नही हैं। हा, अवार अधिक जगली से मालूम हुए। हेफ्ताल तो रूप-रग मे हमारी जाति के साधारण लोगो की तरह ही मालूम होते हैं। अपरिचित या शत्रु के लिए वह रूखे-से हैं, किन्तु परिचित हो जाने पर उनका वर्ताव बहुत ही सुन्दर होता है। अवार हेफ्तालो की अपेक्षा क्रूर हैं, अनावश्यक क्रूर वह सकते हैं। हेफ्ताल जान पडता है जान-बूझ कर घुमन्तू रहना चाहते हैं, जैसे हमारा राजा जान-बूझ के अच्छे प्रासादो के रहते भी शिविर मे समय-समय पर वास करता है।

मित्र—हा, अवार हूण हैं न ?

हूणो की क्रूरता दिगन्त विख्यात है। अवारो का कोई स्थायी प्रासाद नही होता। हेफ्ताल भी घोडो से प्रेम करते हैं, हमारे कुल मे भी घोडे के साथ लोगो का बहुत स्नेह रहता है। अवार भी इस बात म हमसे मिलते हैं। मैं यह नही कहती कि अवार के अन्त पुर मे कोई शिष्टाचार नही बरता जाता। अवार अंत पुर मे वस्तुत सभ्य देशो की कितनी ही कुमारिया भी थी। चाहे हेफ्ताल अवारो को कितना ही वर्वर समझते हो, किन्तु उनकी शक्ति का लोहा मानने के लिए तैयार हैं। अवार-खाकान चीन को अपने अधीन समझता है, हेफ्तालो को

भी उसी दृष्टि से देखता है। उनके यहा सौन्दर्य की परख भी दूसरी है।

—श्वेता, तुम तो इस देश और हमारे देश की परख मे भी सुन्दरी हो, अवार क्या तुम्हे सुन्दरी नही समझते थे ?

—उनके लिए सुन्दरी नारी वह है, जिसकी आखे अर्द्धमुकुलित दोनो कोनो पर ऊपर को उठी हो। उनका वही आकार है, जिसे आपने यहा शिक वशजो मे देखा है।

अर्थात् नाक छोटी और चिपटी, मुह आकार से अधिक बडा, गाल की हड्डिया उभरी हुई इत्यादि।

श्वेता—हा, ऐसी ही को वे सुन्दर मानते हैं। मुझे कुरूप समझ करके उन्होने हेफ्ताल-राजा के पास नही भेजा, बल्कि अपने ससुर के लिए मुझे एक अच्छी भेंट समझकर भेजा। जानती हू, कि अब तो मैं पिजडें मे बद्ध पक्षी हू, मेरे बाहर निकलने का कोई रास्ता नही, फडफडाना बेकार है। तो भी पुरानी स्मृतिया कभी-कभी जग आती हैं। यद्यपि आपके पास आने पर मुझे अधिक दुखी होने की जरूरत नही। ये असाधारण बडे-बडे हिम के फाहे न गिरते होते तो आज मेरी दुखद स्मृतिया न जागृत होती।

अब भी श्वेता का चेहरा मुरझाया हुआ था। मित्रवर्मा और भी अधिक सहानुभूति दिखलाना चाहता था, किन्तु उसकी घाव का मलहम वह कहा से लाता ?

× × × ×

कवात् तोरमान का साला ही नही था, बल्कि पिता की जमानत के तौर र जब वह तोरमान के दरबार मे रहा था, उस समय वह उससे मिहिरकुल जैसा स्नेह रखता था। अब वह यद्यपि ईरान का शाहशाह हो चुका था, किन्तु तोरमान के पास आने और कुछ महीने रहने के बाद उसकी फिर उसी तरह घनिष्ठता बढ गई। तोरमान कभी कवात् के बिना भोजन न करता। आयु मे पुत्र के समान होने के कारण तोरमान उसे समकक्ष राजा के समान मानने मे असमर्थ था और कवात् भी उसके साथ कभी पुत्र की तरह और कभी धृष्ट मित्र की तरह व्यवहार करता था। कवात् को सारे राजोचित् भोग यहा सुलभ थे, और तोरमान के जीवन भर तक, बल्कि मिहिरकुल की घनिष्ठ मित्रता के कारण उसके शासनकाल तक वह उसी तरह रह सकता था। लेकिन, कवात् सासानी

सिंहासन को भुला नही सकता था। वह भूलना भी चाहता, तो सियावख्श स्मरण दिलाने के लिए पास मे था। कवात् का अपने बहनोई से यही आग्रह था, कि वह तख्त को फिर से लौटाने के लिए सैनिक सहायता करे।

तोरमान इतनी जल्दी निश्चय नही कर सकता था। सासानी शक्ति का उसे परिचय था। अवारो से भी उसे डर था, क्योकि यदि उसकी निर्बलता का इन्हे पता लगता, तो चाहे कितनी ही महार्घ भेट प्रति वर्ष आ रही हो, वह उसी पर सतोष नही करते, उधर हिन्दू देश मे भी उसके प्रतिद्वन्द्वी गुप्त अशक्त नही थे। सब देखकर तोरमान अभी समय को अनुकूल नही समझ रहा था, इसलिए वह आशा देते हुए अभी टालना चाहता था। साथ ही कवात् को पूरा सतोष भी देना चाहता था, इसलिए उसने अपनी पुत्री तथा पीरोजदुख्त रानी की कन्या से कवात् के ब्याहने का प्रस्ताव किया। राजा के साला होने से दामाद होना और भी अधिक सन्निकटता का परिचायक था। कवात् अपनी सहोदरा की कन्या के सौन्दर्य पर पहिले ही से मुग्ध था। शायद ही कोई दिन हो, जब कि वह उसके पास घटो आकर नही रहती हो। सियावख्श और मित्रवर्मा की भी सहमति थी, बहिन का तो बहुत आग्रह था ही। इस प्रकार एक दिन इस भाजी की कवात् की पत्नियो मे एक और वृद्धि हुई।

जाडा बीत गया, बर्फ पिघल गई। सूखी मरुभूमि का हृदय भी एक बार सिक्त हो गया, यद्यपि नही कहा जा सकता, कि उसकी प्यास बुझ पाई। मरुस्थल के मैदान पर भी हरी-हरी घास दिखलाई पडने लगी। दूर से देखने पर कही-कही वह हरित शस्य क्षेत्र-सी दीख पडती थी। राजधानी (बरख्शा) के वृक्षो तथा उद्यानो के बारे मे पूछना ही क्या था। सूखे वृक्षो की सूखी शाखाए कुड्मलित हो उठी, फिर फूल के रूप मे कोमल किसलय निकल आए, और कितनो ने पुष्पमय वस्त्र धारण किया। प्रकृति उल्लसित हो उठी। वसन्त की सुषमा चारो तरफ दिखाई देने लगी। कवात् मित्रवर्मा और सियावख्श को वसन्त का आनन्द पूरी तौर से मिल रहा था, किन्तु वह साथ ही गिनते जाते थे, कि यहा आए कितने मास हो गए। ईरान मे गुप्त सूचनाए आती रहती थी, जिनसे तस्पोन् और दूसरे भागो की बातें मालूम होती रहती थी। कवात् अब भी तोरमान से आग्रह करता था, किन्तु साथ ही वह अब भी जानता था, कि पहले उसे अपने सबसे सबल शत्रु कनारग गुज्नस्पदात से भुगतना पडेगा, जिसकी

शक्ति उसमे छिपी नही थी, अब भी वह तस्पोन् के सिंहासन का सबमे दृढ स्तम्भ था।

२५
अभियान (४९९ ई०)

कवात् के उतावलेपन को तोरमान पसद नही करता था। किन्तु उसकी भी भीतर से यही इच्छा थी, कि जितनी जल्दी हो उसका अपना आदमी—दामाद सासानी सिंहासन पर बैठे। कवात् जब-तब एकात या पानगोष्ठी या दूसरे समय तोरमान के सामने उन्ही बातो को फिर मे दोहरा के चुप हो जाता था। उसका जीवन अपने अत पुर के आमोद-प्रमोद मे बीतता था। मित्रवर्मा कभी-कभी अपनी सम्मति देकर अपना कर्त्तव्य पूरा कर लेता था, लेकिन तोरमान-राजधानी मे जिसे तस्पोन् को अपने हाथ मे करने की सबमे ज्यादा चिन्ता थी, वह था सियावस्श। सचमुच ही वह अपनी आयु से कहीं अधिक चतुर था, सैनिक विद्या और अस्त्र-शस्त्र चलाने मे वह जितना निपुण था, राजनीति मे भी उसका उतना ही अधिकार था। तोरमान भी उसकी बात को बडे ध्यान मे सुनता था। यद्यपि सासानी राजधानी से वह बहुत दूर था, लेकिन शाहशाह के ... के भीतर क्या हो रहा है, उसका जितना ज्ञान उसको था, उतना तस्पोन् वचुर्क फरमादार को भी नही था। धर्म के नाम पर भडका के विरोधियो ने ...त् को सिंहासन से उतारने मे सफलता पाई थी, किन्तु थोडे ही समय मे ...गो ने अपनी आखो देखा, कि किस तरह कवात् को राज्य से वचित किया ...। अब सारे सासानी राज्य मे लूट मची हुई थी। मत्रियो और सेनापतियो से लेकर साधारण देहक कत्‌खुदा तक लोगो को नोच रहे थे। कही कोई देखने वाला नही था। हर नगर और हर गाव अधेर नगरी बना हुआ था। शायद ही कोई उच्च कर्मचारी था, जो इस लूट-खसोट से लाभ न उठा रहा हो। सियावस्श को अयरान के सभी भागो से समाचार मिल रहे थे। लोगो के नाक मे दम था। सभी चाहते थे, कि जामास्प का राज्य किस तरह खतम हो।

अयरान और रोमको की पुरानी दुश्मनी थी ही, गामास्प के शासन को

निवल देखकर रोमक भी पश्चिम से ताक लगाए हुए थे, इसीलिए पश्चिमी सीमात की रक्षा के लिए भी सैनिक तैयारी की आवश्यकता थी। उत्तर मे काकेशश पार के हूण कवीले जब तब लूट-मार करने के लिए भीतर घुस आते थे। भीतरी और वाहरी कमजोरियो को देखकर सियावख्श ने सलाह दी, कि यही समय आक्रमण करने का है। अब की पनगोष्ठी मे तोरमान के साथ कवात् ने बहुत जोर देकर कहा—आप मेरी सहायता नही करना चाहते। कितने दिनो तक मैं यहा रोटी तोडता रहूगा? यदि गामास्प की सेना से डरते हैं, तो मुझसे स्पष्ट कह दीजिए।

तोरमान—कवात् तुम समझ रहे हो, कि मैं तुमसे प्यार नही करता। मैं तुम्हारी भलाई के लिए कह रहा था। मैंने अपने आदमी अयरान मे ही नही छोड रखे हैं, वल्कि हूणो और रोमको के वारे मे भी पता लगाया है।

कवात्—पता लगाते दो वर्ष होने को आए। अयरान मे हमारे अनुयायी दिन पर दिन निर्वल होते जा रहे हैं, हो सकता है लोग धीरे-धीरे हमे भूल जाए।

तोरमान—मैंने वहाना करने के लिए अपने चरो को सर्वत्र नही भेजा। अब तुम्हे प्रसन्नता होनी चाहिए, कि जैसी परिस्थिति की मैं प्रतीक्षा कर रहा था, वह आ गई है। अयरान की सेना पश्चिम, उत्तर, पूरब सभी सीमातो मे बिखरी हुई है, क्योकि सभी जगह से आक्रमण होने का डर है।

कवात—और आपको यह भी मालूम होगा, कि गज्नस्पदात उतना वलवान और प्रभावशाली नही रहा यद्यपि अभी भी अयरान के भीतर कोई उसका मुकावला नही कर सकता, किंतु भीतर ही भीतर वैमनस्य वहुत वढ गया है।

तोरमान—तुम्हे ज्यादा समझाने की आवश्यकता नही है। तुम्हारे कहने से पहले ही मैंने तैयारी शुरू कर दी है। राजधानी मे अधिक सेना नही है, क्योकि यहा सेना का प्रदर्शन शत्रु को सजग करने का कारण होता, यहा भी तो अयरान के आदमी मौजूद हैं। सेना की सख्या कितनी होनी चाहिए, इसपर भी मैंने सोचा है और सियावख्श से भी परामर्श किया है। मैं तुम्हे कहूगा, कि सियावख्श के रूप मे तुमने एक वहुत ही विश्वासपात्र सेनानायक पाया है। उसमे राजनीतिक और सैनिक दोनो प्रकार की सूझ कूट-कूटकर भरी हुई है। मुझे उम्मीद है, तुम उसकी कीमत समझोगे।

कवात् का सियावरुश पर अभिमान था, इसलिए अपने ससुर के मुह से उसकी प्रशसा सुनकर उसे बडी प्रसन्नता हुई। जाडो का अत होते समय उसका मन वहुत उदास रहता था। आज इस खुशखबरी को सुनकर वह वहुत प्रसन्न हो गया। उसकी वहिन और स्त्री ने कितनी कोशिश की थी, कि कवात् के मुह पर हसी की रेखा दिखलाई पडे, किन्तु मदिरा के नशे मे कभी-कभी वेमन की हसी के अतिरिक्त उन्हे कवात् कभी प्रसन्न मुख नही दिखलाई पडा। आज कवात् अपने शयन-कक्ष मे जाने पर बार बार तोरमान-दुहिता का अतृप्त हो गाढालिगन करता रहा, उसके चेहरे पर मदिरा की लाली नही, प्रसन्नता की किरणें छाई हुई थी। राजकन्या ने प्रमुदित होकर पूछा—दयित, मुझे बडी खुशी है, कि आज तुम्हें इतना प्रसन्न देख रही हू, यदि कोई आपत्ति न हो, कोई अत्यत रहस्य की वात न हो, तो मुझे भी वतलाओ, इतनी प्रसन्नता का कारण क्या है ?

कवात् ने प्रेयसी का मुख चूमकर कहा—रहस्य की वात है, किन्तु तुमसे छिपाने की आवश्यकता नही समझता। तुम्हारे पिता सहायता देने को तैयार हैं। अब हमे अयरान की राजधानी की ओर चलना है।

राजकुमारी वात करते हुए कवात् की प्रसन्नता को और कई गुना बढी देखकर रोम-रोम से पुलकित हो उसके हृदय मे अतर्लीन होती हुई-सी अपने रेशम जैसे कोमल और तप्त-काचन-ततु जैसे चमकते केशजालो को कवात् के कपोलो से सलग्न करते हुए वोली—प्रियतम, मेरे लिए यह वडे आनन्द की बात है। [illegible] देखने के लिए मैं उतावली हू।

× × × ×

वसत का अभी-अभी आरम्भ हो रहा था। अभी उद्यान के वृक्षो मे पत्ते नहीं आए थे, लेकिन सर्दी कम हो गई थी। वक्षु की कृश धारा अभी वहुत बढी नही थी। तोरमान की वाहिनी का अतिम भाग इस समय नदी पार हो चुका था। तोरमान की सीमा पर सासानी क्षत्रप कनारग गज्नस्पदात गफलत मे नही था, क्योकि उसे मालूम था कि उसका शिकार कवात इसी तरफ हूणो के राज्य मे है। वह यह भी समझता था, कि तोरमान की कन्या से व्याह करके कवात् वहा आराम का जीवन विताने के लिए नहीं गया है। गज्नस्पदात अब्रहरशहर (खुरासान) का कनारग ही नही था, बल्कि सारे सासानी राज्य

की जिम्मेवारी उसके ऊपर थी। वह जानता था, कि अयरान के लिए तोरमान जैसा जबर्दस्त प्रतिद्वन्दी दूसरा नही है। लेकिन पश्चिम और उत्तर के शत्रुओ को भी वह अवहेलना की दृष्टि से नही देख सकता था। उसने तोरमान के भारतीय प्रतिद्वन्दी गुप्तो से भी गुप्त सबध स्थापित किया था और उत्तर के शत्रुओ अवारो को भी भडकाने मे कोई कसर उठा नही रखी थी। दोनो की ओर से जो सूचनाए मिली थी, उनसे कनारग को आवश्यकता से अधिक सतोष हो गया था।

तोरमान ने क्वात् की सहायता के लिए तीस हजार सेना देनी स्वीकार की थी। यह सेना दो साल तक अयरान जीतकर वहा शाति स्थापित करने के लिए भेजी जा रही थी। आवश्यकता पडने पर तोरमान स्वय अपनी बडी सेना लेकर पीछे मदद करने के लिए मौजूद था। सलाह हुई थी, कि कनारग पर पूरब और उत्तर दोनो तरफ से आक्रमण किया जाए। पूरब के आक्रमण का केन्द्र बाह्लीक (बलख) और उत्तर मे मर्व था। सियावक्श केवल तोरमान की ही सेना के भरोसे बैठा हुआ नही था, उसने अपने विश्वासपात्र आदमियो को आयरान के भीतर भी सजग कर रखा था, उनमे कितने ही पूर्वी सीमात के नगरो मे फैले हुए थे। अन्दर्जगर मज्दक के अनुयायी भी चुपचाप तैयारी मे लगे हुए थे। क्वात् के गद्दी से उतरने के बाद जिस तरह सामतो और कर्मचारियो ने दोनो हाथो से लूट मचा रखी थी और वह खुल्लमखुल्ला न्याय की अवहेलना कर रहे थे, उसके कारण लोगो मे असतोष की मात्रा बहुत बढ गई थी। पहिले से ही विजयी हूण-सेना के साथ कवात् के देश मे आने की अफवाहें फैल रही थी।

कवात् का सबसे शक्तिशाली और भयकर शत्रु गज्नस्पदात मुकाबिले के लिए तैयार था। गज्नस्पदात से लडने मे तोरमान अपनी जितनी सेना दे सकता था, उतनी मदद रोमक क्वात् की नही कर सकते थे। रोमको को जहा अपने देश से सीमात पर सेना पहुचाने मे काफी समय की आवश्यकता होती, वहा तोरमान पीछे ही पीछे आ रहा था। यदि पहिली मुठभेड में फैसला अपने पक्ष मे नही हुआ, तो भी कोई चिन्ता की बात नही थी। तोरमान सोग्द, तुषार और हिन्दू देश तक की सेना को वहा पहुचा सकता था। तोरमान की सेना मे रणनिपुण हेफ्ताल सवार थे, जो उत्तर के दूसरे घुमन्तुओ की भाति घोड़े पर

चढे-चढे बाण चला सकते थे। उसने कवात् को सैकड़ो सैनिक हाथी दिए थे। आर उत्तरी भारत का शासक होने के कारण तोरमान के लिए हाथियों की कमी नही थी। युवराज मिहिरकुल स्वय सेना का सचालन कर रहा था। पहिले युद्ध मे उसे अपने बाल-मित्र की व्यक्तिगत तौर से सहायता करनी थी। वीर यौधेय को किसी ने नही कहा, किन्तु मित्रवर्मा के उदाहरण को देखकर केवल उसीकी भाति मधुर स्वप्न मे सहायता करने के विचार से अपने हज़ार यौधेयो के साथ वह भी था।

वाह्लीक से आए चरो द्वारा हूण-सेना की तैयारी की सूचना कनारग को बराबर मिल रही थी, किन्तु पूर्व दिशा मे सैनिक तैयारी बहुत कुछ खुल्लम-खुल्ला हो रही थी। साधारण वाणिज्य-मार्ग भी उधर से था, इसलिए भी वहा की खबरे आसानी से मिला करती थी। गजनस्पदात भी यही सभव समझता था, कि आक्रमण वाह्लीक की ओर से होगा। उधर के रास्ते यद्यपि अधिक पहाडी थे, किन्तु पशुओ और आदमियो के चारा-पानी की उतनी कठिनाई नही थी। उत्तर के रास्ते मे सेना को दो बडी-बडी मरुभूमिया पार करनी पडती। लेकिन, उसका यह विचार भ्रमपूर्ण निकला। सख्या मे तो नही, किन्तु बल मे सबसे जबर्दस्त सेना उत्तर की ओर से आ रही थी।

सेना सीमात के पास पहुची। कवात् ने अपने आदमियो से कहा—"जो ।ज मेरे कार्य मे सबसे आगे रहेगा, उसे मैं अबहरशहर का कनारग बनाऊगा।" ।त् का यह वचन देना उचित नही था, क्योकि अयरानी नियम के अनुसार हा के सभी राजकीय पद भिन्न-भिन्न सामन्ती वशो के लिए नियत थे। कनारग . पद गजनस्पदात के वश मे परम्परागत था। यह हो नही सकता था, कि उस किसी दूसरे खानदान के आदमी को दिया जाए। सयोग से इस युद्ध मे आतुर, गुन्दपत नामक तरुण ने सबसे अधिक वीरता दिखलाई और वह गजनस्पदात के वश का भी था। गजनस्पदात को अन्त मे मालूम हुआ, कि शत्रु का सबसे प्रचण्ड आक्रमण उत्तर मे हो रहा है, इसलिए वह उस सीमान्त की ओर रोकने के लिए गया। यद्यपि उसने युद्ध मे बडी वीरता दिखलाई, लेकिन शत्रु सख्या और सैनिक बल दोनो मे अधिक था। युद्ध मे लडते-लडते वह काम आया। अयरानी सेना तितर-बितर हो गई, और कितने ही सैनिक सीधे कवात् के झडे के नीचे चले गए। इस पहली ही मुठभेड ने अबहरशहर ही नही दिहमगान तक के भू-भाग के भाग्य का

फैसला कर दिया। आतुर गुन्दपत को सारे अवहरशहर का कनारग बनाया गया और सियावस्श को अर्तस्तारान सालार (महासेनापति) का पद दिया गया। कवात् की यह विजय साधारण विजय नही थी। इस विजय के बाद ही उसे कनारग की जमा की हुई सारी सेना और सैनिक-सामग्री प्राप्त हो गई। कवात् ने जो राज-घोषणा निकाली, उससे वन्दक (दास), मजूर, कम्मी, शिल्पी, किसान सभी प्रसन्न हुए, जिनके ऊपर कि कवात् के निकलने के बाद पहले जैसा ही जुल्म होने लगा था। साधारण व्यापारी और स्वतन्त्र किसान भी सामन्तो और उच्च राजकर्मचारियो के उत्पीडन से अब आराम की सास लेने लगे। इस प्रकार देश की भारी जनता कवात् के पक्ष मे हो गई चार वर्षो से देरेस्तदीन के अनुयायियो पर जो बीत रही थी, जिसके लाखो आदमी निरपराध बुरी मौत से मारे गए थे, वह अब फिर प्रकट हो गया। अवहरशहर तथा दिहमगान मे रवतपट सभी जगह देखने मे आने लगे।

कवात् अपने पुराने मित्रो और नये सहायको के साथ विजयोत्सव मनाते एक देहकान (ग्रामीण) की चौपाल मे बैठा था। लेकिन अब उसकी यह बैठक वह बैठक नही थी जिसे पिछले वर्षो मे देखा गया था। अब फिर तस्पोन् दरबार शुरू हो गया था, और दरबारी सासानी मर्यादा को पालन करने मे बहुत सजग थे। युद्ध-क्षेत्र मे विजय के साथ ही बादशाह कवात् को घोडे पर देखकर लोग जय-जयकार कर रहे थे, और अपने कवच शिरस्त्राण, ढाल, तलवार और भाले को धारण किए दो पंक्तियो मे खडे सैनिक शाह के आते ही ढाल को शाह के सामने फैलाकर अपने सिर को उसपर झुकाकर वंदना कर रहे थे।

कवात् को प्रसन्न होना ही चाहिए था, क्योकि आज की विजय उसके लिए असाधारण विजय थी। आज वह केवल गजनस्पदात को पराजित करने मे सफल नही हुआ था, बल्कि अपनी तीन चौथाई विजय-यात्रा समाप्त कर चुका था। अयरानी सेना बिलकुल उत्साहहीन हो गई थी, क्योकि वह अधर्म युद्ध कर रही थी। आज की पराजय की खबर तस्पोन् मे देर से पहुचने वाली थी, लेकिन खबर पहुचने पर वहा शत्रु मर्माहत होगे, इसे आसानी से समझा जा सकता था। वस्तुत अब यदि कवात् तोरमान की सेना को लौटा भी देता, तो भी जो अयरानी सेना इस समय कवात् के साथ हो गई थी, और जितने विश्वासपात्र सैनिक उसके पास आ गए थे, उनकी मदद से वह तस्पोन् तक अपना विजय-डका बजा सकता

था। यद्यपि अब भी कितने ही विस्पोह्र अपनी सेना के साथ रास्ते मे मुकाबिला करने के लिए तैयार थे, लेकिन उनका सरदार गज्नस्पदात खत्म हो चुका था, वह अपने को अनाथ-सा समझने लगे थे।

कवात् ने अपनी नीजि गोष्ठी मे हर्षातिरेक प्रदर्शित करते हुए कहा—हमारा सबसे बडा शत्रु आज निहित हुआ, हमे आशा नही थी कि गज्नस्पदात पहली ही मुठभेड मे इतनी जल्दी खत्म हो जायगा।

सियावख्श—ख्रताय पातेख्शाह, मेरा भी यही ख्याल था, कि सीमान्त से राजधानी तक वह पाच-छ टक्कर से कम नही लेगा, लेकिन उसके अत्याचारो के कारण सेना का विश्वास पहले से ही डिग चुका था, और हमने पहिला मोर्चा मार लिया।

मित्रवर्मा—निस्सन्देह सबसे बडा मोर्चा मार लिया, किन्तु अभी भी तस्पोन् देश के दूसरे छोर पर है, शत्रु को कभी निर्बल नही समझना चाहिए।

कवात् ने अपने मित्र मिहिरकुल को चुप देखकर कहा—युवराज आप नही कुछ बोल रहे हैं।

मिहिरकुल—मेरे बोलने की ही बातें तो यहा कही जा रही हैं। पिता महाराज ने प्रथम युद्ध तक ही मे मुझे सम्मिलित होने की आज्ञा दी थी, और वह समाप्त हो चुका। मुझे राजधानी लौटना होगा, किन्तु इस अफसोस के साथ कि एक बार भी हृदय खोलकर युद्ध मे लडने का मुझे अवसर नही मिला।

कवात्—युवराज, आपने ही तो सेना के सबसे बडे भाग का सचालन किया।

मिहिर—सचालन किया, लेकिन हमारी वाहिनी तो युद्ध मे अभी पूरी तरह सम्मिलित भी नही हो सकी थी, कि कनारग ने युद्ध को बर्खास्त कर दिया। मेरी बडी इच्छा है कि आगे तस्पोन् तक चलू, किन्तु पिता महाराज का शासन बहुत कठोर होता है।

कवात्—महाराज की आज्ञा का उल्लघन करना अच्छा नही है और दूसरे सबसे बडा काम जो करना था वह युवराज के नेतृत्व मे हो चुका। युवराज के स्नेह और सहायता को मैं भूल नही सकता।

मिहिर—हम दोनो वही पुराने वाल मित्र हैं, यहा किसको भूलना हैं और कौन भूलने वाला है।

पानगोष्ठी और अधिक समय तक चलती, किन्तु आज इतने बडे महत्त्व-पूर्ण विजय का प्रथम दिन होने पर भी कवात् को अपने प्रिय मित्र मिहिरकुल के अगले ही दिन अलग होने का इतना खेद था, कि वह रात्रि के अन्तिम पहर तक वहा बैठा नही रह सका।

२६

कुमार-लाभ

"क्या नाम रखा है, दुस्त ?"—तीन साल मे ही सारे भूरे केश श्वेत हो गए, मज्दक ने वसन्त के खिले गुलाबो की क्यारियो मे तितलियो के पीछे दौडते एक गुलाब जैसे शिशु की ओर देखते हुए एक तरुणी से पूछा।

—अभी नाम नही रखा है मेरे अन्दर्जगर (गुरु)। इसका पिता ही आकर नाम रखेगा, यही सोचकर नाम नही रखा। लेकिन आप तो इसके पिता के भी अन्दर्जगर हैं, आप ही क्यो न कोई नाम रख दें—तरुणी ने कहा।

मज्दक ने अपने मृदु हास से सारे मुखमडल को भासित करते हुए कहा—बडा सुदर बालक है।

—और बडा नटखट भी। अभी तीसरा बरस चल रहा है, किन्तु किसी बात के लिए हठ कर देता है, तो उसे छोडता नही।

—मेधावी बालक है। इसका नाम भी इसके अनुरूप होना चाहिए।

—आप क्या नाम पसन्द करते हैं ?

—पिता को ही नाम रखने दें। अब तो वह यहा पहुचने ही वाले हैं।

—मैं तो समझती हू अन्दर्जगर का दिया नाम वह भी पसन्द करेंगे—तरुणी ने उनके शिशु-सदृश भोले किन्तु तेजस्वी मुख और चमकीली आखो की ओर देखते हुए कहा—हमारे अन्दर्जगर, आपके बारे मे क्या-क्या नही सुनती थी। मेरे सगे सम्बन्धी ऐसा बतलाते थे, मानो आप मनुष्य नही भेडिया या खूख्वार श्वापद हैं।

—और मैं तुझे कैसा मालूम होता हू, दुस्त ?

—मुझे तो आप मेरे बच्चे से भी कोमल जान पडते हैं। और दो

दिन मे मेरा बच्चा आपकी गोद छोडना नही चाहता। फिर कोई पत्ती नोचे ला रहा है।

रक्त कपोलो पर अपनी प्रसन्नता और दातो की द्युति को प्रतिभासित करता हुआ शिशु कुछ हरी पत्तियो को हाथ मे लिए दौडा-दौडा आकर अन्दर्जगर की गोद मे चढ पत्तो को उनके हाथ मे देते हुए बडी प्रसन्नता प्रकट करने लगा। अन्दर्जगर ने उसके कोमल सुनहले बालो पर हाथ फेरते हुए पुचकारा, जिसका उत्तर दिए बिना वह फिर उतरकर दूसरी ओर दौड पड़ा।

—शिशु कितने भोले और कोमल हृदय के होते हैं। वह भूमि तक न पहुची वर्षा की बूदो की भाति निर्मल हैं, जिन्हे धरती मटमैली बना देती है। स्वच्छ स्फटिक-शिला पर पडी बूदें नही मलिन होती, वैसे ही यदि सयानो की मलिनता से उन्हें बचाया जा सके, तो मनुष्य मलिन नही हो सकता—अन्दर्जगर ने अपने सारे ध्यान को शिशु की चेष्टाओ पर लगाए हुए कहा।

—मैंने तो आप के बारे मे सदा निन्दा के ही शब्द सुने थे, और अब सामने देखने पर मुझे उलटा मालूम होता है। हमारे धर्म मे दुरुस्त (दारोगा झूठ) को महापाप कहा गया है, किन्तु फिर भी लोग सफेद को काला कहने के लिए तैयार हैं। मुझे तो यह देखकर और भी आश्चर्य होता है, कि जो लोग मज्दक का नाम सुनकर थूकते थे, आज वह उनकी खुशामद के लिए सबकुछ करने को तैयार हैं।

—क्योकि अब पासा पलट गया है। कवात् और मियाबख्श विजयी के तौर पर अयरान मे प्रवेश कर रहे हैं। तीन वर्षों के भयकर अत्याचारो से जन-साधारण त्राहि-त्राहि करने लगे और आज उन्ही की सहायता से कवात् फिर अयरान का शाहशाह बनने जा रहा है।

—मैं तो समझती थी, कि कलके शत्रुओ के खानदान मे कोई नामलेवा नही रह जाएगा। किन्तु, जो लोग आपके अनुयायियो के खून के प्यासे थे उनके प्रति भी आपकी उदारता अद्भुत है।

—मानव और पशु मे अन्तर होना चाहिए दुस्त, अबा होकर बदला लेना पशु का काम है। अकारण भी उपकार करने के लिए तैयार रहना मनुष्य का काम है। वैर को वैर से नही जीता जा सकता, अवैर से ही वैर को जीता जा सकता है, मनुष्य बदलता है और जडमूल से बदलता है, उसे अच्छी दिशा मे

बदलने का अवसर मिलना चाहिए। मार डालना तो आसान काम है। मुझे अफसोस है कि मैं कल के शत्रुओ के प्राणो को बचाने के लिए हर जगह पहुच नही सकता। तो भी मैं और मेरे साथी पूरा प्रयत्न कर रहे है कि भूलो को फिर से रास्ता पाने का अवसर दिया जाए।

—आप मुझसे अधिक जानते हैं। मैं तो आपके सामने एक छोटी बच्ची हू किन्तु मैं नही समझती, कि सभी आदमियो को बदला जा सकता है। कितने ही मनुष्य साप जैसे कुटिल और विषधर हैं, वे कभी अपने स्वभाव को नही छोड़ेंगे। विशेषकर सभ्रान्त वर्ग मे तो मानव-हृदय का बहुत अभाव है। आज वह जानते हैं कि बामदात्—गोह्र का वरदहस्त रहने पर हम कवात् की कोपाग्नि मे नही जलेंगे, इसलिए वह अन्दर्जगर को ढाल की तरह इस्तेमाल कर रहे है। दूसरे की बात क्या कहू, मेरा पिता जो साधारण-सा कत्स्वताय (ग्राम-पति) है, वह भी अन्दर्जगर को फूटी आखो नही देखता था और कुछ समय पहिले यदि जान पाए होता, तो आपके सिर को कटवाकर तस्पोन् भेजे बिना नही रहता। लेकिन आज वह अन्दर्जगर के चरणो मे आखें बिछाता है।

—धन की माया ऐसी ही चीज है। यह फरिश्तो को भी शैतान बना देती है। इसीलिए हमारे दीन के पुरस्कर्ताओ ने कहा—"जब तक धन मे समानता नही होगी, तब तक मनुष्य-मनुष्य मे भ्रातृ-भाव नही स्थापित हो सकता।"

—तो अन्दर्जगर मनुष्य-मनुष्य मे भ्रातृभाव स्थापित करने के लिए धन मे समानता करना चाहते हैं?

—परिवार मे नही देखती, जब तक धन मे समानता रखी जाती है, तब तक परिवार शान्ति और सुख से एक होकर रहता है। विषमता के आते ही परिवार बिखर जाता है, सबके पैर उखड जाते है और उन्हे फिर से जमाने मे समय लगता है।

—तो देरेस्तदीन धन को कहा लूटना चाहता है?

आपके शत्रु कहते है, कि मज्दकी दूसरो का धन लूटना चाहते हैं?

—हम विश्व को एक परिवार बनाना चाहते हैं दुस्त, धन मे समानता स्थापित करने के कारण कुछ लोगो को कष्ट होगा, यह हम जानते है। उस कष्ट को हम कम से कम करने का प्रयत्न करते हैं। यदि बहुत जनो के हित-सुख के लिए कुछ आदमियो को थोड़ा-सा कष्ट भी हो, तो उसे सहन करना चाहिए।

देखा नही, कवात् उसी के कारण सिंहासन से वचित हुआ, सियावख्श अपने वैभव को छोडकर मारा-मारा फिरता रहा।

—और वह हिन्दू तरुण ?

—हा, मित्रवर्मा, वह भी देश से दूर आकर यहा हमारे आग-पानी मे एक साथ हो रहा है। जिसके हृदय को मानवता ने त्याग नही दिया, वह अवश्य मानव मात्र के हित के लिए थोडा-सा कष्ट सहन करने को तैयार होगा।

—लेकिन धनका लोभ मानव मे सर्वत्र देखा जाता है, यह उसका स्वभाव-सा बन गया है, उसका परिवर्तन करना आसान काम नहीं है।

—नही दुस्त, यह मानव का स्वभाव नही है। मानव के लिए अपने जीवन धारण की सामग्री को ही तो धन कहते हैं ? मनुष्य धन-उत्पादन की वाछा करें, धन बर्बाद करने से अपना हाथ रोके, यह बुरा नही है, किन्तु सुख इसमे हैं, कि धन का उपयोग सब मिलकर करें। यदि जीवनोपयोग की सारी सामग्री सुलभ हो जाए, तो धन-लोभ मनुष्य का स्वभाव नही बनेगा। पथ्य रखना साधारण-सी चीज है, यदि आदत मे डाल लें तो वह कोई कठिन वस्तु नहीं है। कुपथ्य सारी बीमारियो की जड है।

—लेकिन सदा पथ्य का आश्रय लेना सबके लिए सुकर नही है।

—सब लोग करने लगे तो वह सुकर है। आदमी देखादेखी बहुत-सी बातें करने लगता है। हम जिस विश्व भ्रातृभाव को स्थापित करना चाहते हैं, वह एक क आचरण से नही स्थापित हो सकता। लेकिन, यदि हम ऐसा समाज बना लें, जिसमे उसका आचरण स्वेच्छापूर्वक होने लगे, तो कोई मनुष्य समाज के विरुद्ध जाने को तैयार नही होगा। मैंने अनुभव से देखा है। जिस गाव के सारे नर-नारी देरेस्तदीन पर आरूढ़ हैं, वहा मेरा-तेरा का भाव तक नही रह जाता। ऐसे गावो के छोटे-छोटे बच्चे भी जन्म से जिन बातो को आचरण मे देखते हैं, उनको पकड लेते हैं। उनको समता का ससार स्वाभाविक मालूम होता है और विषमता का ससार देखकर आश्चर्य।

सचमुच ही दो दिन पहले अन्दर्जगर के आने पर नवानदुस्त को जब मालूम हुआ, कि यही पुरुष कवात् का गुरु है, इसी के कारण सारे अयरान मे खलबली मची हुई है, तो उसके मुख को देखकर, यद्यपि उसे भय का कोई कारण मालूम नही होता था, किन्तु मन विश्वास करने को तैयार नही होता। अन्दर्जगर ने जिस

स्वाभाविक रीति से उसके बच्चे को अपना लिया और एक ही दिन मे वह वर्षो का परिचित बन गया, वस्तुत उसी ने पहिले पहल नवानदुख्त को अन्दर्जगर के नजदीक जाने की प्रेरणा दी। गज्नस्पदात् की पराजय और कवात् की विजय का समाचार उसे एक सप्ताह पहिले मिल गया था और उस विजय के कारण जिस तरह दिहवगान तक के सारे ग्राम और नगर कवात् के लिए अपने उत्पीडक अधिकारियो को भगाकर पहिले ही से स्वागत की तैयारी कर ली थी, उसी तरह अवहरशहर (नेशापोरने शाहपोह्र) भी शाह की अगवानी के लिए तैयार था कत्स्वताय यदि कवात् को जामाता न समझता तो उसे भी घर छोडकर भागने की तैयारी करनी पडती। लोग भी जानते थे, कि उसके घर मे शाह कवात् की स्त्री ही नही, एक पुत्र भी है। आज कवात् के आने की प्रतीक्षा हो रही थी। कत्स्वताय का महल सजाया गया था। वसन्त ने उद्यान-सज्जा मे बड़ी सहायता की थी। कितने ही वृक्षो पर पत्तो के कुड्मल फूटे हुए थे और कितनो की शाखाए फूलो से ढकी थी। नवानदुख्त ने अपनी प्रतीक्षा की न जल्दी कटने वाली घडियो को बिताने के लिए अन्दर्जगर से बात शुरू की थी, किन्तु बीच-बीच मे बच्चे के खेल के साथ उनके सहृदयता-पूर्ण आलाप को सुनकर इतनी तन्मय हो गई थी, कि उसे समय का पता उसी समय लगा, जब कि सदेश-वाहक दूत दरवाजे पर आए, घर के नौकरो मे सरगरमी दिखाई पडी। यह पता लगने मे देर नही लगी, कि शाह नगर-द्वार पर पहुच चुका है, क्योकि बाजो की तुमुल ध्वनि से सारा नगर गूज रहा था।

कत्स्वताय के महल मे चारो ओर हेफ्ताल और अयरानी अश्वारोहियो तथा सैनिको का कडा पहरा था। महल के उद्यान मे शाही तम्बू पडा हुआ था। परिचारक परिचारिकाओ की एक पल्टन जमा हो गई थी, जिनसे महल भरा मालूम होता था। शाह के लिए वह प्रकोष्ठ छोटा था, जिसमे उसने तीन बरस पहिले इस तरुण सुन्दरी ने प्रणय-लीला की थी। इस समय उसके पास मित्रवर्मा और सियावस्था के अतिरिक्त नवानदुख्त अपने बच्चे के साथ बैठी थी। चारो के सामने मणिजटित चषक और लाल मदिरा पडी थी। उसी से वह अपना पुनर्मिलन मना रहे थे।

बच्चा मा की गोद से उठकर बाहर जाना चाहता था। नवानदुख्त उसे रोकने की कोशिश करती कह रही थी—"यह तेरे पिता हैं, जा अपनी पिता की

गोद मे" किन्तु, वच्चा वाहर जाने की ज़िद कर रहा था। कवात् अपने इस सुन्दर और स्वस्थ पुत्र को देखकर वहुत प्रसन्न था। उसके मन मे पुत्र-स्पर्श की इच्छा जग रही थी। उसके हाथ वढाकर वुलाने पर भी वच्चा नही आया। मियावख्श ने कहा—फूलो मे तितली पकडना चाहता होगा।

नवानदुख्त—हा, रग-विरगी तितलियो को वहुत पसन्द करता है और फूलो को भी, किन्तु सवसे अधिक इसका प्रेम हो गया है अन्दर्जगर के साथ।

कवात्—अन्दर्जगर के साथ ?

नवानदुख्त—हा, इतना हिल-मिल गया है, कि उनकी गोद नही छोडना चाहता।

तीनो साथियो को दिहवगान याद आ रहा था। मित्रवर्मा ने कहा—अन्दर्जगर, पृथ्वी पर एक नये स्वर्ग का स्वप्न देख रहे हैं। हमने उनके उस गाव मे स्वर्ग की झाकी पाई थी। अन्दर्जगर के स्वर्ग मे सवसे अधिक सुख वच्चो को है, यह भी हमने देखा। वहा वच्चे मारे नही जाते थे, डराए-धमकाए नही जाते। तव भी वह कितने सुशील होते हैं। अन्दर्जगर कहते भी थे, हम अपने स्वर्ग की केवल दागवेल लगा रहे हैं, असली स्वर्ग का निर्माण तो यही वच्चे करेंगे।

मियावख्श—अन्दर्जगर के शान्त हसमुख दीप्तिमान मुखमडल को देखते ही आदमी का मन उनकी ओर आकृष्ट हो जाता है। वाणी तो उनकी मानो मधुमिश्रित है, स्वर कितना कर्णप्रिय है, शव्द कितने सुन्दर होते हैं।

नवानदुख्त—और उनके साथ जितना ही अधिक दिन रहने का अवसर मलता है, उतना ही वह और भी मधुर मालूम होता होगा।

कवात्—तो यह हमारे अन्दर्जगर के पास जाना चाहता है ? जाने दो। ु के सत्सगो मे रह गया तो वास्तविक मानव वन जाएगा। हम तुम उसे वैसा नही वना सकते।

वच्चे ने अन्दर्जगर की वात सुनी और फिर वह मा की गोद छोडकर—"मैं अन्दर्जगर के पास जाऊगा" कहता कमरे से वाहर चला गया।

मित्रवर्मा ने लडके की ओर दृष्टि लगाए कहा—सत्सग का वहुत लाभ होता है, विशेपकर हमारे अन्दर्जगर जैसे महापुरुप के सत्सग का। लेकिन कभी-कभी वडे से वडा सत्सग भी आदमी की प्रकृति को वदलने मे सफल नही होता। वुद्ध के सत्सग मे देवदत्त कितने ही वर्षों तक रहा और उसका असर भी अनन्य

पडा, किन्तु अत मे देवदत्त की असली प्रकृति ने सत्सग के प्रभाव को दबा दिया। लेकिन मैं समझता हू, हमारा शाहपोह्ल देवदत्त से दूसरी प्रकृति का होगा।

सियावस्श ने कुछ-कुछ सोचते हुए पूछ लिया—और आपने हमारे शाहपोह्ल का नाम क्या रखा है।

नवानदुस्त बड़े सकोच से सिमटी-सी वहा बैठी थी, यद्यपि पुत्र-स्नेह ने कुछ बोलने के लिए बाध्य किया था, लेकिन उसका सकोच उसे दबाए था। सियावस्श के प्रश्न के उत्तर मे उसने शरमाते हुए कह दिया—अभी नाम नही रखा है। अन्दर्जगर से कहा कि आप ही रख दें, आपका रखा नाम सबको पसन्द आएगा।

सियावस्श—तो उन्होंने क्या नाम दिया ?

कवात्—हा, अन्दर्जगर का दिया नाम हम सबको पसन्द आएगा।

नवानदुस्त—उन्होने कहा कि पिता नाम देगा।

मित्रवर्मा—शाहशाह को शाह पोह्ल का नाम रखना चाहिए।

कवात्—मित्र, तुम तो मेरे तेरे के सबसे अधिक विरोधी हो, इस विषय में हमारे अन्दर्जगर से भी चार पग आगे जाना चाहते हो, फिर तुम क्यो मुझसे ऐसा आग्रह करते हो ? तुम्ही न एक नाम रख दो।

मित्रवर्मा—मुझे अयरानी नाम थोडे ही मालूम है, नही तो मैं ही रख देता।

सियावस्श ने कुछ सोचने के बाद कहा—खुसरव (खुसरो) कैसा रहेगा ?

कवात्—बहुत सुन्दर नाम है, कहो नवानदुस्त, तुम्हे पसन्द आया ?

नवानदुस्त—मेरे पातेस्शाह (स्वामी) को जो पसन्द होगा, वह मुझे भी पसन्द आएगा।

कवात्—तो आज से हमारे पुत्र का नाम खुसरो खा रहा।

× × ×

नवानदुस्त और कवात् अपने शयनकक्ष मे थे। वहा दोनो छोर पर काच के अन्दर जलती दो मोमबत्तिया घर के निविड अधकार को दूर करने की कोशिश कर रही थी। कवात् वैसे होता तो, एक गाव के सरदार की लडकी को क्यो इतना महत्त्व देता, लेकिन उसको मालूम था, कि उसी लडकी के कारण उसके पिता ने अपने को खतरे मे डालकर उसके काम मे सहायता की। सियावस्श के

सीमांत पर भेजे दूत उसके विना अपने कार्य मे उतने सफल नही हो सकते थे और सबसे बढकर चीज थी, नवानदुख्त का यह पुत्र, जिसे अपनी आखो से देखकर वह और हर्षोत्फुल्ल हुआ। नवानदुख्त जानती थी, कि अयरान के शाहशाह के महल मे उस जैसी हजारो चेरिया और दासिया है। उसे यह भी विश्वास नही था, कि कवात् को वह प्रथम मिलन की रात याद भी होगी। वह आज अपने भाग्य को सराहती थी। सकोच और लज्जा के भाव से दबी हुई भी भीतर मे वह बहुत प्रसन्न थी। उसको इसका भी खेद हो रहा था, कि उसने बच्चे के बारे मे जो खुलकर बातें की थी, वह शाहशाह की दृष्टि मे अनुचित तो नही जची।

कवात् ने पलग के एक ओर सकुची सिमटी बैठी नवानदुख्त को अपने पास खीचकर मुख चूमते हुए कहा—क्यो मुह पर ताला ही लगा रहेगा क्या ?

नवानदुख्त ने सोए से जग जाने की तरह कहा—नही, मेरे पातेख्शाह मुझे भय लगता है।

—भय लगता है, क्योकि मैं तुम्हारा पातेख्शाह हू। लेकिन मैं तुम्हारा पातेख्शाह ही नही कुछ और भी हू।

—वही तो विश्वास नही होता, राजा और आग के बहुत नजदीक नही जाना चाहिए।

कवात् ने नवानदुख्त को अक मे लेकर गाढालिगन करते हुए बार-बार फिर मुख चूमकर कहा—मेरी बम्बिश्न (रानी), लेकिन हम दोनो तो समीप नही एक हो चुके है। अब डरने से लाभ क्या ?

शाहशाह के लिए ऐसा होना कोई नई बात नही है। लेकिन मैं तो अपने पातेख्शाह की चाकरजन भी रहने को तैयार हू। मुझे और कुछ नही चाहिए, मैं केवल श्रीचरणो की सेवा चाहती हू।

कवात् ने और विश्वास बढाने के लिए अनेक बार चूमते हुए कहा—नही, चाकरजन नही, तू मेरी बम्बिश्न है।

—लेकिन सुना है, पातेख्शाह की बम्बिश्न होने के लिए विस्पोह्रो की कन्या होना आवश्यक है। मैं तो एक साधारण ग्रामपति की कन्या हू, मेरा वैसा भाग्य कहा ?

—लेकिन इन सब नियमो से शाहशाह ऊपर है। तू मेरी बम्बिश्न है और खुसरो मेरा शाहपोह्र (शाहपुत्र)। क्या मेरी बात पर तेरा विश्वास नही है ?

नवानदुरत ने हर्षाश्रु बहाते हुए रुक-रुक के बडे नम्र स्वर मे कहा—चाकरजन का भी स्थान मिलता, तो मैं अपने को धन्य समझती। मुझे पातेख्शाह का अनुग्रह जिस मात्रा मे मिला, उसे देखकर अपने भाग्य पर विश्वास नही होता, मेरे त्वताय के वचन पर विश्वास नही होता।

कवात् ने नवानदुरत् के चिबुक पर एक हाथ की अगुलियो को रखकर दूसरे हाथ से उसके सुनहले केशो को सहलाते हुए कहा—मेरा भाग्य भी सो गया था प्यारी। उसके ही जागने की कौन-सी आशा थी? एक बार सिहासन से उतारा गया शाह कहा फिर दुबारा उस पर बैठने पाता है? किन्तु खोया सिहासन अब फिर मेरे हाथ मे आ रहा है। मेरा सबसे बडा शत्रु कनारग मारा गया। उसकी सारी सेना खत्म हो चुकी। अभी मैं राजधानी तस्पोन् नही पहुचा, किन्तु मैं समझता हू कि सिहासन मेरी प्रतीक्षा कर रहा है। प्रिये, तुमको मेरे साथ चलना होगा।

नवानदुरत् के चेहरे पर कुछ उदासी छा गई, वह मुह से कुछ न बोल सकी। कवात् ने उसे खीचकर अपनी छाती से लगाते हुए कहा—तुम्हे चलना होगा। बोलो, चलोगी न।

नवानदुरत् के मन मे तरह-तरह के विचार पैदा हो रहे थे। शाहशाह की पत्नी होना उसके लिए कम गर्व की बात नही थी, लेकिन शाहो का रानियो के साथ तीन दिन का प्रेम होता है, फिर वह अन्त पुर की आजन्म बन्दिनी हो जाती हैं, यह बात उसे मालूम थी। वह शीघ्र 'हा' या 'ना' का निश्चय तो नही कर सकती थी। "ना' मे निश्चय करना तो और भी कठिन था, किन्तु वह एक बार सूघकर फेंक दिया गया फूल भी नही बनना चाहती थी। उसने बडे करुण स्वर मे कहा—आपकी आज्ञा मेरे लिए सर्वथा शिरोधार्य है, लेकिन मेरे पातेख्शाह, मेरे त्वताय, मैं अपने मे कोई ऐसा गुण नही पाती, जिससे श्रीचरणो के समीप रहने की अधिकारिणी हो सकू।

कवात् ने नवानदुरत् के अधरो को चूमकर कहा—गुण? तुममे सारे गुण हैं। देखो, यह तुम्हारे पद्मराग जैसे रक्त अधर, यह गुलाब जैसे कोमल आरक्त कपोल, यह मृग जैसे बडे-बडे नयन, यह सुन्दर चिबुक, यह शखाकार ग्रीवा, यह सुनहले रेशम के तारो जैसे केश, यह मोहक उरोज, यह क्षीण कटि—

नवानदुरत् ने मुस्कराते हुए कहा—आप कविता न करें। मैं जानती हू,

इसमे से कोई भी चीज़ शाहशाह के लिए दुर्लभ नही हैं। मेरी जैसी हज़ारो स्त्रिया रनिवास मे भरी पडी हैं, उनमे एक की सख्या और वढाकर आप क्या करेंगे ? रहने दें मुझे यही, पिता के घर मे आपकी मधुर स्मृति लिए बैठी रहूगी।

कवात् ने इस दृढ मनोवल वाली तरुणी के मुस्कराते-मुस्कराते गम्भीर हो गए चेहरे पर दृष्टि रखते सोचा, यह और तरुण सुन्दरियो से भिन्न प्रकार की है। कहा दूसरी सकेत-मात्र पर नाचने के लिए तैयार रहती हैं, और कहा इसे भोग-विलासो से पूर्ण किन्तु सहस्रो नारियो से भरा अन्त पुर पसन्द नही आ रहा है। नवानदुख्त् के अस्पष्ट अस्वीकार ने शाहशाह के आकर्षण को और वढा दिया था। उसने उसके कधे पर हाथ रखते हुए कहा—प्रिये, तुम्हे मैं अन्त पुर की हज़ारो रानियो मे एक नहीं मानूगा। विस्पोह्रो की कन्याओ से भी तुम्हारा प्रेम और सम्मान मेरे हृदय मे अधिक है।

—आपकी सहोदरा सम्विक् और सहोदरा-पुत्री हूणराज-कन्या जैसी और कितनी ही अद्वितीय रूप, कुल, गुण-सम्पन्ना रानिया हैं। मेरी जैसी गवार तरुणी पर आपका स्नेह वडी कृपा है, इसे मैं मानती हू, किन्तु मैं पिता की लाडली पुत्री स्वभाव से कुछ अनम्र-सी हू। डर लगता है, कि मेरे कारण मेरे पातेख्शाह को कोई कष्ट न हो।

कवात् सोच रहा था यह तरुणी देखने मे जितनी सीधी-सादी है, वह उतनी ही सीधी-सादी वस्तुत नही है, इसमे आत्म-गौरव की मात्रा अधिक है। लेकिन एक ऐसी भी नारी मुझे चाहिए। उसने फिर आग्रह करते हुए कहा—नहीं प्यारी, तुम्हे मेरे साथ चलना ही होगा। तुमने कितना सुन्दर पुत्र मुझे दिया है ? तुम्हे मेरी वात स्वीकार करनी पडेगी। मैं वचन देता हू, यदि मेरे वचन का तुम कोई मूल्य समझती हो, कि मैं तुम्हारा सदा ध्यान रखूगा और तुम्हारे तथा तुम्हारे पुत्र के लिए मेरे हृदय मे ऊचा स्थान रहेगा।

—मैं श्रीचरणो मे सबसे नीचा स्थान पाकर भी सतुष्ट रहूगी। मेरा कहना इतना ही था, कि मैं अपने पातेख्शाह के ऊपर बेकार का भार न वनू।

कवात् ने नवानदुख्त को दृढ आलिगन करते हुए मानो अपने हृदय मे डालने का प्रयत्न करते कहा—तो निश्चय रहा, कल तुम्हे पुत्र-सहित राजधानी की ओर रवाना होना है। मुझ पर विश्वास करके तुम घाटे मे नहीं रहोगी, मैं इतना ही कहना चाहता हू।

नवानदुख्त् की आखें सजल हो उठी थी। उसने कवात् के हाथो को अपने हाथो मे लेकर मलते हुए कहा—स्वामी की आज्ञा के उल्लघन का विचार भी मेरे दिल मे नही आ सकता। मैं अपनी अयोग्यता के कारण सकोच कर रही थी। यदि इस अकिंचन जन को आप धूलि से उठाकर ऊपर रखना चाहते हैं, तो मुझे इन्कार नही। मैं सदा स्वामी की सेवा मे रहूगी।

२७

पुन सिंहासन (५०० ई०)

तिक्रा अब भी अपनी उसी मथर गति से चल रही थी, मानो वह अपने आसपास घटित होने वाली घटनाओ से बिल्कुल अपरिचित थी। आखिर तिक्रा के लिए यह नई बात भी तो नही थी। सहस्राब्दियो से वह रक्त स्नान और खुशी मनाने की अभ्यस्त थी। किन्तु तस्पोन् नगरी की निद्रा हराम हो गई थी। कभी उसे कवात् की ओर से प्रतिशोध का भय लगता था। उससे भी बढकर उसकी चिन्ता के कारण थे हेफ्ताल, जिनका उपनाम "श्वेत हूण" उसकी नस-नस मे आतक का सचार कर रहा था। हूणो से क्रूरता मे कम न होने ही के कारण तो इनका नाम श्वेत हूण पडा था। क्या तस्पोन् नगरी को वह लूटकर ही दया दिखलाएगे? यद्यपि वह कवात् की सहायता करने आए थे, किन्तु वह उनका स्वामी नही था। तस्पोन् का वैभव उन्हें लूटने का प्रलोभन देगा ही, और किसी हूण का एक भी रक्तबिंदु-पात सारे नगर को भस्मसात् कर देने का पर्याप्त बहाना होगा। यह भय तस्पोन् के हर वर्ग के हृदय पर छाया हुआ था। जिन्होने कवात् को बाट का भिखारी बनाने मे बढ-चढ के प्रोत्साहन दिया था, उनकी अवस्था तो और भी दयनीय थी। वह किस मुह से कवात् से दया की भिक्षा माग सकते थे? कवात् के मृदु स्वभाव और उससे भी अधिक उसके अन्दर्जगर मज्दक से कभी-कभी उन्हें आशा बधती थी, किन्तु अपनी करनी उन्हें निश्चित होने नही देती थी।

अर्क (प्रासाद-दुर्ग) मे सन्नाटा छाया हुआ था। अभी भी वह आदमियो से शून्य नही था, न उनके यातायात का ही अभाव था, किन्तु वहा की गति निर्जीव गति-सी मालूम होती थी। लोग जिह्वा से नही सास-सकेत द्वारा सो भी कभी-

कभी ही एक-दूसरे को अपने भाव अवगत कराते थे। सभी सशंक थे। प्राणी, पशु तक इस वातावरण से प्रभावित थे। इसी समय श्वेत वेष और श्वेत कूर्चधारी, श्वेत अश्वारूढ महापुरोहित (मगोपतान् मगोपत) आतुरपत परिमित परिचारको के साथ अर्क के भीतर पधारे। द्वारपालो मे कुछ ने वेमन से उनकी वदना की, कितनो ने आखो से बच निकलने की भी कोशिश की। कवात् के निष्कासन मे मगोपतान् मगोपत का अधिक हाथ था, यद्यपि उसके लिए सबसे अधिक बदनाम कनारंग गज्नस्पदात था। "दीन खतरे मे" की घोषणा आतुरपत ने ही की थी, इसी ने अहुरमज्द, अमसास्पदो और इस्तख् की भगवती की दुहाई दिलाई थी। उसका श्वेतारक्त मुखमडल पाडुर हो गया था, किन्तु अभी भी उसमे गम्भीरता दूर नही हुई थी।

अर्क के एक कमरे मे एक छोटा-सा आसन था, जिसपर शाहशाह जामास्प उदास मुख बैठा था। अयरान अस्पाहपत तथा दूसरे राजामात्य पास मे बैठे किसी के आने की बडी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे। मगोपतान् मगोपत के भीतर आते ही, सबकी आखे उसके चेहरे पर जा गढी। साधारण वदना के बाद उसके आसन ग्रहण करते ही जामास्प ने कहा—

आपके आगमन और सम्मति की हम बडी अधीरता से प्रतीक्षा कर रहे है। युद्ध-क्षेत्र कहा है, यह कहना कठिन है, क्योकि गजनस्पदात के निपात के बाद लडने का उत्साह हमारी सेना के हृदय से जाता रहा।

आतुरपत ने अन्यमनस्कता के साथ कहा—लेकिन मुझसे क्या आशा हो ती है? गज्नस्पदात के बाद कवात् और मज्दक के भारी कोप का भाजन ेसिवाय और कौन हो सकता है?

अयरान-अस्पाहपत बोइया ने अधीरता से बीच मे बात काटकर कहा— न बातो से कोई लाभ नही। हम सभी एक नाव मे सवार है। कौन बडा ाधी है, कौन छोटा, इसकी नाप-तोल करना व्यर्थ है। उत्तर के हूणो और पश्चिम के रोमको ने अपनी सैनिक शक्ति को एक क्षेत्र मे लगाने का अवसर हम नही दिया—

सरनखवीरगान महापत को अस्पाहपत की भी बात अप्रासंगिक दिखाई पडी। उसने बात काटते हुए कहा—यह कोई नई चीज नही थी। उत्तर और पश्चिम की ओर ध्यान रखते हुए भी हमने अपनी सेना का बडा भाग हूणो की सीमा पर रखा था। गज्नस्पदात ने आसानी से पराजय और बलिदान नही

स्वीकार किया। अब तो युद्ध नहीं कबात् की विजयोत्सव-यात्रा हो रही है।

जामास्प बात को बिल्कुल बढ़ने देना नही चाहता था। उसने उतावलेपन से कहा—विजय-यात्रा अपने अन्त पर पहुच रही है। तस्पोन् अब दिन नही घटो का रास्ता है हमने तीन दिन व्यर्थ ही बिता दिए। हमारे सामने दो ही रास्ते है देश से भाग जाना या आत्मसमर्पण। मैं आप लोगो की राय जानना चाहता हू। जहा तक मेरा सम्बन्ध है, मैं दोनो के लिए तैयार हू।

—हा, लड़ने का तीसरा रास्ता व्यर्थ है इसे मैं अनुभव करने लगा हू।

शाह और उसके मन्त्रियो को आतुरपत की यह बात कुछ अविश्वसनीय-सी जची। धर्म-युद्ध के सबसे बड़े पक्षपाती मगोपतान् मगोपत को आतुरपत के मुह से इन शब्दो की आशा नही थी। किन्तु उसने अपनी राय उतावलेपन मे नही दी थी यह भी वह जानते थे। आतुरपत ने उनके चेहरे पर अविश्वास की रेखा देखकर कहा—भवितव्यता के सामने सिर झुकाना ही अच्छा है। सफलता की कोई आशा न रहने पर भी निरपराध आदमियो का खून बहाना बुरा है।

—और दीन जो मज़्दकियो के हाथ मे लुप्त हो जाएगा—बोइया ने व्यग के स्वर मे कहा।

—दीन के लोप की बात कहा है? यह तो मगोपतो का बहाना था। क्या कवात्-पोह और उनके आचार्य मानी भी स्पितामा जर्थुस्त्र को नही मानते? क्या वह अहुर्मज़्द की प्रार्थना नहीं करते?—जामास्प ने आतुरपत की चुटकी लेते हुए कहा।

आतुरपत ने सुनी अनसुनी करते हुए कहा—दीन के बारे मे फिर भी कभी बात करने का अवसर आएगा।

जामास्प—तो आत्मसमर्पण और पलायन मे कौन रास्ता आपको ठीक जचता है?

—आत्मसमर्पण हमारे शाहंशाह के लिए अधिक भय का मार्ग है—बोइया ने कहा।

जामास्प—उस भय के लिए मैं तैयार हू। मैं सभी अपराधो को अपने ऊपर लेने को तैयार हू, इसकी परवाह न करें।

बोइया—हमारे शाहंशाह सैनिको के पास जा सकते हैं।

जामास्प—अवसर की प्रतीक्षा करने? नहीं, फिर मैं जूआ खेलना नही

चाहता। इसकी जगह मैं भाई का वन्दी बनना अधिक पसन्द करूगा।

आतुरपत—भाई न आख निकलवाएगा, न वन्दी ही बनाएगा।

वोइया—क्योकि उस समय हमारे पातेख्शाह ने अपने भाई की आखे निकलवाने और प्राणदण्ड देने से इन्कार कर दिया था।

जामास्प—वह कुछ भी करे। मैं सासानी वश को निबल करने मे सहायक नही बनना चाहता।

आतुरपत—मैं भी अपने स्वताय की राय से सहमत हू और अपने लिए भी भागने की नीति नही स्वीकार करता। बुढापे मे इन शुभ्र केशो को लिए दर-दर मारे-मारे फिरने से अपने अयरानी दख्मे मे लेटना ही बेहतर है।

जामास्प—हमे केवल अपने निजी लाभ-हानि की दृष्टि से नही देखना है। युद्ध को किसी रूप मे जारी रखने का अर्थ है हूणो के क्रूर हाथो से तस्पोन् का विध्वस। अपने विध्वस से यदि अपने देश और राजधानी को हम बचा सके, तो इससे बढकर सुकृत नही हो सकता।

हेफ्ताल सैनिक छोटे-मोटे निगमो और नगरो को लूटने से सन्तुष्ट नही थे। उनकी दृष्टि तस्पोन् पर लगी हुई थी। जिनके सम्बन्धियो और कुटुम्बियो को प्राण व धन की क्षति पहुची थी, वह प्रतिशोध की भावना दिल मे छिपाए आजतक प्रतीक्षा कर रहे थे, जिस समय जामास्प के दूत ने पहले-पहल युद्ध के रास्ते को त्यागने का सदेश कवात् के पास पहुचाया, उस समय इन दोनो प्रकार लोगो मे असन्तोष छा गया। अन्तिम समय तक भय था, कि हेफ्ताल सैनिक ५५ हाथ से बाहर हो जाए, यद्यपि प्रतिशोध चाहनेवालो की ज्वाला को शान्त रने मे अन्दर्जगर की शीतल वाणी ने बडा काम किया।

—वैर से वैर हटाया नही जा सकता, बुद्ध का यह वचन बिल्कुल ठीक। प्रतिशोध के चक्के को चलाते जाने से उसका अन्त नही होगा। इसे हमारा अन्त यही अपनी उदार हृदयता को दिखलाकर कर देना चाहिए। यदि दुष्ट के स्वभाव मे परिवर्तन नही किया जा सकता, और आगे वह फिर भय का कारण हो सकता है, तो भी जनकल्याण इसी मे है, कि वैर का बदला प्रीति से लिया जाए, सामूहिक रूपेण प्रतिशोध कभी हितकर नही होता।

शुद्ध राजनीतिक दृष्टि से देखनेवाले व्यक्ति अन्दर्जगर के इन विचारो से सहमत नही हो सकते थे। सियावख्श ने जब देरेस्तदीन के लक्ष्य को सामने रख

हुए उसके ऊपर आनेवाले खतरे का जिक्र किया, तो अन्दर्जगर ने कहा—यदि देरेस्तदीन इतने से कार्यक्षेत्र मे सफल हो सकता है, तो मज्दक और सियावरश अमर तो नही हैं, वह कब तक उसकी रक्षा करेंगे। मैं इस पर विश्वास नही करता, कि हमारे और तुम्हारे अवलम्ब से ही आगे बढने वाला देरेस्तदीन कभी इस धरती मे बद्धमूल हो सकता है। हम तो निमित्त मात्र हैं। हो सकता है, हम भूतल पर समता का राज्य स्थापित करने मे कुछ दूर तक सफल हो जाए और फिर विरोधी शक्तिया उसका ध्वस कर दें, तो क्या उसके साथ ही हमारे सिद्धान्तो और उद्देश्यो का सदा के लिए अन्त हो जाएगा? मेरी धारणा दूसरी ही है। भूख की शान्ति के लिए आहार की आवश्यकता होती है, जाडो मे गरम पोशाक और आहार की जरूरत पडती है, इसी तरह इस दुनिया से दुखो के दूर करने के लिए मनुष्य-मात्र मे समता—भोगो की समता, कामो की समता—स्थापित करना ही एक मार्ग है। विषमता मे मुट्ठी-भर लोग ही सुखी रह सकते हैं और वह मुट्ठी-भर भी निश्चिन्त जीवन नही बिता सकते। विष के डर से हर थाली को सशक दृष्टि से देखते हुए भोजन करना, गुप्त आघात के भय से अनिश्चित शय्याओ की शरण लेना, क्या इने सुखी जीवन कह सकते है? मनुष्य जब भी व्यापक सुख की चिन्ता करेगा, वह इसी निश्चय पर पहुचेगा, कि सबके सुखी होने पर ही हम सुखी रह सकते हैं। मैं और मेरा का ख्याल छोड विश्व को एक कुटुम्ब बना उसमे समता की स्थापना ही सारे रोगो की दवा है। हम आज प्रयत्न कर रहे है, हो सकता है, उसमे सफल न हो पाए। यह भी हो सकता है, कि आनेवाले मधुर-स्वप्नदर्शियो को हमारे तजर्बे का कोई परिचय न हो, तो भी जो सत्य है, वह भूल जाने पर भी फिर प्रकट होगा। हमारी रखी नीव के भी लुप्त हो जाने पर नये हाथ और मस्तिष्क फिर इस काम में लगेंगे, और वह तब तक विश्राम न लेंगे, जब तक वह भव्य प्रासाद नही तैयार हो जाएगा, जिसका निर्माण करना हमारा लक्ष्य था।

जामास्प के आत्मसमर्पण की बात सुनकर तस्पोन्-वासियो का दु स्वप्न दूर हुआ। अपनी भूरी, काली बडी-बडी दाढियो से हेफ्तालो ने नागरिको के मन मे भय का सचार जरूर किया, किन्तु कही शान्ति भग की नौबत नही आई। हाथ बाधकर स्वय बन्दी बनकर आए जामास्प के बन्धनो को कवात् ने अपने हाथो खोल दिया और गद्गद् हो उसे छाती से लगा लिया। लेकिन लोग उस वक्त

हुए उसके ऊपर आनेवाले खतरे का जिक्र किया, तो अन्दर्जगर ने कहा—यदि देरेस्तदीन इतने से कार्यक्षेत्र मे सफल हो सकता है, तो मज्दक और सियावस्श अमर तो नही हैं, वह कब तक उसकी रक्षा करेंगे। मैं इस पर विश्वास नही करता, कि हमारे और तुम्हारे अवलम्ब से ही आगे बढने वाला देरेस्तदीन कभी इस धरती मे बद्धमूल हो सकता है। हम तो निमित्त मात्र हैं। हो सकता है, हम भूतल पर समता का राज्य स्थापित करने मे कुछ दूर तक सफल हो जाए और फिर विरोधी शक्तिया उसका ध्वस कर दें, तो क्या उसके साथ ही हमारे सिद्धान्तो और उद्देश्यो का सदा के लिए अन्त हो जाएगा? मेरी धारणा दूसरी ही है। भूख की शान्ति के लिए आहार की आवश्यकता होती है, जाडो मे गरम पोशाक और आहार की जरूरत पडती है, इसी तरह इस दुनिया से दुखो के दूर करने के लिए मनुष्य-मात्र मे समता—भोगो की समता, कामो की समता—स्थापित करना ही एक मार्ग है। विषमता मे मुट्ठी-भर लोग ही सुखी रह सकते हैं और वह मुट्ठी-भर भी निश्चिन्त जीवन नही बिता सकते। विष के डर से हर थाली को सशक दृष्टि से देखते हुए भोजन करना, गुप्त आघात के भय से अनिश्चित शय्याओ की शरण लेना, क्या इसे सुखी जीवन कह सकते है? मनुष्य जब भी व्यापक सुख की चिन्ता करेगा, वह इसी निश्चय पर पहुचेगा, कि सबके सुखी होने पर ही हम सुखी रह सकते हैं। मैं और मेरा का ख्याल छोड विश्व को एक कुटुम्ब बना उसमे समता की स्थापना ही सारे रोगो की दवा है। हम आज प्रयत्न कर रहे है, हो सकता है, उसमे सफल न हो पाए। यह भी हो सकता है, कि आनेवाले मधुर-स्वप्नदर्शियो को हमारे तजर्बे का कोई परिचय न हो, तो भी जो सत्य है, वह भूल जाने पर भी फिर प्रकट होगा। हमारी रखी नीव के भी लुप्त हो जाने पर नये हाथ और मस्तिष्क फिर इस काम मे लगेंगे, और वह तब तक विश्राम न लेंगे, जब तक वह भव्य प्रासाद नही तैयार हो जाएगा, जिसका निर्माण करना हमारा लक्ष्य था।

जामास्प के आत्मसमर्पण की बात सुनकर तस्पोन्-वासियो का दु स्वप्न दूर हुआ। अपनी भूरी, काली बडी-बडी दाढियो से हेफ्तालो ने नागरिको के मन मे भय का सचार जरूर किया, किन्तु कही शान्ति भग की नौबत नही आई। हाथ बाधकर स्वय बन्दी बनकर आए जामास्प के बन्धनो को कवात् ने अपने हाथो खोल दिया और गद्गद् हो उसे छाती से लगा लिया। लेकिन लोग उस वक्त

हुए उसके ऊपर आनेवाले खतरे का जिक्र किया, तो अन्दर्जगर ने कहा—यदि देरेस्तदीन इतने से कार्यक्षेत्र मे सफल हो सकता है, तो मज्दक और सियावस्श अमर तो नही है, वह कव तक उसकी रक्षा करेगे। मैं इस पर विश्वास नही करता, कि हमारे और तुम्हारे अवलम्ब से ही आगे वढने वाला देरेस्तदीन कभी इस धरती मे वद्धमूल हो सकता है। हम तो निमित्त मात्र हैं। हो सकता है, हम भूतल पर समता का राज्य स्थापित करने मे कुछ दूर तक सफल हो जाए और फिर विरोधी शक्तिया उसका ध्वस कर दें, तो क्या उसके साथ ही हमारे सिद्धान्तो और उद्देश्यो का सदा के लिए अन्त हो जाएगा ? मेरी धारणा दूसरी ही है। भूख की शान्ति के लिए आहार की आवश्यकता होती है, जाडो मे गरम पोशाक और आहार की ज़रूरत पडती है, इसी तरह इस दुनिया से दुखो के दूर करने के लिए मनुष्य-मात्र मे समता—भोगो की समता, कामो की समता—स्थापित करना ही एक मार्ग है। विषमता मे मुट्ठी-भर लोग ही सुखी रह सकते हैं और वह मुट्ठी-भर भी निश्चिन्त जीवन नही विता सकते। विष के डर से हर थाली को सशक दृष्टि से देखते हुए भोजन करना, गुप्त आघात के भय से अनिश्चित शय्याओ की शरण लेना, क्या इसे सुखी जीवन कह सकते हैं ? मनुष्य जव भी व्यापक सुख की चिन्ता करेगा, वह इसी निश्चय पर पहुचेगा, कि सवके सुखी होने पर ही हम सुखी रह सकते हैं। मैं और मेरा का ख्याल छोड विश्व को एक कुटुम्व वना उसमे समता की स्थापना ही सारे रोगो की दवा है। हम आज प्रयत्न कर रहे है, हो सकता है, उसमे सफल न हो पाए। यह भी हो सकता है, कि आनेवाले मधुर-स्वप्नदर्शियो को हमारे तजर्वे का कोई परिचय न हो, तो भी जो सत्य है, वह भूल जाने पर भी फिर प्रकट होगा। हमारी रखी नीव के भी लुप्त हो जाने पर नये हाथ और मस्तिष्क फिर इस काम मे लगेंगे, और वह तव तक विश्राम न लेंगे, जब तक वह भव्य प्रासाद नही तैयार हो जाएगा, जिसका निर्माण करना हमारा लक्ष्य था।

जामास्प के आत्मसमर्पण की वात सुनकर तस्पोन्-वासियो का दु स्वप्न दूर हुआ। अपनी भूरी, काली वडी-वडी दाढियो से हेफ्तालो ने नागरिको के मन मे भय का सचार जरूर किया, किन्तु कही शान्ति भग की नौवत नही आई। हाथ वाधकर स्वय वन्दी वनकर आए जामास्प के वन्धनो को कवात् ने अपने हाथो खोल दिया और गद्गद् हो उसे छाती से लगा लिया। लेकिन लोग उस वक्त

चाहता। इसकी जगह मैं भाई का बन्दी बनना अधिक पसन्द करूगा।

आतुरपत—भाई न आख निकलवाएगा, न बन्दी ही बनाएगा।

वोड्या—क्योकि उस समय हमारे पातेख्शाह ने अपने भाई की आखे निकलवाने और प्राणदण्ड देने से इन्कार कर दिया था।

जामास्प—वह कुछ भी करे। मैं सासानी वश को निर्बल करने मे सहायक नही बनना चाहता।

आतुरपत—मैं भी अपने स्वताय की राय से सहमत हू और अपने लिए भी भागने की नीति नही स्वीकार करता। बुढापे मे इन शुभ्र केशो को लिए दर-दर मारे-मारे फिरने से अपने अयरानी दख्मे मे लेटना ही बेहतर है।

जामास्प—हमे केवल अपने निजी लाभ-हानि की दृष्टि से नहीं देखना है। युद्ध को किसी रूप मे जारी रखने का अर्थ है हूणो के क्रूर हाथो से तस्पोन् का विध्वस। अपने विध्वस से यदि अपने देश और राजधानी को हम बचा सकें, तो इससे बढकर सुकृत नही हो सकता।

हेफ्ताल सैनिक छोटे-मोटे निगमो और नगरो को लूटने मे सन्तुष्ट नही थे। उनकी दृष्टि तस्पोन् पर लगी हुई थी। जिनके सम्बन्धियो और कुटुम्बियो को प्राण व धन की क्षति पहुची थी, वह प्रतिशोध की भावना दिल मे छिपाए आजतक प्रतीक्षा कर रहे थे, जिस समय जामास्प के दूत ने पहले-पहल युद्ध के रास्ते को त्यागने का सदेश कवात् के पास पहुचाया, उस समय इन दोनो प्रकार के लोगो मे असन्तोष छा गया। अन्तिम समय तक भय था, कि हेफ्ताल सैनिक ।।यद हाथ से बाहर हो जाए, यद्यपि प्रतिशोध चाहनेवालो की ज्वाला को शान्त रने मे अन्दर्जगर की शीतल वाणी ने बडा काम किया।

—वैर से वैर हटाया नही जा सकता, बुद्ध का यह वचन बिल्कुल ठीक है। प्रतिशोध के चक्के को चलाते जाने से उसका अन्त नहीं होगा। हमें इसका अन्त यही अपनी उदार हृदयता को दिखलाकर कर देना चाहिए। यदि दुष्ट के स्वभाव मे परिवर्तन नही किया जा सकता, और आगे वह फिर भय का कारण हो सकता है, तो भी जनकल्याण इसी मे है, कि वैर का बदला प्रीति से लिया जाए, सामूहिक रूपेण प्रतिशोध कभी हितकर नही होता।

शुद्ध राजनीतिक दृष्टि से देखनेवाले व्यक्ति अन्दर्जगर के इन विचारो से सहमत नही हो सकते थे। सियाबख्श ने जब देरेस्तदौन के लक्ष्य को सामने रखे

हुए उसके ऊपर आनेवाले खतरे का जिक्र किया, तो अन्दर्जगर ने कहा—यदि देरेस्तदीन इतने से कार्यक्षेत्र मे सफल हो सकता है, तो मज्दक और सियावस्श अमर तो नही हैं, वह कब तक उसकी रक्षा करेगे। मैं इस पर विश्वास नही करता, कि हमारे और तुम्हारे अवलम्ब से ही आगे बढने वाला देरेस्तदीन कभी इस धरती मे बद्धमूल हो सकता है। हम तो निमित्त मात्र हैं। हो सकता है, हम भूतल पर समता का राज्य स्थापित करने मे कुछ दूर तक सफल हो जाए और फिर विरोधी शक्तिया उसका ध्वस कर दें, तो क्या उसके साथ ही हमारे सिद्धान्तो और उद्देश्यो का सदा के लिए अन्त हो जाएगा ? मेरी धारणा दूसरी ही है। भूख की शान्ति के लिए आहार की आवश्यकता होती है, जाडो मे गरम पोशाक और आहार की जरूरत पडती है, इसी तरह इस दुनिया से दुखो के दूर करने के लिए मनुष्य-मात्र मे समता—भोगो की समता, कामो की समता—स्थापित करना ही एक मार्ग है। विषमता मे मुट्ठी-भर लोग ही सुखी रह सकते हैं और वह मुट्ठी-भर भी निश्चिन्त जीवन नही बिता सकते। विष के डर से हर थाली को सशक दृष्टि से देखते हुए भोजन करना, गुप्त आघात के भय से अनिश्चित शय्याओ की शरण लेना, क्या इसे सुखी जीवन कह सकते है ? मनुष्य जब भी व्यापक सुख की चिन्ता करेगा, वह इसी निश्चय पर पहुचेगा, कि सबके सुखी होने पर ही हम सुखी रह सकते है। मैं और मेरा का ख्याल छोड विश्व को एक कुटुम्ब बना उसमे समता की स्थापना ही सारे रोगो की दवा है। हम आज प्रयत्न कर रहे हैं, हो सकता है, उसमें सफल न हो पाए। यह भी हो सकता है, कि आनेवाले मधुर-स्वप्नदर्शियो को हमारे तजर्बे का कोई परिचय न हो, तो भी जो सत्य है, वह भूल जाने पर भी फिर प्रकट होगा। हमारी रखी नीव के भी लुप्त हो जाने पर नये हाथ और मस्तिष्क फिर इस काम मे लगेंगे, और वह तब तक विश्राम न लेंगे, जब तक वह भव्य प्रासाद नही तैयार हो जाएगा, जिसका निर्माण करना हमारा लक्ष्य था।

जामास्प के आत्मसमर्पण की बात सुनकर तस्पोन्-वासियो का दु स्वप्न दूर हुआ। अपनी भूरी, काली बडी-बडी दाढियो से हेफ्तालो ने नागरिको के मन मे भय का सचार जरूर किया, किन्तु कही शान्ति भग की नौबत नही आई। हाथ दाबकर स्वय बन्दी बनकर आए जामास्प के बन्धनो को कवात् ने अपने हाथो खोल दिया और गद्गद् हो उसे छाती से लगा लिया। लेकिन लोग उस बन्ध

चकित हो कवात् की प्रशसा करते नही थकते थे, जब उसने मगोपतान् मगोपत को भी क्षमा कर दिया।

कवात् दूसरी वार सिंहासनरूढ हुआ। अब सारे अयरान मे अखण्ड शान्ति थी, और बलपूर्वक स्थापित की हुई शान्ति नही, स्वेच्छा से आई शान्ति। कुछ स्वार्थों को धक्का लगा, कुछ अत्याचारियो को अपने अत्याचार-क्षेत्र को भी छोडना पडा, तो भी जिन आग की लपटो और खून की नदियो के सारे देश मे प्लावित हो जाने का डर था, वह नही हुआ। कवात् के शासन और अन्दर्जगर के मधुर स्वप्न की स्थापना के लिए इससे अच्छा आरम्भ क्या हो सकता था ?

२८

घटाए (५१६ ई०)

शरद के पाच मासो के बाद वसत भी अब ग्रीष्म मे परिणत हो रहा था। अगूर की लताओ मे उनके पत्ते के समान ही हरे-हरे दानो के गुच्छे लटके हुए थे। सेव के फलो पर हल्की लाली का कही-कही अभी आरम्भ ही हुआ था। फूलो मे गुलाब अपनी शोभा और सुगन्ध को अक्षुण्य बनाए हुए था। कही-कही हरी दूब की क्यारिया हरे मखमल की तरह बिछी हुई थी, जिन पर बैठने मे मखमल जैसा ही कोमल-स्पर्श मालूम होता था। पास मे बहती नहर के तलदर्शी नीले जल के पास की इन क्यारियो पर बैठना एक स्वय आनन्द का वाहक था। सन्ध्या के समय प्रतीची को अरुण राग से रजित कर एक ओर सूर्य का रोहित मण्डल लुप्त होने को था, और दूसरी ओर पूर्ण चन्द्र के प्राची के क्षितिज पर आगमन की प्रतीक्षा के सारे लक्षण दिखलाई पड रहे थे। पक्षिगण अपने कुलाओ पर पहुच कर रात्रि के मौन और विश्राम के पहले कलरव कर रहे थे, हा, उस घोर ध्वनि को कलरव नही कहा जा सकता था। उद्यान के सजाने मे सादगी और सौन्दर्य दोनो का सम्मिश्रण था, क्योकि यहा कला और श्रम दोनो ने एक ही हाथ मे निवास किया था।

उद्यान के भीतर सुन्दर भवन मे नर-नारी आते-जाते दिखाई पडते थे, जिनमे सभी रक्तवसन नही थे। कितनो ने नीचे के सफ़ेद कुर्ते पर पवित्र सूती या

ऊनी गुत्ती बाध रखी थी, ऊपर मे उनके शरीर पर अगरखा पायजामा और लाल जूता था। कन्धे पर मूल्यवान चादर पडी थी। उनके सिर पर नोकदार लम्बी टोपिया थी। स्त्रियो ने अपने ढीले कुर्त्ते के ऊपर सफेद अगरखा पहिन रखा था। उन केशो का एक गुच्छक सामने की ओर दिखाई पडता था, और बाकी केशपाश पीठ पर खुले पडे थे। कितनो ही के शरीर पर साधारण फूलो के अतिरिक्त कोई आभूषण नही था, किन्तु दूसरी इसका अपवाद भी थी। उनके कठो मे सोने और रत्न की मालाए, कानो मे कर्णफूल, हाथो मे ककण और पैरो मे पदकटक थे।

उद्यान के एक छोर पर नहर के किनारे की हरी घासो पर सियावख्श और मित्रवर्मा देर से बैठे सूर्यास्त के बाद भी उठने का नाम नही लेते थे। वर्षों से दोनो को इतने समय तक मिलकर बैठने का अवसर नही मिला था। सियावख्श ने अपने पन्द्रह सालो का खाता खोल दिया था। मित्रवर्मा के शिकायत करने पर सियावख्श ने कहना शुरू किया—

--मित्र, यह न समझना, कि मैं ऐसी घडियो के लिए तरसता नही था, किन्तु हमारे पश्चिम और उत्तर के पडोसी अवसर नही देते थे।

—पश्चिमी शत्रु तो अयरान के सदा के लिए भारी काटे हैं।

—काटे है किन्तु कभी हमारी पश्चिमी सीमा सबसे सुरक्षित भी थी। यवनो और हमारे देश के बीच मे विशाल समुद्र था।

—जिसे अलिकसुन्दर ने पाट दिया।

—पाट देना ही कहना चाहिए। अलिकसुन्दर ने समुद्र के इधर के भूभाग को जीता ही नही, उसने यहा कितने ही नगर बसा दिए, जिनमे लाखो की सख्या मे यवन सैनिक तथा नागरिक आकर बस गए। इस प्रकार हमारी भूमि यवनो की भूमि बन गई। जहा आज यवनो के उत्तराधिकारी रोमको पर आक्रमण करने के लिए दुर्लघ्य् समुद्र को पार करना पडेगा, वहा रोमक पहिले ही से समुद्र पार कर हमारी बगल मे बैठे हुए है।

स्वाभाविक सीमा प्रतिरक्षा के लिए बडी सहायक होती है। अयरान के लिए तो इतिहास का विधान ही उलटा है, किन्तु इस विधान को केवल क्रूर नही कहा जा सकता। यदि स्वाभाविक सीमाए अलघ्य होती, तो ये जातिया कूपमडूक बन जाती। युद्ध हो या मैत्री, किसी भी भाति देशो का पारस्परिक सम्पर्क

मानव को आगे बढाने मे सहायक होता है।

—किन्तु युद्ध आदमी को नृशंस बनाता है। तुमने रोमको के नगर अमिदा के युद्ध के बारे मे नही सुना होगा।

—रोमको पर वह हमारी बहुत बडी विजय थी।

—और बहुत महगी विजय थी। यह विजय थ्योदोसिया जैसी नही थी। तिम्रा की धारा की सहायता तो इस विशाल नगर को प्राप्त ही थी, साथ ही यहा रोमको का अजेय दुर्ग था, जिसमे कैसर के सबसे बहादुर योद्धा एकत्रित किए गए थे। हमारी सेना को इतना मुकाबिला कही नही करना पड़ा था। अमिदा के युद्ध के सामने गज्नस्पदात का युद्ध भी खेल था। उसके विशाल द्वारो और सुदृढ प्राकारो पर से वर्षा की बूदो की भाति वाण वरसते थे। हमे बडी क्षति उठानी पडी। जब हम द्वार तोडकर भीतर घुसने मे समर्थ हुए, तो हमे अपनो से अधिक हेफ्ताल सैनिको पर नियन्त्रण करना मुश्किल था। उन्होने गलिया और सडको को मुर्दो से पाटना शुरू किया। वृद्ध मसीही पुरोहित ने शाहशाह के पास पहुचकर इन अत्याचारो को बन्द करने के लिए कहा—"भगवान की इच्छा थी, कि अमिदा तुम्हारे हाथो मे आए, लेकिन इस खूरेजी की क्या आवश्यकता ?" शाह ने तुरन्त उसे बन्द करवाया। हज़ारो स्त्री-पुरुष गुलाम बनकर देश छोडने के लिए तैयार किए गए थे, उन्हे भी अपने-अपने घरो मे लौट जाने की आज्ञा दी। हमारे सेनापति गुलनार ने लडने मे ही वीरता नही दिखलाई, बल्कि सहृदयता-पूर्ण शान्ति-स्थापन करने मे भी अपनी योग्यता का पूरा परिचय दिया।

—अमिदा-विजय के बाद कैसर से सात वर्ष की सन्धि करके अच्छा ही किया गया।

—हम उनके लिए मजबूर थे, रोमक शस्त्र का ही नही बुद्धि का भी युद्ध चला रहे थे। उन्होने सोचा था, यदि हेफ्तालो को वादा किया पैसा नही मिला, तो वह अयरान मे लूट-पाट मचाएगे, इसीलिए वह अपने वादे से भी मुकर गए, और रोम से रुपया वसूल करने के लिए हमे युद्ध छेडना पडा। अमिदा जब सर हुआ, तो रोमको ने उत्तर हूणिक यायावरो को उकसा दिया और हमे जल्दी-जल्दी सन्धि करने के लिए मजबूर होना पडा। यायावर सबसे भयकर और दुर्जेय शत्रु होते हैं।

—क्योकि वह मनुष्य-दल नही टिड्डी-दल है, जिसका सहार करना आसान काम नही है।

—मनुष्य सभ्यता मे आगे बढकर अपने लिए कितने ही नियम-सयम बना लेता है। किन्तु ये रेगिस्तानो, जगलो, पथरीली घाटियो मे सदा घूमते रहनेवाले किसी नियम-सयम के पाबन्द नही होते। हमने उत्तरी हूणो को दबाकर अपने को निश्चिन्त समझा था, किन्तु पिछले ही साल (५१५ ई०) दूसरे हूण न जाने कहा स पैदा हो गए, जो उत्तरी हिमवन्तो (कोहकाफ) को रौंदते, नगरो-ग्रामो को लूटते-उजाडते तिक्रा के ऊपरी तट तक पहुच गए।

मित्रवर्मा—उत्तर के अज्ञात स्थानो मे न जाने कहा यह बलाय छिपी रहती है।

—अज्ञात होने पर भी इतना तो ज्ञात है, कि उत्तर मे घुमन्तू असभ्य जातिया रहती हैं। लूट की स्वाभाविक इच्छा, अकाल के आक्रमण एव पारस्परिक युद्ध मे पराजय उन्हे दक्षिण की ओर भागने के लिए मजबूर करते है।

—केवल ईरान की सारी उत्तरी सीमा ही इनसे नही कापती, हिन्द भी इनके धावे से बाहर नही हैं।

—हिन्द ही नहीं मित्र, रोमको को भी अपने उत्तरी सीमान्त पर इनका सदा भय बना रहता है।

इस प्रकार दोनो मित्रो का वार्त्तालाप सूर्यास्त और चन्द्रिका के विकसित होने तक चलता रहा। इसी समय सर्वश्वेता सम्बिक् मन्दगति से पास आकर ठमक गई और फिर उनकी ओर एक नजर डालकर बोली—मैं बाधक नही बनना चाहती, दोनो मित्रो के निभृत वार्त्तालाप मे।

—आ सम्बिक् बम्बिश्नान-बम्बिश्न, स्वागत—कहते मित्रवर्मा के उठने से पहले ही सियावरश ने कमर दोहरी कर नमस्कार किया।

—रहने दो, अपनी बम्बिश्नान-बम्बिश्न (रानी-अधिरानी) को यहा मैं एक पूर्व-परिचिता के रूप मे आई हू।

—आओ पूर्व-परिचिता हमारी चन्द्रिका, यहा कोई ऐसी निभृत बात नही हो रही है, जिसमे सम्मिलित होने का तुम्हे अधिकार न हो—कहते मित्रवर्मा ने पास पर सम्बिक् को बैठाया, और फिर बात जारी की। अमिदा-विजय और कबीरी हूणो के पराजय की बात चल रही थी।

सम्म्रिक् ने स्वर मे गम्भीरता लाते हुए कहा—अमिदा विजय ने देखा नही हमारे नगरो मे कितना परिवर्तन किया ?

—भारी सख्या मे रोमक दासिया हमारे नगरो मे आई। उनकी श्वेत काति से हमारे प्रासाद श्वेतित हो गए, क्यो ? मित्रवर्मा ने कहा।

—नही मेरा ख्याल उधर नही था। दासता मनुष्यता के लिए कितना क्रूर कलक है ? हमारे अन्दर्जगर अभी कितने सीमित क्षेत्र तक ही उसका उच्छेद करने मे सफल हुए हैं। यहा मेरा विचार स्नानागारो से था।

सियावस्श—स्नानागार शारीरिक स्वच्छता के लिए कितना आवश्यक है। जाडो मे हमारे नागरिक महीनो नहाने का नाम नही लेते थे। अब गर्म जल गर्म घर के साथ नहाना शौक की बात हो गई है। तो भी हमारे मगोपत (मोविद) इसे धर्म के विरुद्ध कहते हैं।

—धर्म-विरुद्ध ?—मित्रवर्मा ने कुछ आश्चर्य करते हुए कहा—शारीरिक शुद्धता स्वच्छता धर्म के विरुद्ध ! किन्तु मुझे आश्चर्य करने की आवश्यकता नही। एक धर्म है जो कहता है पानी भी प्राणधारी है, उसमे नहाने मे पाप होता है।

—हमारे मगोपत-सम्बिक् ने कहा—पानी को प्राणधारी तो नही कहते, किन्तु उसे अग्नि की भाति बग (देवता) मानते हैं, अत नहाकर उसे मलिन करना पाप बतलाते हैं। कवात् के बेदीन होने का यह भी प्रमाण पेश किया जाता है।

—गर्म पानी से नहाना पाप है—सियावस्श ने कहा—क्योकि उनसे आप-देवता मलिन हो जाते हैं, आग मे मुर्दा जलाना पाप है, क्योकि उसमे अग्नि देवता रुष्ट हो जाते हैं। ऐसे धर्म के लिए क्या कहा जाए ?

—हा मित्र, शायद तुम्हे मालूम नही है, सियावस्श ने अपनी मृत पत्नी को कौवो-गिद्धो के सामने छोडने की जगह भूमि मे दबा दिया, इस पर मोविदो ने भीतर ही भीतर उसे बदनाम करना शुरू किया वह अपने देवताओ को नही मानता।

—और मैं तो मित्र, हिन्दुओ, शको तथा रोमको के उत्तरी पडोसियो के शवदाह की प्रथा को पसन्द करता हू। यदि अग्नि मे जलाने से अग्नि देवता अपवित्र हो जाते हैं, तो दख्मा छोडने पर साक्षात् वायु देवता सडते मुर्दे की

दुर्गन्ध के कारण घोर रूप से अपवित्र होते है। लेकिन इन मगोपतो को समझाए कौन ?

—इन्होने तो मानो बुद्धि बेच खाई है।

—बुद्धि बेच नही खाई है सम्बिक्—सियावस्श ने कहा—मगोपत स्वय निर्बुद्धि नही है, वह दूसरो को मूर्ख बनाके अपना काम निकालना चाहते हैं। धर्म लोगो की परम्परागत धारणाए और श्रद्धा हथियार मात्र हैं, जिनसे वह अपना काम बनाना चाहते है।

—क्या हमने जल्दी तो नही की ?—मित्रवर्मा ने पूछा।

—हम जल्दी करें या देर, मगोपत अपने प्रभाव को घटने नही देना चाहते। क्योकि उसी के भरोसे वह सामन्तो जैसे सुख-विलास का भोग रहे हैं। मगोपतानृमगोपत गुलनाज की चाल बडी गहरी होती है। नवानदुरूत के पुत्र की शिक्षा-दीक्षा पर देखते नही कितना ध्यान दिया जा रहा है ?

मित्रवर्मा—गुलनाज जानता है, कि कवात् का खुसरो की माता के प्रति विशेष पक्षपात है।

—नही, मुझे विश्वास नही—सम्बिका ने जोर देकर कहा।

—क्योकि तुम कवात् की पत्नी ही नही सहोदरा भी हो, तुमने अद्‌भुत साहस दिखलाते हुए विस्मृति दुर्ग से कवात् का उद्धार किया था—मित्रवर्मा ने कहा।

—उसमे तुम्हारा भी हाथ कम न था मित्र।

मित्रवर्मा—सियावस्श का सन्देह निर्मूल नही है। सम्भव है, शाह अभी दूर तक न गया हो, किन्तु मगोपतो और विस्पोह्रो की कूटनीति से सावधान रहने की आवश्यकता है।

—और कावूस ?—सम्बिक् ने कहा।

मित्रवर्मा—अन्दजगर की शिक्षा ने तरुण कुमार को सर्वगुण-सम्पन्न बना दिया है, इसमे किसे सन्देह हो सकता है ? शाह को अपने ज्येष्ठ कुमार पर अभिमान है। आज सारे देश मे जलाशयो, नहरो, राजपथो, पुलो, चिकित्सालयो शिक्षालयो नये नगरो के बनाने की धुन मे शाह सब कुछ भूल गया है, और कावूस इन कामो मे उसका दाहिना हाथ बन गया है, किन्तु मगोपत अब भी निराश नही है।

सियावक्श—और जब तक शाह हमारे अन्दर्जगर के पथ-प्रदर्शन पर चल रहा है, तब तक कोई भय नही है, यह भी मै मानता हू, किन्तु हमे अच्छी तरह ध्यान रखना चाहिए कि, गुलनाज आतुरपन नहीं है, ढलती आयु तरुणाई नही है।

२९

अन्त के लक्षण

अर्तश्तारान्-सालार सियावक्श के भव्य प्रासाद की शान अब भी वैसी ही थी। महाद्वार से भीतर घुसते ही सरो के सुन्दर हरित वृक्ष गुलाब और जूही की सजी हुई क्यारिया दीख पडती थी। फौवारे के पास अब भी मोर घूम रहे थे, किन्तु, साथ ही वहा किसी आशकित भय की छाया भी एक विलक्षण सन्नाटे के रूप मे चारो ओर फैली हुई थी।

बाहर की उदासी प्रासाद के भीतर और भी अधिक प्रतीत होती थी। अर्तश्तारान्-सालार के अन्त पुर के परिचारक परिचारिकाए पुतली की भाति रहे थे, उन्हे सास लेने मे भी भय मालूम होता था। वह बहुधा सकेत से भावो को एक-दूसरे को अवगत कराते थे। सालार की आस्थान-शाला पडी थी। केवल उसके एक प्रकोष्ठ से कुछ सयत स्वर अवश्य सुनने मे था, जहा कि सियावक्श, मित्रवर्मा और प्रसिद्ध चिकित्सक ईसाई-महन्त ीश) बाजान बैठे गभीर वार्त्तालाप मे लगे हुए थे। बाजान कह रहा था—

—लेकिन हमारे स्वताय शाहशाह अब भी कोई रास्ता निकालना हते है।

—भेडियो के हाथ मे सौप कर रास्ता नही निकाला जाता—सियावक्श ने कहा—लेकिन इस बात को छोडिए, सियावक्श के हृदय मे भय के लिए स्थान नही है।

—इसे तो सारा अयरान जानता है, स्वताय सालार—बाजान ने रुक-रुक कर कहा।

—आइए, हम दिल खोलकर निस्सकोच क्यो न अपने विचारो को रखें।

मैं अनिष्ट से भय नही खाता, मुझसे या मित्रवर्मा से आप को अनिष्ट का भय भी नही हो सकता । दरबारी दोरंगी बातो का यह अवसर नही है । मुझे शाहशाह से यदि कोई शिकायत हो सकती है, तो वह उनकी जरा ही से ।

—जरा ने हमारे देश मे भी अनर्थ कराया था—मित्रवर्मा ने कहा—शायद हिन्द के महाकाव्य रामायण के राम और उनके पिता दशरथ की कथा आपने सुनी होगी ।

सियावख्श—हा, वही कथा यहा दोहराई जा रही है । पज्शख्वार—शाह शाहशाह का ज्येष्ठ पुत्र है । उसकी योग्यता मे, है कोई सदेह करने वाला ?

वाज़ान—नही, कोई नही ।

सियावख्श—हा, यह शिकायत हो सकती है, कि उसकी शिक्षा-दीक्षा अन्दर्जगर के अधीन हुई, उस पर देरेस्तदीन का बहुत प्रभाव है किन्तु यह शिकायत शाहशाह नही कर सकते, क्योकि आखिर उनके ज्येष्ठ पुत्र को अन्दर्जगर के पास किसने भेजा ?

वाज़ान—पिता ने ही ।

सियावख्श—और माता ने भी, जो शाहशाह की पत्नी ही नही, सहोदरा भी हैं । सासानी सिंहासन पर पज्शख्वारशाह का अधिकार कही बढ चढ कर है । उसकी रगो मे माता-पिता दोनो की ओर से अर्दशीर बाबकान का रुधिर बह रहा है । अन्दर्जगर की कृपा से मैं रुधिर की पवित्रता के झमेले से बहुत ऊपर उठ चुका हू, किन्तु मोविदान-मोविद गुलनाज को तो यह ख्याल करना चाहिए, क्योकि वह मौके बेमौके हर समय रुधिर की पवित्रता की दुहाई दिया करते हैं ।

—सब मतलब की दुहाई है—वाज़ान ने कहा—मैं इसे आपके सामने मे सकोच नही करता ।

हा—मित्रवर्मा बीच मे बोल उठा—गुलनाज के कोप का भाजन आज मज्दकी हैं, तो कल उसका कोपवज्र आपके ऊपर भी गिरेगा ।

वाज़ान—हम इसे भली प्रकार जानते हैं । अर्मनी और इब्री (गुर्जी) मसीहियो पर मज्दयस्नी धर्म मे लौट आने के लिए बहुत दबाव डाला जा रहा है ।

सियावख्श—मेरी सहानुभूति कावूस (पज्शख्वारशाह) की ओर तब भी होती, यदि वह शाहशाह की किसी साधारण स्त्री की सतान होता, क्योकि

मैं गुण को प्रधानता देता हू। किन्तु सोचिए, कावूस किस माता का पुत्र है?

—सम्बिक् का, शाह की अपनी सहोदरा का—वाज़ान ने कहा।

—हा, जिसने भाई के लिए सिर हथेली पर रखकर वह काम किया, जिसे शायद ही किसी स्त्री ने किया हो। मैं तो कहूगा, सम्बिका के साहस और प्राणोत्सर्ग की भावना के सामने हमारे भी कृत्य कुछ नही हैं, मुझे आशा है, मेरे मित्र इससे सहमत होगे।

—हा, विलकुल ठीक है—कहते मिश्रवर्मा ने सियावख्श की वात का समर्थन किया।

—और आज अवहरशहर की उस स्त्री के पुत्र के लिए कावूस को वलिदान चढाया जा रहा है। यद्यपि मेरे हार्दिक भाव यही हैं, किन्तु मैं उनकी वाट मे नही वहा। रोम का कैसर खुसरो को अपना पुत्र स्वीकार कर ले, यह मेरे हाथ की वात नही थी, सोरन ने झूठे मेरे विरुद्ध शाह का कान भरा है, कि मैंने ही वैसा कराया।

—मुझे मालूम है—वाज़ान ने कहा भाजी मारने वाला अर्तश्तारान् सालार नही था। कैसर जुस्तीन को ऐसा न करने की सलाह देने वाला मन्त्री प्रोक्लोस था। उसने उसे जगली जातियो की प्रथा कहकर भडकाया।

—और साहपत की वात मानकर शाहशाह कैसर के प्रत्याख्यान का दोषी मुझे समझते हैं। फिर कैसे कहते हो, कि पातेख्शाह कोई रास्ता निकालना चाहते हैं।

—अव भी वीर सियावख्श को वह भूले नही हैं।

—केवल निद्रा की घडियो मे ही, नही तो उनके लिए सियावख्श विस्मृत हो चुका है। उन्हे सिर्फ एक वात की धुन है, कि ज्येष्ठ पुत्र कावूस और मध्यम पुत्र जम को वञ्चित करके अपनी छोटी वम्बिश्न के पुत्र खुसरो को गद्दी पर वैठाया जाए। इस रास्ते मे जो भी वाधक मालूम होता हो, वह उनकी कृपा का पात्र नही—कहते हुए सियावख्श का चेहरा आरक्त हो उठा।

वाज़ान उसके वचन से प्रभावित था। कहने के लिए कोई वात सूझ नही रही थी, इसलिए उसने फिर अपनी वात को दुहराते हुए कहा—पातेख्शाह कोई रास्ता निकालना चाहते है।

—यह उनकी शक्ति से वाहर की वात है—सियावख्श ने जोर देते हुए

कहा—मुझे अपने लिए कोई अफसोस नहीं है, मरना जीवन का मूल्य है। अफसोस है तो यही, कि जिस स्वर्ग को भूमि पर लाने का हम स्वप्न ही नहीं देख रहे थे, बल्कि उसका अंकुर भी हमने उगा दिया था, वह अब पद-दलित होने को है।

मित्र—किन्तु 'सत्य का अंकुर कभी पद-दलित नहीं किया जा सकता। एक बार भूमि के अन्दर दब जाने पर भी वह फिर उग उठता है।"

सियावख्श—अन्दर्जगर की यह बात और भी मुझे दृढ़ता प्रदान करती है। मानव मात्र की बन्धुता और समता की, भाव जगत में ही नहीं, वस्तु जगत में भी स्थापना एक मात्र सुख का मार्ग है

इसी वक्त महाद्वार के भीतर शाही अश्वारोही वेग के साथ प्रविष्ट हुए। घोड़ों की खुरों के शब्द को सुनकर सियावख्श ने कहा—

—बधु बाज़ान! यह देखो रास्ता, जिसे मेरे लिए शाह ने निकाला है। इन सवार सैनिकों की क्या आवश्यकता थी? मैंने भागने का निश्चय नहीं किया था, न मेरे अन्दर्जगर ने मुझे गृह-युद्ध आरम्भ करने की आज्ञा दी है।

× × × ×

मगोपतान्-मगोपत गुलनाज प्रधान न्यायाधीश के स्थान पर बैठा था। उसकी एक ओर महापत सोरन जैसे विस्पोह्र और दूसरे उच्च पदाधिकारी अपने आसनों पर आसीन थे। जिस समय न्यायालय में मुश्क बाधे सियावख्श को लाया गया, उस समय सबके चेहरों से मालूम होता था, कि उनके सामने उनकी दया पर निर्भर एक बंदी नहीं आया है। सियावख्श के चेहरे पर दैन्य और भय का कोई चिह्न नहीं था। उसके गौर भव्य मुखमण्डल पर एक अद्भुत प्रभामण्डल छाया हुआ था। उसकी सौम्य विशाल आंखों में एक अद्भुत ज्योति चमक रही थी।

गुलनाज ने स्वागत करते हुए सियावख्श को बैठने के लिए एक आसन की ओर इशारा किया, किन्तु बीच में ही माहपत ने टोक कर कहा—पतित और अपराधी के लिए आसन नहीं दिया जा सकता।

सियावख्श ने हंसते हुए कहा—पतित और अपराधी!

गुलनाज ने माहपत की आपत्ति की परवाह न करते निर्देश दिया—कुछ भी हो, सियावख्श विस्पोह्र हैं। पातेख्शाह ने अभी उन्हें इस [illegible] न पद से च्युत नहीं किया है।

किन्तु सियावख्श ने महापत को और बोलने का समय न देते हुए आसन से अलग फर्श पर बैठते हुए कहा—मैं विस्पोह्लो की पद मर्यादा को नही चाहता। मुझे प्रसन्नता है, कि इस अन्तिम समय मे अयरान के वचुर्कों के सामने मैं एक साधारण जन की भाति पेश हुआ हू।

—और अपराधी की भाति भी—माहपत ने आवाज को ऊचा करते हुए कहा।

—अपराधी? सियावख्श ने मुस्कराते हुए नम्र स्वर मे कहा—कौन अपराधी है इसे मैं आज आपको बतलाऊगा।

—तुमने मज्दयस्नी दीन की अवेहलना की है—माहपत ने कठोर स्वर मे कहा।

"तूने अवहेलना की है" कहो सोरन,—सियावख्श ने कहा—आज मैं तुम्हारी कटूक्तियो से उत्तेजित नही होऊगा। मज्दयस्नी धर्म की मैंने उतनी अवहेलना नही की, जितनी कि तुम सारे विस्पोह्ल, मगोपत और वचुर्क लोग पद पद पर करते हो।

माहपत गर्म होकर कुछ कहना ही चाहता था, कि गुलनाज ने हाथ से उसे शात रहने का सकेत करके कहा—न्याय और व्यवस्था का अनुसरण करना हम अयरानियों का जातीय धर्म है। हमारे आपस मे चाहे कितने ही मतभेद हो, किंतु ह हम न्यायासन के सामने हैं। हमे देखना है, क्या अयरान अर्तेश्तारान-सालार 'महासेनापति) सियावख्श न्यायानुसार अपराधी है

सियावख्श ने कहा—क्षमा करें बीच मे बोलने के लिए। मैं अब न ेाह्ल हू न अयरान-अर्तेश्तारान सालार। मुझे केवल सियावख्श के नाम मे ोवित करें, तो मैं मगोपतान् मगोपत का आभार मानूगा।

गुलनाज ने फिर भी अपनी बात को उसी तरह जारी रखते हुए कहा—सालार, हम जानना चाहते है, क्या आप मज्दयस्नी धर्म की अवहेलना करने के अपराध को स्वीकार करते है? क्या आपने अपनी मृत पत्नी के शव को मज्दयस्नी प्रथा के अनुसार दख्मा मे न रख भूमि मे गाड दिया?

सियावख्श ने नम्रतापूर्वक उत्तर दिया—मेरी वास्तविक इच्छा यह नही थी—

बात को बीच मे काटकर माहपत ने कहा—दुरुख्त (दरोग), झूठ बोलकर

प्राण बचाना चाहते हो ?

सियावस्श ने बडे यत्न से अपनी मुखमुद्रा मे विकार न आने देकर स्पष्ट स्वर मे कहा—दुरुस्त कहने की आदत किसी दूसरे को होगी। मुझे अपनी बात पूरी कर लेने दो। मैं दख्मा मे रहकर पशु-पक्षियो द्वारा नुचते सडते शव से वायु को दूषित करने की अपेक्षा भूमि के नीचे शव को दबाना अच्छा समझता हू।

—जैसे कि यहूदी और ईसाई, बेदीन करते हैं क्यो ? माहपत ने टोककर कहा—

—क्योकि इससे वायु दूषित नही होता। किन्तु मैं सबसे अच्छी उस प्रथा को मानता हू, जिसका प्रचार हिन्दुओ और शको मे है।

—अर्थात् शवदाह—गुलनाज ने आश्चर्य करते हुए कहा—और इस प्रकार अग्नि देवता का अपवित्र करना आप पाप नही समझते ?

—अग्नि देवता सबके पावक (पवित्र-कर्त्ता) हैं। हिन्दू हमसे कम अग्नि देवता को नही पूजते, और वह अपने शवो को अग्नि मे जलाना धर्म-सम्मत समझते हैं।

—लेकिन तुम हिन्दू-देश मे नही हो सियावस्श—गुलनाज ने तर्क करते हुए कहा—नही तुम हिन्दू-दीन के अनुयायी हो।

—लेकिन आप तो यह भली-भाति जानते हैं, कि मज्दयस्नी धर्म हिन्दुओ के धर्म के बहुत समीप है।

—यहूदियो और ईसाइयो के अपेक्षा ही—गुलनाज ने कहा—हिन्दू भी हमारी भाति अग्नि, वायु, आप (जल) को पूजते हैं, यद्यपि वह उन्हे अहुर (असुर) न कह हमसे उलटा देव नाम से पुकारते हैं। किन्तु, हमारे भेद भी है।

सियावस्श—इसलिए अग्नि को अपवित्र करने का प्रश्न नही आता।

—तुम अपने अपराध को स्वीकार करते हो या नही—माहपत ने देर को असह्य समझते हुए कहा।

—मैं इसे अपराध नही समझता, मैं चाहूगा, कि मेरे शव का अग्नि-दाह किया जाए।

गुलनाज—अर्थात् यदि अवसर मिले, तो तुम मुर्दे को जलाकर अग्नि को अपवित्र करोगे ?

—अग्नि सदा पावक है, उसे कोई अपवित्र नही कर

गुलनाज ने बात को और बढाने का मौका न देते हुए कहा—अच्छा, यह तो सिद्ध हुआ कि तुम दस्मा मे शव के रखने के विरोधी हो, जर्थु स्त्रीधर्म की इस बात की तुमने अवहेलना की। अच्छा यह भी बतलाओ, क्या तुम मज्दयस्नी धर्म के बाहर के बगो (भगवानो) की नये नये स्वातायो की पूजा करते हो ?

—एक नही, हजार नही, मैं लाखो ऐसे स्वतायो की पूजा करता हू, जिनको मगोपतान् मगोपत और उनके अनुयायी नही मानते। लेकिन

—बस हो गया—सोरन ने बीच मे टोककर कहा।

—सुन भी तो लो, क्यों मैं बाहरी लाखो बगो को मानता हू। मैं उन लाखो बगो को अपना पूज्य मानता हू, जिनके दिए अन्न को खाकर सारे मगोपत, विस्पोह्न, वचुर्क मोटे हुए हैं, किन्तु उनके लिए इनके मुह मे कृतज्ञता का एक भी शब्द नही है।

—यह किसानो और कमीनो का पक्षपात करता है—एक मगोगत ने कहा।

—हा, जो सबसे बडे बग हैं, जिनकी सहायता बिना तुम्हारे यह सारे भोग, सारे ठाट, सारे प्रासाद, सारी ओठो और गालो की लाली विलुप्त हो जाएगी। सुनो, तुमने इन लाखो बगो को दास और कमीन बनाकर रखा है। दीन-धम और बग के नाम पर शिष्टाचार और सदाचार के नाम पर पशु-जीवन मे उन्हे डाल रखा है। लेकिन कब तक तुम्हारा यह जाल-फरेब चलता रहेगा।

—बेदीन जिसे फरेब कहते हैं, वही बगानबग (देवातिदेव) अहुरमजदा का विधान है—अबकी अपने ऊपर नियन्त्रण न रखते गुलनाज ने कहा—अहुर-मज्दा से अधिक तुम दीन को नही जान सकते। ऊच-नीच का भेद यदि अहुर-मज्दा ने न किया होता, तो ससार नही चलता।

—ससार तो अच्छी तरह चलता, किन्तु पराए श्रम को लूटने वाला समाज ध्वस्त हो जाता। लेकिन उनका ससार ध्वस्त हो के रहेगा, आज नही तो कल, इस वर्ष नही तो सौ वर्ष, हजार पन्द्रह सौ वर्ष बाद यह तुम्हारा माया-जाल टूट कर रहेगा। दो बाहु और एक मस्तक वाले तुम अकेले निन्नानवे मस्तक और निन्नानवे जोडे हाथो वाले अपार-जन-समूह को धोखे मे डालकर सदा लूटते नही रह सकते।

—चुप रहो पतित बेदीन—गुलनाज ने कहा।

सियावख्श—मेरी वाणी को चुप करने की आज तुममे शक्ति है, किन्तु

मेरी इस वाणी को सियावरश की वाणी न समझो। यह तुम्हारे झूठे वगो (देवताओ) की नही, उन लाख नही, विश्व के कोटि-कोटि वगो की वाणी है, जिन्हे तुमने मानव से पशु बना रखा है। आज जिस तरह उनकी वाणी मेरे मुह से फूट निकली है वैसे ही वह आगे भी तब तक फूट निकलती रहेगी ।

—बस अधिक न बोलो—मज्दयस्नी विधान के अनुसार धर्म-विद्रोही व्यक्ति को वर्ष भर समझने-बूझने तथा अपने मत को ठीक करने का मौका दिया जाता है, क्या तुम उसे चाहते हो ? गुलनाज ने कहा ।

—तुम्हारी वचनाओ दुरुस्तो को सुनने के लिए मैं एक क्षण भी जीना नही चाहता। तुम्हारे पास ऐसा कोई सत्य नही है, जिसे सुनाकर तुम वर्ष भर मे मेरे विचारो को परिवर्तित करा सको।

गुलनाज—सोच लो, तुम्हारे अपराध का दण्ड मृत्यु छोड दूसरा नही हो सकता।

—मुझे मृत्यु का भय न दिखलाओ, यद्यपि जीवन की मैं उपेक्षा नही करता। गुलनाज, आज तुम अपने फरेब मे सफल हो रहे हो। यदि मुझे विश्वास होता कि मैं अपने कर्त्तव्य, अपने उद्देश्य को आगे बढा सकूगा, तो मैं जी के रहता और तुमसे उसकी भिक्षा माग कर नही।

—अर्थात् तुम अयरान की पाक भूमि मे अपनी वेदीनी को फैलाते, थू महापत ने जल भुन कर कहा।

सियावरश—हम नही सोरन, तुम जैसे अह्रिमान की सन्तान इस पाक भूमि को नापाक बना रहे हैं। हमने यहा मे अगिरामैन्यु का शासन हटाकर अहुर-मज्दा के शासन को स्थापित करना चाहा, इसे दोजख से बहिश्त बनाना चाहा, केवल जबान से नही कर्म मे। तुमने बहिश्त के उन टुकडो को अपनी आखो देखा है। तुमने मेरे सामने उन दिहवगानो की प्रशसा की है।

—नही, कभी नही, तुम दुरुस्त (झूठ) बोल रहे हो—महापत ने झुंझलाहट के साथ कहा।

—तुम भले ही आज इन्कार करो, किन्तु कोई भी सहृदय मानव हमारे इन ग्रामो और बस्तियो को देखकर प्रशसा किए बिना नही रहेगा।

—उन ग्रामो की प्रशसा, जिनमे नरक के कीडे रहते हैं, जहा की सारी स्त्रिया वेश्याए हैं, जहा सभी बच्चे बे-बाप के हैं—एक मगोपत ने कहा।

मगोपतानूमगोपन ने उसे रोकते हुए कहा—जाने दो, मृत्यु के मुख मे पडे आदमी से वैसी बात करना व्यर्थ है।

—देरेस्तदीन पर स्त्रियो को वेश्या बनाने के आक्षेप का उत्तर बहुत बार दिया जा चुका है, यह तुम सबको मालूम है। हमारी एक भी स्त्री पैसे तथा खाने-कपडे के लिए अनिच्छापूर्वक अपना शरीर नही बेचती। वह तो तुम्हारे ही यहा विस्पोह्लो ही तक प्रचलित है

गुलनाज ने सैनिको को बदी को ले जाने का सकेत किया। मियाबख्श की वीर वाणी अब भी न्यायशाला मे सभी के कानो मे गूज रही थी। शत्रु भी अपने मन मे इस पुरुष सिंह के साहस और निर्भीकता की प्रशसा कर रहे थे।

३०

मधुर स्वप्न का अन्त (५२९ ई०)

तिस्रा के तट पर आज फिर वसत ऋतु आई थी। वृक्षो मे नवकिसलय और पौधो मे रग-बिरगे फूल निकल आए थे। हल्की वर्षा ने तस्पोन् के भूभाग को धोकर वसतश्री को और उज्ज्वल बना दिया था। किन्तु आज तस्पोन् मे वसत के उत्सव नही दीख पड रहे थे। नर-नारी अच्छे-अच्छे वस्त्रो मे उद्यानो की ओर जाते नही दीख पड रहे थे, न नगर की वीथियो मे वासती साज और राग-रग दिखलाई पडता था। तिस्रा की धारा अवश्य पहिले ही वसत की भाति अधिक विस्तृत तथा मस्तानी चाल से मानव जगत के दुख-सुखो, चढाव-उतार की उपेक्षा करती बह रही थी।

तस्पोन् की इस उदासी के बहुत-से कारण थे। दो वर्ष पूर्व शाहनशाह अयरान ने रोम से झगडा मोल लिया। अर्मनी और इब्री (गुर्जी) लोगो ने मज्दयस्नी धर्म छोड मसीही दीन को स्वीकार किया था, उसमे कोई जबर्दस्ती नही की गई थी। दोनो देश सासानी देश के अधीन थे, इसलिए जबर्दस्ती उनमे पैतृक धर्म को कौन छुडा सकता था? मगोपतो ने जर्थुस्त के उदार धर्म को इतना सकुचित कर दिया था, कि अधिकाश जनता विशेषत अयरानी जनता का उसमे दम घुट-सा रहा था। मगो ने जन्मना नीच-ऊच के

भेद-भाव को इतना बढा दिया था कि लोग पद-पद पर अपने को वचित और अपमानित अनुभव करते थे।

अर्मनियो और इब्रियो को मसीही धर्म अधिक उदार प्रतीत हुआ। वह जाति मे अधिक समता का भाव फैलाता था। मसीही धर्म के स्वीकार करने के साथ उन्होने मज्दयस्नी रीति-रिवाज़ को छोड दिया—अच्छे और बुरे सभी अपने सस्कृति मे चिरकाल से सबद्ध अहानिकर उत्सवो तक को भी त्याग दिया। मुर्दो को दख्मो की ताको मे रखकर चिडियो को खिलाने की जगह उन्होने उसे गाडना शुरु किया। क्वात् ने जबर्दस्ती फिर से दख्मो को आबाद करना चाहा। इब्री राजा गुर्जीन ने अपने मसीही बधु रोमक कैसर जुस्तीनियन के पास गुहार पहुचाई। अयरान और विजतियन मे धर्म के लिए युद्ध छिड गया। लेकिन शीघ्र ही अयरान को अपने कृत्य पर पछताना पडा।

दो साल बाद आज भी तस्पोन् नगरी इस आघात को भूली नही थी। कैसर अपनी सफलता पर फूला नही समाता था। वह अपने को सारे मसीही जगत का त्राता धर्मराज समझता था, क्योकि उसने इब्री और अर्मरी धर्म-बधुओ की रक्षा की थी, वहा मसीही धर्म की नीव मजबूत करने मे सहायता पहुचाई थी। आज सारे ससार के मसीही जुस्तीनियन का यशगान कर रहे थे। वीर जुस्तीन के भतीजे जुस्तीनियन ने अपनी धर्मप्राणता को और अधिक दिखलाने के लिए इसी साल सहस्र वर्षो से चले आए ग्रीस (यवन) देश के पिथागोर, सुक्रात, प्लातोन, अरिस्तातिल आदि महान् दार्शनिको और मनीषियो के ग्रथो के अध्ययन-अध्यापन को निषिद्ध घोषित कर दिया, उनके विद्यालय बद करा दिए, पुस्तको को जलवा दिया। दर्शन के अध्यापक और विद्यार्थी भागकर अयरान और दूसरे देशो मे शरण लेने के लिए बाध्य हुए। समाज मे समता का प्रचारक मसीही धर्म विचारो मे इतना सकीर्ण सिद्ध हुआ।

तस्पोन् मे कितने ही यवन दार्शनिक शरणार्थी होकर आए थे। क्वात् ने उन्हे गुन्देशापूर मे एक दर्शन-विद्यालय खोलने का वचन दिया, किंतु इसका यह अर्थ नही, कि वह अब वस्तुत उदारनीति का अनुशरण करने जा रहा था। अपने प्रतिद्वन्दी रोमक कैसर के कोप भाजनो को शरण देना उसके लिए स्वाभाविक था। बुढापे मे उसे एक ही धुन थी, कि कैसे खुसरो तख्त का स्वामी बने। इसमे भारी बाधक सियावरश अब दूसरे लोक में पहुचाया जा चुका था, किन्तु

ज्येष्ठ पुत्र काबूस अब भी पज्शखार (तिब्रस्तान) के पर्वतीय प्रदेश का शासन कर रहा था। मझला पुत्र जम बहुत बहादुर, बुद्धिमान और जन-प्रिय जरूर था, किन्तु एकाक्ष होने के कारण उसमे उतना भय नही था। काबूस का पक्ष बहुत दृढ था, क्योंकि उसके समर्थक मज्दकी सियावख्श की हत्या के बाद भी सबल थे, इसलिए एक दिन खुसरो ने अपने पिता से कहा, मेरे रास्ते का रोडा काबूस नही अगेरामेन्यु की सन्ताने ये मज्दकी है। यह मुझे फूटी आखो भी देखना नही चाहते। सियावख्श की हत्या के बाद तो यह मेरी छाया से भी घृणा करते हैं। पापी मज्दक वैसे तो शैतान है, किन्तु हिंसा से हाथ हटाने की उसकी शिक्षा ही आज मेरे प्राणो को बचाए हुए है, नही तो यह मज्दकी हथेली पर सिर रखकर खेलने के लिए प्रसिद्ध हैं।

कवात् के पूछने पर खुसरो ने गुलनाज की सम्मति को सामने रखते हुए कहा—मगोपतान मगोपत की राय है, कि हमे कूटनीति और छल से काम लेना होगा। मज्दकी अब भी इतने बलवान हैं, कि उन पर सम्मुख से प्रहार करने मे सफलता की कम आशा है।

कवात् ने अविश्वास प्रकट करते हुए कहा—किन्तु वह छल की नीति क्या है, जिससे सफलता की आशा की जा सकती है ?

खुसरो—मज्दकियो को वाद (शास्त्रार्थ) के लिए बुलाया जाए।

कवात्—वाद मे मज्दकी बडे प्रबल होते हैं। हमने अनेक बार देखा है, उनके तर्कों का उत्तर न हमारे मगोपत दे सकते है, न मसीही कशीश। वह तो वाद के बडे प्रेमी होते हैं।

खुसरो—तभी तो वह वाद के नाम पर पूरी सख्या मे आएगे।

कवात्—तो फिर ?

खुसरो—उनको यह भी सूचित कर दें, कि हम राज्य को पज्शखारशाह काबूस के हाथ मे देना चाहते है, हमने अपने ज्येष्ठ पुत्र के पास ऐसा पत्र भी लिख दिया है, किन्तु शास्त्रार्थ मे विजयी होने पर ही हमे अपने निश्चय को कार्य-रूप मे परिणत करने मे सुभीता प्राप्त होगा।

कवात्—तो क्या तुम तख्त से दस्तबरदार हो जाना चाहते हो ? मैं तो ऐसा नही होने दूगा।

खुसरो—क्या मेरे गुरु गुलनाज को आप इतना मूर्ख समझते है ? शास्त्रार्थ

तो एक बहाना मात्र है, वहा नि शस्त्र मज्दकी नेताओ के सहार का सबसे अच्छा मौका मिलेगा ।

कवात् के चेहरे पर पहिले एक हल्की-सी छाया पडती दिखाई पडी, जिसे छिपाने के लिए मुह को दूसरी ओर फेरकर उसने सावधान हो कहा—अच्छा, जो तुम्हे अच्छा मालूम हो, वही करो ।

कवात् इतनी दूर तक चला गया था, कि उसे अब फिर लौटाने का रास्ता नही रह गया था । सारे विस्पोहृ, वचूर्क और सेनानायक गुलनाज अतएव खुसरो के पक्ष के थे ।

× × × ×

अन्दर्जगर के उद्यान की शाति उसी तरह अखड थी । काबूस के युवराज होने मे शास्त्रार्थ भर की देरी सुनकर उद्यानवासी बडे प्रसन्न थे । मज्दकी विद्वान इसे तो अपने बायें हाथ का खेल समझते थे । यदि वहा किसी का हृदय शकापूर्ण था, तो वह मित्रवर्मा का था । उसने अपने विचारो को अन्दर्जगर के सामने रखा भी—

—मुझे यहा दाल मे काला मालूम होता है ।

—दाल मे काला क्या ?—मज्दक ने पूछा ।

मित्र—यह एक हिन्दी लोकोक्ति है ।

मज्दक—अर्थात् शास्त्रार्थ की आड मे कोई भारी छल छिपा हुआ है ।

मित्र—हा, गुलनाज ने हमारे सर्वनाश के लिए कोई कुचक्र रचा है ।

मज्दक—यह बिलकुल सभव है, किन्तु हमारा सत्य पर विश्वास है । हम अपने उद्देश्यो की सिद्धि के लिए रक्त का रास्ता नही लेना चाहते । मानव की स्वाभाविक मानवता और सहृदयता पर हमारा दृढ विश्वास है ।

मित्र—हमारे शास्ता बुद्ध ने कहा है, "वैर से वैर नही दूर होता, अवैर से ही वैर दूर होता है ।"

मज्दक—बुद्ध का यह वचन ठीक है । हमने डाकुओ और हत्यारो का गिरोह बनाकर वह सफलता नही प्राप्त की, जिसे आज तुम अयरान मे देख रहे हो ।

मित्र—क्षमा करें, मैं आपके महान् व्यक्तित्व को स्वीकार करता हू, किंतु स्वार्थान्ध मनुष्य की कुटिलता और क्रूरता से भी इन्कार नही कर सकता । क्या

हेफ्तालो की सैनिक सहायता बिना हम अपने प्रभाव को फिर से जमा पाते ?

मज्दक—तुम दूर तक नही सोच रहे हो। तुम आखो के सामने की सफलता और निष्फलता की ओर देख रहे हो। तीन सौ बरस हुए, जब हमारे गुरु मानी की उनके सहस्रो अनुयायियो के साथ हत्या की गई, किन्तु तो भी देरेस्त-दीन—समता के सिद्धात—को भूमि के नीचे दबाया नही जा सका।

मित्र—मैं जानता हू, आपका यह बहुजनहिताय दीन (धर्म) सदा के लिए दफनाया नही जा सकता, किन्तु इसको कुछ समय तक रोका तो जा सकता है, और वह भी लाखो प्राणियो के सहार के साथ।

मज्दक—क्या यह लाखो की बलि बेकार जाएगी ? नही, तुम भूल रहे हो मित्र, यही बलि वह खाद बनेगी, जिसके कारण दुबारा और अधिक सबल अकुर निकलेंगे। यह बलि साधारण मानव को उच्च मानव बनने की प्रेरणा देगी।

—सो ठीक है, किन्तु आज आपके शिष्य-शिष्याओ की क्या हालत होगी ?

—हालत न उनसे छिपी है न मुझसे-तुमसे। देरेस्तदीन बलिदान का दीन है। तुमने ही बुद्ध की कितनी ही जातक-कथाओ को सुनाया है। बोधिसत्व कितने प्रसन्न होते थे, जब उन्हे अपने शरीर को देकर किसी भूखे प्राणी की क्षुधातृप्ति का अवसर मिलता था। सामने देखने मे ऐसा उत्सर्ग भले ही बेकार जान पडता हो, किन्तु दूर तक देखने पर इसका महाफल निश्चित है।

—यह बात तो सर्वथा निराश होने के समय की आत्महत्या-सी मालूम होती है।

—तो महान् उद्देश्य के लिए चरम बलिदान से होनेवाले आत्मप्रसाद पर तुम विश्वास नही रखते ? मन मे विश्वास भले ही न रखते हो, अपने आचरणो से मेरे साथ आज तक तुम क्या करते रहे ? कौन-सी निजी सुख की आशा से तुम अपने को पद-पद पर खतरे मे डाल रहे थे। मैं जानता हू मित्र, आज तुम मेरे और अपने लिए ख्याल नही कर रहे हो, तुम्हारा ध्यान उन लाखो निरपराध नर-नारियो की ओर है, जो हमारे सबध के कारण इस दावाग्नि मे जलकर भस्मसात् होगे। इसके लिए क्या किया जा सकता है ? बहुजन-हित के मार्ग मे फूल नही काटे बिछे है।

मित्र—सो तो प्रत्यक्ष है।

मज्दक ने मित्रवर्मा की पीठ पर स्नेह का हाथ फेरते हुए कहा—तो इसे भी प्रत्यक्ष समझो, कि इन बलिदानो का फल प्रत्यक्ष होकर रहेगा, हमारी आखो के सामने नही, तो हमारी दसवी-बीसवी पीढी के सामने। यदि हमने आज इस बलिदान से मुह मोडा, तो बीसवी क्या सैकडो पीढिया भी पशुओ का ही जीवन बिताती चली जाएगी।

× × × ×

अपादान की महाशाला खचाखच भरी हुई थी। देर की प्रतीक्षा के बाद शाहशाह कवात् आकर आखो मे चकाचौंध पैदा करने वाले अपने सिहासन पर बैठा। लोगो को वर्गानुसार बैठने मे आज कुछ अव्यवस्था-सी थी। शाह के सामने दाहिने पार्श्व मे मगोपतान्-मगोपत गुलनाज तथा पोह्ल विस्माहदात, नेव-शापोरदात अहुर्मुज्द, आतुरफरोगवग, आतुरपत, आतुरमेह्ल, बस्तअफरीद जैसे विस्पोह्ल तथा मगोपत बैठे थे। वहा ही शाही चिकित्सक मसीही-कशीश बाजान भी बैठा हुआ था। बाई ओर वामदात-पोह्ल मज्दक अपने विद्वान शिष्यो के साथ आसीन थे।

शाह की आज्ञा पर गुलनाज ने शास्त्रार्थ आरम्भ करते हुए प्रश्न किया—प्रत्येक स्त्री का बहुत-से पुरुषो के साथ खुला सम्बन्ध रखना कैसे सदाचरण कहा जा सकता है?

एक मज्दकी विद्वान ने उत्तर मे कहा—प्रत्येक पुरुष का बहुत-सी स्त्रियो के साथ खुला सम्बन्ध रखना कैसे सदाचरण कहा जा सकता है, विशेषकर जब कि वह सम्बन्ध भोजन-वस्त्र की प्राप्ति की आशा से

अभी वाक्य समाप्त भी नही हुआ था, कि शाह का सिहासन खाली हो गया, एव उसके सामने का पर्दा गिरता दिखाई पडा। इसी समय बायें पार्श्व से सैकडो सैनिक मज्दक और उनके अनुयायियो पर टूट पडे, उन्होने उन्हें सजग होने का मौका दिए बिना बाध लिया। अपादान के ऊपरी भाग में बैठने वाले सज्जन कौतूहल-पूर्ण दृष्टि से और अच्छी तरह देखने की कोशिश कर रहे थे। सिहासन से दूर की ओर बैठे लोगो मे आतक छा गया था, किन्तु खुर्रमवाश की गरजती आवाज ने उन्हे अपनी जिह्वा पर ही नही शरीर पर भी अकुश रखने के लिए बाध्य किया।

नगर की सडको पर इसी समय खून की नदिया वह रही थीं। खुसरो ने बडे मज्दकी नेताओ को अपादान मे ही बाध लिया था। शाही सैनिक तथा थिस्पोह्ल, मगोपत और वचुर्क अपने अनुचरो के साथ राजधानी के नेताहीन मज्दकानुयायियो का नरमेध कर रहे थे। खुसरो ने आज्ञा दे दी थी—नर-नारी, बाल-वृद्ध का कोई विचार न कर जो भी मज्दक-पथी मिले, उसे तलवार के घाट उतारो, उनको लूट लो, उनकी पुस्तको और पूजा-स्थानो को जला डालो।

× × × ×

राजप्रासाद के मैदान मे एक भीषण दृश्य उपस्थित था। वहा एक वीभत्स उद्यान तैयार किया गया था, जिसमे मज्दक-पथियो को सिर से कमर तक भूमि मे गाड दिया गया था, उनके दोनो निश्चल पैर ऊपर निकले पत्रशाखाहीन डालोवाले वृक्षो की भाति हज़ारो की सख्या मे पानी मे खडे थे। खुसरो स्वय मज्दक को पकडे वहा लाकर बोला—देखो, अगेरामैन्यु के वशज, यह तुम्हारे स्वर्ग का उद्यान है, जिसे तुम्हारे अनुयायियो ने अपने शरीरो से तैयार किया है।

मज्दक अपने चेहरे और स्वरो मे ज़रा भी विकार लाए बिना बोले—खुसरो, तुम्हारी बात ठीक है। मैं और मेरे भाई अपने शरीर को भूमिशात करके भूमि पर स्वर्ग तैयार कर रहे है। तुमने सोचा होगा, उन्हे हज़ारो की सख्या मे यहा गडवाकर और लाखो की सख्या मे उन्हे मरवाकर उस स्वर्ग की नीव को मैंने सदा के लिए उन्मूलित कर दिया।

—हा, मैंने मज्दक पापी से अयरान की पाकभूमि को मुक्ति दिला दी।

—अभी तुम बच्चे हो शाहपोह्ल, अयरान की भूमि और सारे ससार की भूमि एक दिन मुक्त होगी, किन्तु उसके मुक्तिदाता तुम नहीं होगे। तुम्हारा तो नाम भी उस समय विस्मृति के निविडान्धकार मे विलीन हो गया रहेगा, यदि वह स्मरण भी रहेगा, तो लोग तुम्हारे नाम पर थूकेंगे।

क्रोधान्ध हो खुसरो ने मज्दक के मुह पर थूकते हुए कहा—और मैं अभी तेरे मुह पर थूकता हू पापी।

मज्दक—यह शरीर तुम्हारे हाथ मे है खुसरो, चाहे इस पर थूको या उन्हीं की तरह इसे भी गाडकर वृक्ष बना दो, परन्तु सत्य की आवाज को सुनना होगा।

—सत्य की आवाज ? वामदातपोह्ल और सत्य ।

—हा, दोनो एक जगह असम्भव । किन्तु, यह जो लाखो निरपराधो के खून से तुमने अपना हाथ रगा है, क्या इसके लिए तुम्हारे हृदय मे जरा भी ग्लानि नही होती ?

—सपोले को साप बनने से पहले ही कुचल देना चाहिए ।

—शायद उनमे कितने ही सपोले न भी होते, जिन बच्चो को तुमने तलवार के घाट उतारा, कहो उन्होने तुम्हारा क्या बिगाडा था ? उन्हे भी अहुरमज्दा ने तुम्हारी ही तरह इस दुनिया मे जीने के लिए भेजा था। तुमने लोभान्ध हो न्याय को नही पहचाना, दया को दुत्कारा ।

—मैने न्याय को नही पहचाना—खुसरो ने कडकती आवाज मे कहा—मै न्यायमूर्ति बनूगा, मुझे लोग अनवशकरवा दादगर (न्यायकारी) कहेगे ।

—कितने दिनो तक ? कैसर और शाह स्वय पदविया धारण कर लिया करते है । कितने ही समय तक उनका चलन भी हो पडता है, किन्तु अत मे ये लाखो मुड कटे हो न्याय की पुकार करेगे, जिन्हे कि तुम्हारे और तुम्हारे अनुचरो के हाथो ने धड से अलग किया ।

—नीच, साप की सतान, मुझे मत भरमा । मैं कवात् नही हू ।

—काश तुम कवात् होते, कम से कम उसकी आयु मे कवात् होते । मारना था तो मुझे मारते, और मेरे जैसे हजार दो हजार को मार देते, यदि तुम समझते थे कि हम तुम्हारे और सिहासन के बीच मे बाधा डालने वाले हैं । मुझे तुम पर क्रोध नही आता, तुम्हारे स्थान पर दूसरा भी ऐसा ही करता और करेगा । राज्य के लोभ मे, भोग की लिप्सा मे आदमी क्या नही करता ? यही लोभ राजपुत्रो को जनकभक्षी बना देती है । शाहपोह्ल, मुझसे मत रुष्ट हो । क्या कहा था 'मुझे अनवश-करवा (नौशेरवा) दादगार कहेगे ।" अच्छा जो किया सो किया, अब से तुम अनवश-करवा बनने की कोशिश करना ।

खुसरो ने उपेक्षा दिखाते अपने जल्लादो को हुक्म दिया । कुछ ही क्षणो मे उस मधुर स्वप्न के द्रष्टा को शूली पर चढा दिया गया, और उस पर सैकडो धनुर्धरो ने तीरो की वर्षा की ।

परिशिष्ट

मज्दक काल्पनिक नही एक ऐतिहासिक व्यक्ति थे। उनके सम्बन्ध की जो बातें इस उपन्यास मे लिखी गई हैं, उन्हे बिलकुल काल्पनिक न समझ लिया जाए, इसलिए आवश्यक है, कि मज्दक और उनके दीन के सम्बन्ध मे प्राप्त ऐतिहासिक सामग्री मे से कुछ नमूने की भाति पाठको के लिए एकत्रित कर दी जाए। हमारा उपन्यास ४९२ ई० से शुरू होता है। उस वक्त कवात् को सिहासन पर बैठे दस वर्ष हो गए थे। पीरोजा पुत्र कवात् सासानी वश (२८ अप्रैल २२८ ई० मे ६४२ ई० तक) का उन्नीसवा शाहशाह था और उसके गद्दी पर बैठने के समय (४८८ ई०) सासानी वश को राज्य करते २६० वर्ष हो चुके थे। सासानी वश ने ४१० वर्ष राज्य किया। इतना दीर्घ शासन दुनिया मे बहुत कम राजवशो का पाया जाता है। इस सारे समय मे ईरान विश्व का एक शक्तिशाली राज्य रहा।

मज्दक के सम्बन्ध मे जो सामग्री मिलती है, उसमे सबसे पुरानी ईसाई लेखको की कृतिया है, जिनमे अपने धर्म का इतिहास लिखते हुए प्रसगत ईरानी शाहशाहो का जिक्र आ जाता है। उसके बाद दूसरा स्रोत पारसी लोगो की पुस्तकें हैं और तीसरी और अतिम सामग्री मुसलमान लेखको की अरबी-फारसी की पुस्तको मे मिलती है।

१–ईसाई इतिहासकार

(१) **योशू स्तीलित**—इस ईसाई इतिहास-लेखक ने अपने ग्रथ[१] को ५०७ ई० के आस-पास लिखा, अर्थात् उस समय जब कि कवात् दुबारा सिहासन पर

१—*The Chronicle of Joshua Stylite*
(Cambridge 1882)

बैठ चुका था। इसमे ४६४ ई० से ५०६ ई० तक की बातें आई हैं। योशू अपने ग्रंथ के नवें अध्याय मे लिखता है—हेफ्तालो (श्वेत हूणो) से पीरोज (४५९–८४ ई०) ने दो बार हार खाई। दूसरी बार (४८४) पराजित होकर वह बन्दी बना। अपनी मुक्ति के लिए उसने अपने पुत्र कवात् को जमानत के तौर पर शत्रु के हाथ मे दे दिया।

उसके बाद उसका भाई बलाश (४८४–८८ ई०) गद्दी पर बैठा। बलाश के पास सिपाहियो का वेतन चुकाने के लिए खजाने मे पैसा नही था, उसने "मोबिदो के धार्मिक नियमो को तोडते हुए देश मे गर्मावा (स्नानागार) बनवाए।" जिससे मोबिद (धर्माचार्य) नाराज हो गए। उन्होने उसे गद्दी से उतार कर अंधा कर दिया और पीरोज-पुत्र कवात् को गद्दी पर बैठाया। कवात् ने हूणो को देने के लिए रोमक सम्राट् अनस्तास (४९१–५१८ ई०) से आर्थिक सहायता की माग की, और न देने पर आक्रमण करने की धमकी दी। लेकिन सम्राट् ने "उसके अनुचित सदेश को सुना, अयुक्त चाल को पहिचाना और जाना कि जर्थुस्त्रियो ने उसे पतित कर दिया है, क्योकि उसने सम्मिलित-पत्नी की आज्ञा निकाली, जिससे इच्छा होने पर जो कोई भी जिस किसी स्त्री के साथ समागम कर सकता है।" इसलिए सम्राट् ने उसकी बात न मानते सदेश भेजा कि जब तक शहर नसबी हमे लौटा नही दिया जाता, तब तक बात नही मानी जा सकती। फिर उक्त लेखक २३ वें अध्याय मे लिखता है—"ईरान के बडे लोगो ने भी चुपके-चुपके कवात् के विरुद्ध षड्यत्र रचना शुरू किया और उसे मार कर देश को उसके अनुचित कानूनो से मुक्त करना चाहा। कवात् ने जब इस बात को जाना, तो वह देश छोडकर हेफ्तालो (श्वेत-हूणो) के राज्य मे भाग गया। वहा के राजा के पास वह पहिले जमानत के तौर पर रह चुका था। उसके बाद उसके भाई जामास्प (गामास्प) को उसके स्थान पर ईरान की गद्दी मिली। कवात् ने हेफ्तालो की भूमि मे अपनी बहन की लडकी से व्याह किया। जिस युद्ध मे पीरोज मारा गया, उसी मे यह बहन हेफ्तालो के हाथ मे बदिनी हुई और शाह की कन्या होने से हेफ्तालो के राजा ने उसे अपनी रानी बनाया। उससे एक लडकी हुई थी। कवात् जब हेफ्ताल-राजा के यहा शरणागत था, तो उसकी बहन की लडकी कवात् को व्याह दी गई। कवात् राजा का दामाद बन के बहुत मुह-लगा हो गया। वह सदा उसे कहता रहता, मेरे साथ सेना कर दो, जिसमे मैं ईरान के

वचुर्कों को दण्ड देकर अपने हाथ से गए राज्य को लौटा सकू। अंत मे ससुर ने उसकी इच्छा को मानकर उसे काफी सेना दी। कवात् सेना ले ईरान लौटा। उसका भाई खबर पाके भाग गया और कवात् ने सफल मनोरथ हो ईरान के वचुर्कों को मरवाया।

योशू ने आगे ईरान और पूर्वी रोमक साम्राज्य के युद्धो के बारे मे लिखा है, जिसका कारण उसने कवात् को ठहराया है। ५०१ ई० मे कवात् ने रोमको की भूमि को वरवाद किया, थ्योदोसियसपोलिस (अर्जरूम) नगर पर अधिकार करके उसे लूटा तथा जला दिया और शहर के लोगो को बन्दी बनाया। ५०६ ई० मे अमिदा नगर पर भी अधिकार करके उसे लूटा। युद्ध मे अस्सी हजार से अधिक आदमी मारे गए और उनसे भी अधिक को शहर से बाहर ले जाकर पथराव करके तिग्रा (दजला) मे डाल दिया या और तरह से मार डाला। अमिदा मे कवात् ने यूनानी गर्मावो (स्नानागारो) को देखा और उनमे स्वय स्नान किया। उसे ये गर्मावे इतने पसन्द आए कि लौटने पर देश के सभी नगरो मे गर्मावा बनाने की आज्ञा दी।

(२) **प्रोकोपियस**[1] (५२७ ई०)—यह पूर्वी रोम (विजतीय) साम्राज्य का प्रसिद्ध इतिहास-लेखक है। ५२७ ई० मे रोमक सेनापति वेलीजे का कानूनी सलाहकार वन के उसके साथ रहा। उसने कवात् के शासन के अन्तिम समय को देखा था। उसने ईरान मे जाके कवात् के बारे मे जो कुछ सुना था, उसे लिपिवद्ध किया। ईरानी बादशाह पीरोज (४५६–८४ ई०) हेफ्तालो[2] के युद्ध मे मारा गया। यह हेफ्ताल श्वेत हूण भी कहे जाते हैं, क्योंकि हूणो कवीलो मे यह सफेद और सुन्दर होते थे और इनका सामाजिक और सास्कृतिक तल भी ऊचा था। ग्रथ के तीसरे चौथे अध्याय मे उसने लिखा है—

"जब कवात् को राज्य का अधिकार मिला, तो उसने नये दुराचार आरम्भ कर दिए और नये नियम चलाए, जिनमे एक सम्मिलित पत्नी का नियम था। लोगो को यह बुरा लगा। उन्होंने विद्रोह करके उसे सिंहासन से हटाकर कारा मे वन्द कर दिया और उसकी जगह पीरोज के भाई वलाश (जामास्प) को गद्दी

१—Procopios Justinien (Leipzig 1789)

२—"हफ्तलिक" (पहलवी) "हपताल" (अमनी) "हैताल" (फारसी), "हेताल" (अरवी)।

पर बिठाया। बलाश ने ईरान के बुजुर्गों को एकत्रित करके कवात् के बारे मे उनकी राय मागी। अधिकाश मृत्युदण्ड के विरुद्ध थे, लेकिन हेपताल के सीमा पर के सेनापति और "कनारग" के ऊचे पद पर आरूढ गज्नस्पदात ने नख काटने के छोटे चाकू को दिखाते हुए कहा—यह छोटा चाकू वह काम कर सकता है, जिसे हजारो सैनिक पुरुष करने मे असमर्थ हैं। लेकिन बुजुर्गों (आमात्यो) ने उसकी बात नही मानी और कवात् को "विस्मृति दुर्ग" मे बन्द करने का दण्ड दिया। इस कारा का नाम "विस्मृति दुर्ग" इसलिए पडा कि उसके बन्दी दिल मे बिल्कुल विस्मृत कर दिए जाते हैं और उनका नाम भी लेने पर मृत्यु-दण्ड का भागी होना पडता है। पाचवे अध्याय मे लिखा है—कवात् की स्त्री बहुत सुन्दरी थी। दुर्ग का कोतवाल उसके प्रेम मे फस गया। स्त्री ने यह बात कवात् से कही। कवात् ने कोतवाल की बात मान लेने को कहा, कोतवाल उस पर मुग्ध था, इसलिए उसे कवात् के पास जाने की छुट्टी दे दी। इसी समय ईरान के वचुर्कों मे से एक सियावरश ने, जो कि कवात् का भक्त था, मौका पाके दुर्ग से शाह को मुक्त करा लिया। उसने कवात् को स्त्री द्वारा सूचित कर दिया था, कि सवारी के लिए घोडे कारागृह के निकट प्रतीक्षा कर रहे हैं। एक दिन शाम को कवात् ने अपनी स्त्री को अपनी पोशाक पहिनने को कहा और स्वय स्त्री की पोशाक पहिन के जेल से भाग गया। स्त्री कवात् की पोशाक पहिने वहा मौजूद रही, इसलिए रक्षको ने समझा, कि यह कवात् है और इस तरह भागने की बात कई दिनो तक गुप्त रही।

सियावरश की सहायता से कवात् कारा से भागा और उसके साथ हेफ्तालो के राज्य मे गया। वहा के राजा ने उससे अपनी लडकी का ब्याह कर काफी सेना दी। कवात् जब गज्नस्पदात के प्रदेश मे पहुचा, तो अपने आदमियो से बोला—जो कोई आज मेरी आज्ञा को पहिले स्वीकार करेगा, उसे कनारग का पद मिलेगा। ऐसा मुह से निकालने के बाद उसे जल्दी ही अफसोस होने लगा, जब कि उसे स्मरण आया, कि ऐसा कहना उचित नही है, क्योकि राज्य के नियम के अनुसार वह पद पुश्तैनी है, और किसी दूसरे आदमी को नही दिया जा सकता। सयोग से पहला तरुण जिसने उसकी आज्ञा स्वीकार की, वह आजुर-गुन्दपत था, जो गज्नस्पदात के वश का था। इस प्रकार कवात् नियम का उल्लघन किए बिना अपना वचन पालन कर सका। कवात् ने बडी आसानी से अपने

राज्य पर अधिकार कर लिया। अपने अनुयायियो मे परित्यक्त हो वलाश (जामास्प) दो साल राज्य करने के बाद बन्दी हो अंधा बना। कवात् ने गज्न-स्पदात को भी मरवा दिया और उसका स्थान आजुर-गन्दपत को दिया। सियावख्श को अर्तशतारान-सालार (महासेनापति) का पद दिया। वही इस पद का प्रथम और अंतिम अधिकारी हुआ।

कुछ समय बाद कवात् ने पूर्वी रोम (विजतीय) के सम्राट अनस्तास मे पैसे की माग की, जिसमे हेफ्ताली सिपाहियो को वेतन दिया जा सके। रोम-सम्राट के इन्कार करने पर कवात् ने हेफ्ताल सेना ले रोम राज्य पर चढाई की। उसने अर्मनी पर आक्रमण किया और अमिदा नगर को बहुत दिनो तक घेरे रखा। इसी समय कुछ हूणी कबीलो ने उत्तरी ईरान मे लूट-मार की। कवात् को लाचार होकर उनसे लडने के लिये लौट जाना पडा। उसने उनसे लडकर खजारो के दरवद को अपने हाथ मे कर लिया और लौटकर फिर रोम मे लडाई छेडी।

कवात् का द्वितीय पुत्र जाम पिता का उत्तराधिकारी नही हो सकता था, क्योकि वह एक आख का काना था। ज्येष्ठ पुत्र काबूस पर उसका ममत्व नही था। वह बहुत चाहता था, कि राज्य का अधिकार सबसे छोटे पुत्र खुसरो को मिले, जो कि अस्पाहपत (सेनापति) की बहन से पैदा हुआ था। लेकिन जाम कवात के सभी पुत्रो मे बहादुर था और अधिकतर ईरानी उसके पक्ष मे थे। कवात् को भय होने लगा, कि मेरे मरने के बाद खुसरो को राज्य पाने मे बाधा डाली जाएगी। उसने अपने दूत रोम-सम्राट जुस्तीन (५१८-२७ ई०) के पास भेजकर पक्की सुलह की बात का सदेश भेजते हुए इच्छा प्रकट की, कि सम्राट् शाहजादा खुसरो को अपना पुत्र स्वीकार करें। सम्राट जुस्तीन और उसका भतीजा जुस्तीनियन (५२७-६५ ई०) उसकी प्रार्थना स्वीकार करने के लिए तैयार थे, लेकिन मत्री प्रोक्लस ने इसे असभ्य जातियो की रीति कहकर स्वीकार न करने की राय दी। अत मे सुलह की बात के लिए प्रतिनिधि भेजना तय हुआ। शाह की ओर से सियावख्श और माहपत नियुक्त किए गए, जिन्होने सीमान्त पर रोम के प्रतिनिधियो से भेंट की। लेकिन बात नही हो पाई और खुसरो को पुत्र बनाना स्वीकार नही किया गया। खुसरो पुत्र बनकर रोम जाने की इच्छा से सीमात पर आया था, वह क्रुद्ध हो पिता के पास लौट गया। माहपत ने लौटकर कवात् के पास सियावख्श के बारे मे शिकायत की और उस पर बहुत से दोष

लगाए, जिनमे एक यह भी था, कि दोनो राज्यो मे सुलह न होने देने मे सियावख्श का हाथ है। अपराधो की जाच के लिए सभी वचुर्क एकत्रित किए गए। उनके दिल मे भी भारी घृणा थी। वह सियावख्श को अरजमन्द के पद पर देखकर जल भुन गए थे। सियावख्श अपनी न्यायप्रियता और उचित आचरण के कारण दूसरे वचुर्को से अपने लिए अधिक अभिमान रखता था, इसलिए वह भी उससे ईर्ष्या करते थे। उन्होंने उस पर और नए अपराध लगाए—सियावख्श ईरान के कानून, आचार-विचार को स्वीकार नही करता, और दूसरे वगो को पूजता है। उसने हाल मे मरी अपनी पत्नी के शव को धर्म-विरुद्ध मिट्टी मे दफनाया। अत मे उन्होंने सियावख्श को मौत की सजा दी। कवात् का उस पर स्नेह था, लेकिन उसे देश के कानून को मानने के लिए मजबूर हो फैसले को मानना पडा। अरतारान-सालार का पद भी उसी समय उठा दिया गया।

कुछ ही समय बाद (५२७ ई०) सम्राट् जुस्तीन मर गया और उसके उत्तराधिकारी जुस्तीनियन ने ईरान और रोम के युद्ध को फिर से आरम्भ कर दिया। ईरानी सामन्त पीरोज मेहरान ने युद्ध मे हार खाई। लडाई तब भी जारी रही। इसी समय कवात् सख्त बीमार पडा। माहपत पर उसका सभी वचुर्को से अधिक विश्वास था। उसके कहने पर माहपत ने खुसरो को गद्दी देने के बारे मे अपना इच्छापत्र लिखा। कवात् के मरने पर ज्येष्ठ पुत्र कावूस ने गद्दी के लिए दावा किया, लेकिन माहपत ने पत्र दिखलाकर उसके दावे को नही माना। दूसरे वचुर्क भी उसके साथ हो गए और खुसरो (नौशेरवा) सिंहासन पर बैठाया गया।

(३) आगाथियस (५८३)[1]—इस यूनानी इतिहासकार ने अपनी पुस्तक मे कितनी ही बातें कवात् के बारे मे लिखी हैं। उसने अपने ग्रंथ मे राजधानी तस्पोन मे मौजूद शाही वर्षपत्रो और दूसरे लिखितमो का उपयोग किया था, इसलिए इसकी बातो मे अधिक प्रामाणिकता है। वह वलाश के चार साल के शासन (४८४-८८ ई०) के बाद की बातो को लिखते हुए कहता है—"उसके बाद पीरोज-पुत्र कवात् ईरान का बादशाह हुआ। उसने रोमक और पडोसी बर्बरो के साथ बहुत-सी लडाइया लडी और बहुत-सी विजय भी प्राप्त की।

1 Agathias

उसके समय मे राज्य मे एकता और शाति रही। कवात् अपनी प्रजा के साथ नरमी और सहानुभूति से पेश आता था। उसने पुराने नियमो को उठाकर लोगो के जीवन मे क्रान्ति लाते हुए सनातन सदाचारो को उलट दिया। कहते हैं इस राजा ने नियम बना दिया, कि स्त्रियो का सम्बन्ध सभी पुरुषो से बिना भेद भाव के हो। इस कानून मे पुरुष का अपनी इच्छानुसार किसी भी स्त्री, यहा तक कि पतिवाली के साथ भी सम्बन्ध और सभोग करना विहित था। इस कानून के कारण पाप बहुत बढ गया। ईरानी क्षत्रप इसके विरुद्ध घृणा प्रकट करने लगे और अत मे यही कानून राजद्रोह और कवात् को गद्दी से उतारने का कारण हुआ। इस प्रकार ग्यारह साल राज्य करने के बाद ईरानियो ने कवात् को सिंहासन से उतार विस्मृति-दुर्ग मे डाल दिया, और पीरोज के दूसरे पुत्र जामास्प को गद्दी पर बिठाया। लेकिन कवात् ने थोडे ही समय बाद अपनी स्त्री—जिसने उसकी मुक्ति के लिए अपनी जान तक की परवाह नही की मदद से उसकी तथा दूसरे ढग से भाग कर हेफ्तालो के राज्य मे जा वहा के राजा से सहायता मागी। राजा ने उसे बडे प्रेम से रखा और उसके शोक को मीठी बातो और आशापूर्ण वाक्यो से दूर करना चाहा। वह एक खान (भोजन करने के वस्त्र) पर भोजन करते और मित्रता की चिरस्थिति के लिए साथ मदिरा पीते। राजा ने उसे बहु-मूल्य वस्त्राभूषण दिए और स्नेह दर्शाने के लिए जो कुछ हो सकता था, किया। थोडे ही समय बाद उसने अपनी कन्या भी ब्याह दी। फिर काफी सेना के दुश्मनो को हराने और सिंहासन को फिर से लौटा पाने के लिए उसे ईरान की ओर रवाना किया। कवात् ने बिना अधिक कठिनाई या खतरे के राज्य पर फिर से अधिकार कर लिया। पहले ग्यारह सालो के बाद ३० साल और कवात् ने राज्य किया। इस बादशाह का शासन काल ४१ वर्ष का था।"

(४) जीन मलाल[1]—(५६५ ई०) इस यूनानी इतिहासकार का जन्म अन्तियोक मे हुआ था। यह लिखता है—"इसी समय (जुस्तीनियन सम्राट के जमाने मे) ईरान मे मानी (मज्दकी) धर्म का प्रचार हुआ। जब बादशाह को यह बात मालूम हुई, तो वह बहुत कुपित हुआ। ईरान के मोबिद (पुरोहित) भी क्रुद्ध हुए। मानी के अनुयायियो का नेता अन्दर्जगर (अन्दजगर) नामक

---

1. Jean Malala

स्थित था। कवात् ने एक साधारण सभा बुलाई और हुक्म दिया, कि उनके धार्मिक नेता के साथ सभी मानी-पथियो को पकड लिया जाय। उक्त सभा मे ज्ञान के बाद पहिले से तैयार सिपाहियो को कवात् ने धर्मोपदेशको को तलवार के घाट उतारने का हुक्म दिया। उनकी हत्या शाह के आखो के सामने की गई। इसके अतिरिक्त उनकी सपत्ति जब्त कर ली गई, उनके मन्दिर ईसाइयो को दे दिए गए। देश मे चारो ओर आज्ञा भेजी गई, कि जो भी मानीपथी हाथ आए, उसे मार डाला जाए तथा उनकी पुस्तको को जला दिया जाए।" मलाला की यह पुस्तक लुप्त हो गई है, किन्तु उसके कितने ही उद्धरण तिमोथियस ने अपने ग्रथ मे दिए है।

(५) थेवफानिस[1]—(७५०-८१ ई०)—इस विजतीय इतिहासकार ने लिखा है—"ईरानी बादशाह पीरोज-पुत्र ने एक दिन मे मानी के हजारो अनुयायियो, उनके धार्मिक नेता अन्दर्जगर तथा उस धर्म को मानने वाले दूसरे ईरानियो को मरवा डाला। इसका तृतीय पुत्र फ्तास्वारसान (पत्शरवार—शाह—काबूस) कवात् की अपनी बहिन सम्बिका से उत्पन्न और मानी का अनुयायी था। उसने उनके दीन की शिक्षा पाके उसे स्वीकार किया था। अनुयायियो ने उसके पास चिट्ठी भेजी—'तुम्हारा पिता बूढा है, यदि वह मर गया तो मोबिद (पुरोहित) अपने धर्म को अधिकारारूढ करने के लिए तुम्हारे भाइयो मे से किसी को बादशाह बनाएगे। हम चाहते हैं, कि तुम्हारे पिता को सामने रहकर राजी करे, जिसमे वह राज्य छोड तुम्हे गद्दी पर बिठा दे। फिर मानी के धर्म को हम सब जगह प्रचलित कर सकेंगे।" कवात् को जब इस बात का पता लगा, तो उसने अपने पुत्र फ्तास्वारसान को गद्दी देने के लिए साधारण सभा बुलाने की आज्ञा दी और मानी के अनुयायियो को अपने धार्मिक नेता तथा भक्तो के साथ सभा मे आने के लिए कहा। साथ ही उसने मगोपतान्-मगोपत् गुलनाज तथा दूसरे मगोपतो एव अच्छे चिकित्सक तथा अपने कृपापात्र ईसाई विशप बाजानस् को भी आने के लिए निमन्त्रित किया। उसने मानी के अनुयायियो मे सभा मे कहा "तुम्हारा धर्म मुझे पसद है। मैं चाहता हूं कि अपने जीवन ही मे राज्य को फ्नास्वारसान को दे दू। तुम सब लोग एक जगह जमा हो जाओ, जिसमे

---

1 Theophanes

कि मैं उसे बादशाह निर्वाचित करू।" मानी के अनुयायी विश्वास करके एक जगह जमा हो गए। कवात् ने सिपाहियो को वहा बुलवा के उनके धार्मिक नेता के साथ सबको तलवार के घाट उतरवा दिया। इसी वक्त सारे देश मे आज्ञा भेज दी कि मानी-अनुयायियो को जो कोई जहा भी पाए, मार डाले, उनकी सपत्ति राजकोष के लिए जब्त कर ले तथा उनकी पुस्तको को आग मे जला डाले।

२—पारसी धार्मिक ग्रन्थ

आज पारसी-ग्रथ जो उपलब्ध हैं, वह एक विशाल साहित्य के अवशिष्ट-मात्र हैं। वदीदाद की पहलवी टीका और दूसरे ग्रथो मे कही-कही उदाहरण या सकेत के तौर पर मज्दक का नाम आया है। "कोई पापी नास्तिक लोगो को भोजन से जबर्दस्ती रोकता है, जैसे कि मज्दक वामदात-पुत्र लोगो को भूख और मृत्यु के हाथ मे सौंपता है "

बहमन-यस्त[१] (खड २, वाक्य २२) की टीका मे लिखा है—"कवात्—पुत्र खुसरो ने अपने शासनकाल मे धर्म के शत्रु पापी वामदात-पुत्र मज्दक को दूसरे काफिरो के साथ इस धर्म से दूर किया।"

पारसी पुस्तको मे मज्दक का बहुत ही थोडा उल्लेख आया है।

३—इस्लामी ग्रन्थ

इस्लाम के ईरान-विजय (६४२ ई०) के बाद ईरान मे पारसी ग्रथो की वही हालत हुई, जो कि मानी और मज्दक के ग्रथो के साथ पारसियो ने की थी। पारसी धर्म की बहुत कम पुस्तकें बचकर भारत आ सकी। लेकिन, इस्लाम की आरम्भिक शताब्दियो मे ईरानी और अरब विद्वानो ने पुरानी पुस्तको के आधार पर लिखे अपने ऐतिहासिक ग्रथो मे मज्दक का जिक्र किया है। यहा हम उनके ग्रथो से कुछ बातें दे रहे हैं।

१—"दीनकर्त" (पेस्टन जी बम्बई)

(१) याकूबी[1] (२७८ हिजरी, ८९१ ई०)—याकूबी के अनुसार कवात् छोटी उमर मे गद्दी पर बैठा और सोखा उसके नाम से राज्य-सचालन करता रहा। वयस्क होने पर सोखा का प्रभाव उसे पसद नही आया और उसे उसने मरवा कर उसका स्थान मेहरान को दे दिया, जिस पर कहावत प्रसिद्ध हुई "सोखा की हवा खत्म हुई, मेहरान की हवा उठी।"[2] सोखा के मरवाने से रुष्ट हो ईरानियो ने कवात् को गद्दी से उतारकर वदीखाने मे डाल दिया और उसके भाई जामास्प को वादशाह वनाया। कवात् की वहन ने भाई से भेंट करने जेल मे जाना चाहा। जेल के अधिकारी ने उसे इजाजत दे अनुचित माग पेश की। स्त्री ने मासिक धर्म का वहाना करके उसके हाथ से छुटकारा पाया। फिर उपाय मालूम करके वदीखाने मे पहुची और अपने भाई को बिछौने मे लपेटकर एक वलिष्ठ दास की पीठ पर उठवा वदीघर से वाहर ले आई।[3] कवात् इस प्रकार जेल से निकल हेफ्ताल राज्य की ओर भागा। रास्ते मे अवहरशहर (नेशापोर) मे पहुच एक आदमी के घर पर ठहरा। वाप ने अपनी तरुणी कन्या को उसकी सेवा के लिए भेजा, जिससे कवात् का प्रेम हो गया। कवात् एक साल हेफ्ताल-भूमि मे रहा और वहा के राजा से अपना राज्य वापस पाने के लिए सिपाही प्राप्त किए। लौटते समय जव अवहरशहर मे पहुचा तो उस कन्या से एक पुत्र हो चुका था। कवात् ने उसका नाम नौशेरवा रखा। फिर उसने ईरान मे पहुच दुवारा राज्य प्राप्त किया।

आगे याकूबी ने लिखा है—कवात् ने राज्य का काम-काज अपने पुत्र नौशेरवा को दे दिया, और मरने के समय उसे कई अच्छे उपदेश दिए। खुसरो नौशेरवा ने गद्दी पर बैठने के वाद मज्दक को—जिसने नया धर्म चला के धन और सपत्ति मे सभी को साझीदार वना दिया था—मरवा डाला।

२—दीनवरी[4] (मृत्यु ८९५ ई०)—दीनवरी ने अपनी पुस्तक "अखवारु तवीलन्" मे लिखा है—पीरोज पुत्र वलाश की मृत्यु के वाद उसके भाई कवात्

१—अहमद विन्-अवा-याकूव विन् वाजेह।
२—"वादे सोखा फरो खिपत व वादे-शापूर वर्खास्त"।
३—"अल्वलदान्"।
४—अव्-हनीफा अहमद विन्-दाउद दीनवरी।

को गद्दी मिली। वह उस समय पन्द्रह साल का था और अभी राज-काज मे अनभिज्ञ था। सारी शक्ति सोखा ने अपने हाथ मे ले रखी थी और लोग कवात को तुच्छ दृष्टि से देखते थे। पाच साल राज्य करने के बाद कवात् को यह स्थिति असह्य हो गई और उसने षड्यन्त्र करके सोखा को मरवा दिया। आगे दीनवरी कहता है—

"कवात् को राज करते दस साल बीत गए थे, कि इस्तख्र निवासी मज्दक नामक एक आदमी उसके पास आया। उसने उसे मज्दकी धर्म सिखलाया। (निहाया मे जिसका कर्त्ता अज्ञात है, कवात् को राज्यसिंहासन पर बैठते समय १७ साल का लिखा है और मज्दक को निसा-निवासी बतलाया गया है। वहा यह भी लिखा गया है, कि मज्दक के पास एक ईरानी सामन्त खरकान-पुत्र जरदुश्त भी था।) दीनवरी के अनुसार कवात् ने मज्दक का धर्म स्वीकार किया, जिससे ईरानी बहुत नाराज हो गए। वह उसे मारना चाहते थे। ("निहाया" के अनुसार कवात् ने मज्दक के धर्म को बाहर से स्वीकार किया था, लेकिन ईरानियो ने उसे सचमुच समझा) कवात् ने बहुतेरा समझाना चाहा, लेकिन उन्होने नही माना और उसे सिंहासन से उतारकर उसके भाई जामास्प को गद्दी पर बिठा दिया।"

लेखक ने आगे लिखा है कि कैसे कवात् अपनी बहिन की मदद से भागा और उसके पाच विश्वासपात्र मित्रो ने सहायता की, जिनमे सोखापुत्र जरमहर भी था। वह उस जगह पहुचे, जहा अहवाज (सूश) और अस्पहान की सीमा है। वहा कवात् ने जरमहर की सहायता से एक ग्रामपति की लडकी से ब्याह किया। लडकी ने पीछे अपने पिता से जब कहा कि उसका प्रेमी लाल रग के जरबफ्त का पाजामा पहिने था, तो उसको विश्वास हो गया, कि वह कोई राजकुमार था। कवात् आगे हेफ्तालो की भूमि की ओर गया। वहा के राजा ने सेना से उसकी सहायता की, जिसके बदले मे कवात् ने चगानियान (निहाया तालकान) के प्रदेश को उसे दे दिया। तीस हजार हेफ्ताल सिपाहियो के साथ कवात् लौटा। रास्ते मे अपनी स्त्री से हुए बच्चे को देखा। उसने बच्चे का नाम खुसरो रखा। कवात् अपनी स्त्री और बच्चे को लिए राजधानी (मदायन) की ओर लौटा। ईरानियो ने जो बर्ताव उसके साथ किया था, उसपर अब वह लज्जित थे। सभी उसके भाई जामास्प को लिए उसकी शरण मे क्षमा प्रार्थी

हुए। कवात् ने उन्हे क्षमा कर दिया। राजप्रासाद मे जा उसने हेफ्ताल सिपाहियो को इनाम देकर लौटा दिया। कवात् के मरने पर खुसरो गद्दी पर बैठा। उसने मज्दक और उसके अनुयायियो को पकडकर मरवा डाला।

(३) तिब्री[1] (८३८–६२२ ई०)—इस इतिहासकार ने लिखा है—जब खुसरो गद्दी पर बैठा, उसी समय निसा (फसा)-निवासी खरकान पुत्र जरदुश्त नामक एक नास्तिक आदमी ने जरदुश्त के धर्म मे गडवडी करके वहुतो को अपने मत मे कर लिया था। उसका काम वडे जोर से चल निकला। उसके अनुयायियो मे एक नदरिया-निवासी वामदातपुत्र मज्दक भी था। इस आदमी ने लोगो को स्त्री और सम्पत्ति साझी रखने के लिए शिक्षा दी और कहा कि इस बात को भगवान् बहुत पसन्द करते हैं और ऐसा करने वालो को भारी फल मिलेगा। चाहे ऐसा धार्मिक आदेश और विधान न भी हो लेकिन जो कुछ अपने पास हो, उसे आपस मे बाटकर उपभोग करना चाहिए। इस तरह कह-कहकर उसने गरीबो और भुक्खडो को अमीरो और धनाढ्यो के खिलाफ भडकाया। इस तरह नीच आदमी कुलीनो के साथ वर्ण-सकरित हो गए। अत्याचार बढ़ गया। व्यभिचारियो और दुराचारियो ने सभी स्त्रियो को भ्रष्ट किया। लोगो की हालत इतनी बुरी हो गई, जितनी उस समय तक कभी सुनी नही गई थी। खुसरो ने लोगों को खरकान-पुत्र जरदुश्त और वामदात-पुत्र मज्दक के नये धर्म से हटाया और दुराचारो को दूर किया। उस धर्म के अनुयायियो मे से जिन्होने उसकी आज्ञानुसार उसे नही छोडा, उन्हे मरवाया। उसने फिर से जरदुश्त के धर्म का पहिले जैसा प्रचार किया।

(४) वितरिक (८७६–९३९ ई०)—सईद बिन-वितरिक बगदादी खलीफा के समय का एक बहुत प्रसिद्ध लेखक था। इसने भी मज्दक और कवात् के बारे मे लिखा है। उसने एक कहावत उल्लिखित की है—

"राजा ने हेफ्तालो के बादशाह से बदला लिया और पीरोज के पराजय के समय जो धन और बन्दी हेफ्तालो के हाथ मे गए थे, उन्हे लौटा लिया। बलाश और कवात मे सिंहासन के लिए झगडा हुआ, जिसमे बलाश सफल हुआ। कवात् भागकर तुर्क-पुत्र जर्मेहर के साथ तुर्क (श्वेतहूण) राजा के यहा खुरासान मे मदद

---

[1] —मुहम्मद बिन्—जरीर तिब्री 'तारीख तिब्री'

लेने गया। रास्ते मे जाते समय अवहरशहर (नेशापोर) मे वहा के एक अमीर की कन्या पर मुग्ध हो गया। जरमहर ने माता-पिता को राजी करके कन्या कवात् को दिलवा दी। कवात् के चले जाने पर मा के पूछने पर लडकी ने कहा कि उसका पायजामा जरबफ्त का था। वह जान गई कि वह कोई राजकुमार है। कवात्-खाकान (हूण-राजा) के पास चार साल रहा, फिर उससे सैनिक लेकर लौटा। अवहरशहर पहुचने पर नवानदुख्त नामक अपनी उस प्रेमिका के पास तीन बरस का पुत्र देखा। स्त्री और बच्चे को वह ईरान ले आया। अब बलाश मर गया था, इसलिए राज्य उसे मिल गया। राजकाज को जरमहर और सोखा के ऊपर छोडकर वह स्वय नगर, नहर और पुल बनवाता रहा। दस साल राज करने के बाद एक भारी अकाल पडा। टिड्डिया खेतो को खा गई। लोगो के ऊपर भारी बला आई। उसके बाद रोमियो से कवात् की लडाई छिडी, और उसने उनके शहर अमिदा पर अधिकार करके उसे बरबाद कर दिया।

दूसरी कथा जो बितरिक ने उद्धृत की है, उसके अनुसार ईरानी लोग कवात् से नाखुश थे और चाहते थे, कि वह मर जाए, लेकिन वह सोखा से डरते थे, इसलिए उन्होने शाह को भडकाना शुरू किया। सोखा के मरने के बाद मज्दक और उसके अनुयायियो से कवात् की भेट हुई। "भगवान ने भोगो को पृथ्वी पर इसलिए पैदा किया, कि उसे समान बाट के उपभोग करें और कोई दूसरे से अधिक न लें। लेकिन आज आदमी एक-दूसरे पर अन्याय करता है और वह अपने को अपने भाई से अधिक समझता है। हम चाहते है, कि अन्याय दूर हो, इसलिए चाहते हैं कि धनियो से सम्पत्ति गरीबो के लिए छीन लें, ज्यादा धन रखने वालो से उसे लेकर निर्धनो को दे दें। किसी के पास धन, स्त्री, दास, दासी या सामान अधिक हो, तो अधिक को उससे लेकर दूसरो मे बराबर बाट दें, जिससे कोई बडा न रहे।" इसके बाद मज्दकियो ने लोगो की सम्पत्ति स्त्री और धन को छीन लिया। (लोगो ने) कवात् को ऐसे स्थान मे बन्द कर दिया, जहा उसे कोई नही देख सकता था और उसके सहोदर भाई, जामास्प को गद्दी पर बिठाया। जरमहर ने ईरान के अमीरो को मिलाकर मज्दकियो का मारा और जामास्प को हटाकर कवात् को गद्दी पर बिठाया। पीछे मज्दकी फिर कवात् के विश्वासपात्र बन गए और उन्होने उसे जरमहर को मरवाने के लिए उकसाया। उसके मारे जाने पर देश मे अशाति फैल गई। कवात् का मारा और

उसके पुत्र को मरवाने का बहुत अफसोस हुआ।

कवात् के मरने पर खुसरो नौशेरवा गद्दी पर बैठा। उसने मज्दकियो को देश से निकाल दिया और उन्होने जो कुछ छीना था, उसे असली मालिको को लौटा दिया। "जिस चीज का निश्चित स्वामी नही मिला, उसे जब्त कर लिया। इस तरह जो घर या जमीन छीनी गई थी, उसे मालिक पा गए। छीनी स्त्री को पति को लौटाने का हुक्म दिया गया, ऐसा न हो सकने पर उसे महर (स्त्री-धन) दिलवाई गई, और यदि मर्द और स्त्री दोनो एक वर्ग के हुए, तो उन्हे व्याह करने के लिए मजबूर किया गया। इसके अतिरिक्त यह भी हुक्म दिया, कि सिपाहो और अजातो मे से जिनका घर-बार बरबाद हो गया है और जो बडा दुखी जीवन बिता रहे हैं, उन्हे अनाथो और बेवाओ मे से दिया जाए और सरकारी खजाने से धन की भी सहायता की जाए। बेपिता के पुत्रो को उनके मन के अनुकूल काम मे लगाया गया। बेपिता की लडकियो का भी उस वर्ग के धनी आदमियो से व्याह करवा दिया गया। पुत्रो को उनके मन के अनुकूल काम मे लगाया गया।

(५) अस्पाहानी (मृत्यु ९६७ ई०)—अबुल्-फरज अस्पहानी अपनी पुस्तक 'किताबुल अगानी" मे लिखता है—कवात् के शासन-काल मे मज्दक नामक एक आदमी प्रकट हुआ, जिसने जिन्दीकी (मानी और मज्दक के) धर्म का प्रचार किया, और स्त्रियो के सभोग की छुट्टी दे दी। उस समय कोई आदमी दूसरे को व्यभिचार से नही रोक सकता था। कवात् ने भी उसके धर्म को स्वीकार कर लिया। उसने हिरा (अरब) के शासक मजर को मज्दकी धर्म स्वीकार करने के लिए कहा, किन्तु उसने नही माना। फिर कवात् ने अमर-पुत्र हारिश को भी मज्दकी धर्म मानने के लिए कहा, लेकिन उसने भी नही माना। कवात् ने नाराज होकर उसे शासन से वचित कर दिया।

अन्त मे नौशेरवा ने मज्दक को दार (सूली) पर चढाने की आज्ञा दी और लोगो को हुक्म दिया, कि मज्दकियो को जहा पाए, मार डालें। आधे दिन के भीतर जाजर, नहरवान और मदायन (राजधानी तस्पोन्) मे एक लाख जिन्दीक (मज्दकी) सूली पर चढा दिए गए। उसी दिन से खुसरो की उपाधि 'अनोशेरवा' अर्थात् सदा रहने वाला हुई।

(६) नदीम (९८८ ई०)—मज्दकियो के सहार के

वाद नदीम ने लिखा था—सासानी शासन-काल मे मज्दकियो को 'खुर्रमिया' (खुर्रमिया) कहा जाता था। इसी खुर्रमिया धर्म ने ८३५ ई० मे बाबक के नेतृत्व मे आजुरबायजान की भूमि मे खलीफा के विरुद्ध विद्रोह किया था।[1] (उनका मूल वही मज्दक पथ था, जो ५२७ ई० मे भीषण हत्याकाड द्वारा नष्ट कर दिया गया समझा जाता था, लेकिन पौने तीन सदियो बाद भी आजुरबायजान मे वह फिर प्रभावशाली हो गया। मज्दक पथियो का एक दूसरा नाम "मोहम्मरा" अर्थात् रक्तवसन भी था) नदीम ने लिखा है कि उसके समय खुर्रमिया दो सम्प्रदायो मे विभक्त थे। उनमे से मोहम्मरा आजुरबायजान, अर्मनी, देलम हमदान और दीनवर मे फैले हुए हैं—अस्पहान और अहवाज के इलाके मे भी उनका अस्तित्व मिलता है। ये लोग वस्तुत पहले जरथुस्ती थे, लेकिन पीछे उन्होने उस मे मिलावट कर ली। साधारणतया ये "बेबाप के बाल-बच्चे" के नाम से लोगो मे प्रसिद्ध थे। इस धर्म का सस्थापक वही पुराना मज्दक था, जिसने अपने अनुयायियो को सिखलाया था, कि सदा भोग की खोज करते रहो और खानपान म कोई कडाई न करो। समता और मित्रता को अपने आचरण मे ढालो, तथा एक आदमी को दूसरे मे बडा नही बनने दो। स्त्री और धन को साझा समझो और दूसरे की स्त्री को निषिद्ध न मानो। अतिथि सेवा के बारे मे उसने आज्ञा दी थी—अतिथि चाहे किसी जाति का हो, उससे किसी चीज का दुराव न रखो। उसकी जो इच्छा हो उसे पूरा करने का यत्न करो।

(७) अबुलकासिम फिरदौसी (मृत्यु १०२० ई०)—फिरदौसी फारसी का महान कवि तथा शाहनामा जैसे फारसी के महान काव्य का रचयिता मज्दक की मृत्यु के पाच सदियो के बाद हुआ था। उसने मज्दक और [illegible] मे लिखा है—"(हेफ्तालो मे) युद्ध के समय कवाद् पीरोज की सेना [illegible] था और पराजय के बाद दुश्मन के हाथ बदी हो गया। सोखा ने [illegible] और बादशाह बलाश ने उस पर कृपा दिखलाई। कुछ समय बाद सोखा [illegible] को उतारकर कवाद् के सिर पर मुकुट रखा। जब कवाद् २१ साल का हो गया, तो सोखा ने अपने इलाके [illegible] के काम को जाने सम्भालने की आज्ञा [illegible] ने बादशाह का कान भरा। शाह ने सोखा को [illegible] मे [illegible]

1—'तारीखुल् मजमूआ"

प्रतिद्वन्द्वी शापूर को भेजा। सोख़ा को शीराज़ से लाके सिंहासन के पास क़त्ल किया गया। ईरानी कवात् से बहुत नाराज़ हो गए। उन्होने चुगली लगाने वाले को मारने के बाद कवात् को तख़्त से उतार दिया, और जामास्प को बादशाह बनाया। पिता के घातक कवात् को उन्होने सोख़ा के हाथ मे सौंप दिया, लेकिन उसने उसे छोड़ दिया, तथा दोनो भागकर हेफ़्तालो की भूमि मे चले गए। रास्ते मे कवात् ने एक ग्रामपति की लड़की व्याह के उसके साथ एक सप्ताह वास किया और उसे लौटते समय के अभिज्ञान के लिए अपनी अंगूठी दे दी। लौटते समय कवात् ने अपनी स्त्री को पुत्रवती देखा। उसने बच्चे का नाम खुसरो (कसरा) रखा। फिर वह अपनी स्त्री और बच्चे के साथ तस्पोन् लौटा। जामास्प और अमीरो ने उनका स्वागत करके उसे दुबारा गद्दी पर बैठाया। कवात् ने उनके अपराधो को क्षमा कर दिया। फिर पूर्वी रोम को लड़ाई मे पराजित किया। इसी समय चतुर, मिष्ठभाषी और मनस्वी मज़्दक नामक आदमी ने अपनी बातो से उसे भरमा दिया। उसका प्रभाव बादशाह पर बढ़ता गया। इसके बाद एक समय भयंकर अकाल आया। मज़्दक ने जहरमोहरा वाले व्यक्ति और साँप काटे आदमी के बारे मे सवाल किया, फिर बन्दीखाने मे बन्द रखकर मारने वाले के अपराधो के बारे मे पूछा। फिर उसने बखार लूटने का हुक्म दिया। मज़्दक ने अपने धर्म को साफ़ समानता के आधार पर स्थापित किया, और सभी आदमियो को परस्पर बराबर बतलाते एक से धन लेकर दूसरे को दिया। कवात् ने उस धर्म को स्वीकार किया और समझा कि इसी मे लोगो की भलाई होगी। पीछे उसका विचार बदल गया और उसने शास्त्रार्थ करने के लिए सभा बुलाई। निश्चित दिन को खुसरो भी मोबिदो के साथ प्रासाद मे पहुंचा। उनमे से एक ने प्रश्न किया—यदि स्त्रियां साझे की हो जाए, तो बाप और बेटे की पहचान कैसे होगी? यदि सभी की आमदनी बराबर हो, तो सेवक और सेव्य कैसे रहेंगे? और फिर किस तरह दुनिया का काम चलेगा। फिर सम्पत्ति और धन का उत्तराधिकारी कैसे कोई हो सकेगा? इन सवालो से उसने यह दिखलाया, कि मज़्दक का धर्म अहिमान (शैतान) का काम है, इससे दुनिया की बरबादी होगी। कवात्, खुसरो और सभा के दूसरे लोगो ने मोबिदो के पक्ष का समर्थन किया। कवात् ने दण्ड देने का भार खुसरो के हाथ मे दे दिया था, जिसके हुक्म से प्रासाद के हाते मे गड्ढे खोद के मज़्दकियो को वृक्ष के रूप मे ऐसे गाड़ा गया, कि उनके

सिर कमर तक धरती के भीतर दबे और पाव बाहर थे। फिर स्यार मज्दक को उद्यान मे ले गए। इस नये बाग के इन नये वृक्षो को दिखलाया। मज्दक डरकर बेहोश हो गया। खुसरो के हुक्म से उसे शूली पर चढाकर तीर-वर्षा की गई।

(८) इब्नुल असीर (१०३४ ई०)—इसने लिखा है इस पैगम्बर ने जरदुश्त के धर्म मे कुछ परिवर्तन किया था, किन्तु कुछ लोगो का कहना है, कि मज्दक ने भगवत्-मित्र इब्राहिम के पथ को पैगम्बर जरदुश्त की भविष्यद्वाणी के अनुसार प्रचार किया। लिखा है—"मज्दक ने प्राणिहिंसा वर्जित कर दी और भूमि मे उत्पन्न पदार्थों या अडा, दूध, घी, और पनीर जैसे प्राणियो से मिलनेवाले भोजन को आदमी के लिए पर्याप्त बतलाया।"

(९) सम्रालबी (मृत्यु १०३८ ई०)—उसने लिखा है—बलाश से युद्ध करते वक्त कवात् हार गया और वह तूरान (मध्य-एशिया) की ओर भाग गया। वहा खाकान (श्वेतहूण-राजा) ने उसका स्वागत किया। चार सात ता रहकर कवात् तीस हजार सेना के साथ ईरान आया। नेशापोर मे बलाश के मरने की खबर पाकर उसने सेना को लौटा दिया। पीछे रोम के साथ लडाइया हुई। यह बादशाह निसा-निवासी बामदात-पुत्र मज्दक के प्रगट होने के पहिले तक धर्म के अनुसार प्रजा का शासन करता था। लेकिन मज्दक आदमी की शक्ल मे देव (शैतान) था, जो रूप मे सुन्दर और हृदय मे काला—वाणी उसकी हृदयग्राही थी, किन्तु कर्म अनुचित था। कवात् उसकी मोहक बातो मे पड के गुमराह हो गया। एक भारी भूकम्प मे बहुत से आदमी भूखे मर गए। उस समय उसने शाह से पूछा—अगर किसी के पास जहरमोहरा हो, और वह साप काटे को देने से इन्कार करे, तो उसे क्या दण्ड होगा?—"मृत्यु"। अगले दिन मज्दक भुक्खडो, भिखमगो को राजमहल मे यह कहकर ले गया, कि जिस चीज की आवश्यकता हो उसे जमा करके ले जाओ। फिर उसने कवात् से पूछा—'उस आदमी को क्या दण्ड मिलना चाहिए, जिसने निरपराध आदमी को बद करके भूखो मार दिया।" कवात् ने जवाब दिया—"मृत्यु।" मज्दक ने लोगो को हुक्म दिया, कि अम्बारो को लूट लो। उन्होने ऐसा ही किया। मज्दक उपदेश देता था—"भगवान ने जीविका इसलिए पैदा की, कि सब लोग उस पर समान लाभ उठाए। अन्याय और जुल्म के कारण यह भेदभाव पैदा हुआ है। किसी का स्वा

या सम्पत्ति पर दूसरे से अधिक का अधिकार नही है।" उसने लोगो को धर्म से हीन कर दिया। उसने स्त्रियो को भगाने और दूसरे दुराचारो का प्रचार किया। बहुत दिन नही बीता, कि किसी की कोई सम्पत्ति या स्त्री नही रह गई, यहा तक कि लोग अपने पुत्र को भी नही पहिचान पाते। इसके बाद सआलबी ने शास्त्रार्थ और मज्दक तथा मज्दकियो के कत्लेआम की बात लिख के कहा—खुसरो ने एक दिन मे अस्सी हजार मज्दकियो को मरवाया और उसी दिन से उसकी उपाधि नोशेरवा पडी।

(१०) बेरुनी (९७३–१०४८ ई०) अबूरेहा मुहम्मद[1] बिन-अहमद बेरुनी ३ जिल्हजा ३६२ हिजरी (५ सितम्बर ९७३ ई०) मे पैदा हुआ और २ रजब ४४० (११ दिसम्बर १०४८ ई०) मे सतहत्तर वर्ष की आयु मे मरा। वह ज्योतिष और गणित का महान विद्वान तथा महान पर्यटक था। पहले वह अपनी जन्मभूमि खारेज्म मे रहा, फिर जब सुल्तान महमूद गजनवी का खारेज्म पर अधिकार हो गया, तो ४०८ हिजरी (१०१७ ई०) मे महमूद उसे अपने साथ गजनी ले गया। उसके कितने ही युद्धो मे बेरुनी भी साथ रहा। उसने भारतवर्ष और यहा के लोगो के बारे मे अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "अल्-हिन्द" लिखी। बेरुनी लिखता है[2] "मज्दक बामदात निसा-निवासी तथा कवात् के समय मगोपतान-मगोपत था। वह द्वैतवादी था। उसका धर्म जरदुश्त के धर्म से कुछ भेद रखता था। उसने स्त्री और सम्पत्ति को साझा करने का रवाज चलाया। उसके अगणित अनुयायी हो गए।

उपसंहार

जर्मन विद्वान नोल्दके और डेनमार्क के क्रिस्टियान्सन ने मज्दक के सम्बन्ध मे बहुत-सी खोजें की है, जो अधिकाश जर्मन और फ्रेंच भाषाओ मे छपी है। इन्होने स्वीकार किया है, कि पक्षपाती पुराने लेखको ने मज्दक के साथ अन्याय किया है। डाक्टर क्रिस्टियान्सन लिखते है[1] "यह समझना आसान है, कि शत्रुओ

१—मुहम्मद बिन-इस्हाक फ़्रिस्तुल-नदीम्
२—'आसारुल्-बाकिया'। बेरुनी की दूसरी पुस्तकें है—"अल्हिन्द," 'तफ्हीन', 'कानून-मसऊदी"

ने मज्दक के धर्म को केवल व्यभिचार और भोगपरायणता का प्रचारक चित्रित किया है। मज्दक ने संयम की शिक्षा दी थी। वह एक आचारशास्त्री तथा मानवता प्रेमी पुरुष था, उसने सामाजिक सुधार के लिए कमर बाँधी थी। मज्दक ने केवल हत्या और खून बहाने को ही निषिद्ध नहीं किया था, बल्कि वह हर तरह के दया करने को कर्त्तव्य मानता था, और उसने अतिथि सेवा में तो किसी चीज को अदेय नहीं कहा और न अतिथियों मे देश-जाति के भेद रखने को उचित बतलाया। दुश्मनों तक के साथ भी उसने दया और सहिष्णुता दिखाने के लिए कहा।"[२]

१—Christenson A Kawadh Le regne duroi Kawadhet Le Comm Mazdakite-Medeloster 1925

२—पह्नवी भाषा में "मज्दक-नामक" एक पुस्तक लिखी गई थी, जिसे इब्नुल्-मुकफ्फा (७५८ ई०) ने अरबी में अनुवाद किया था, और आबान लाह्की ने उसे पद्य बद्ध किया था।

मुद्रक हरि मुद्रण प्रतिष्ठान, द्वारा भारत मुद्रणालय, नवीन शाहदरा दिल्ली—३२